॥ ॐ॥

सतनाम साक्षी

जीवन दर्शन

(प्रथम भाग)

सतगुरू स्वामी माधवदास जी महाराज

लेखक

श्रीमती लक्ष्मी केसवानी

श्री जमनादास केसवानी

प्रकाशक

प्रेम प्रकाश आश्रम ट्रस्ट,

प्रेम प्रकाश आश्रम,आदर्श नगर,

अजमेर,पुष्करराज व हरिद्वार

॥ ॐ॥

सतनाम साक्षी

'भूमिका'

सिन्ध देश का प्राचीन सभ्यता सर्वविदित है। 'मोहन जो दड़ों उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। पवित्र सिन्धु नदी ने नाम दिया सिन्ध प्रदेश को और उसने नाम दिया हिन्द देश को जो आज भारतवर्ष कहलाता है। कहा जाता है पवित्र वेदों की सर्वप्रथम रचना भी पवित्र सिन्धु नदी के तट पर ही हुई थी। ऐसी पवित्र पावन भूमि ने जन्म दिया हजारों ऋषियों-मुनियों साधु-संतों को जिन्होंने कठिन तपस्या कर न केवल स्वयं का उद्धार किया किन्तु करोड़ों जिज्ञासुओं को अज्ञान के अन्धकार से निकाल कर ज्ञान की रोशनी का मार्ग दिखाया। ऐसे ही सिद्ध पुरूषों में से एक थे परम पूज्य संत शिरोमणी 108 सत्गुरू स्वामी माधव दास जी महाराज प्रेम प्रकाशी।

स्वामी जी नि:सन्देह उच्च कोटि के संत थे। वे महान विद्वान ब्रह्मज्ञानी एवं कर्मयोगी थे। यह सत्य कथन है कि 'संत की महिमा वेद न जानहिं' । सन्त और ईश्वर में किंचित कोई अन्तर है क्योंकि संत परमात्मा के साकार स्वरूप है, क्योंकि मनुष्य मात्र के हित के लिए जन्म लेते है ओर अपनी इच्छानुसार परम-ज्योत में समा जाते है।

सन्त गोविन्द भेद न भाई।

सन्त राम है एको भाई।

कैसी अनोखी वार्ता है उनके बाल्यावस्था की! वे जन्म से ही सिद्ध पुरूष थे। नि:संदेह वह माताश्री भाग्यशालिनी हैं जिन्होंने ऐसी महान विभूति को जन्म दिया। जिनका स्वयं का नाम ही था 'देवी' उनहोंने वैशाख तिथि 19 संवत 1971 प्रात:काल 4 बजे की शुभ घड़ी में एक तेजस्वी देवस्वरूप बालक को जन्म देकर जिज्ञासु जीवन का कल्याण किया। पिताश्री का नाम था श्री मूलचन्द खत्री और वह शुभ भूमि थी ग्राम 'बन्ध' तहसील 'हाला' जिला हैदराबाद सिन्ध जहां पर उनके पवित्र चरण पड़े। कुण्डली देख कर कुल ब्राह्मण ने उनका नाम माधव रखा और वे थे भी भगवान माधव के स्वरूप।

न केवल उनकी माताश्री वास्तव में देवी थी, किन्तु उनके पिता श्री सेऊमल जी भी प्रभु के सच्चे भक्त थे । वे नित नियम से प्रभात की अमृत बेला में उठ कर हरि-कीर्तन करते थे। ऐसे मधुर सत्संग के वातावरण में पलकर बालक माधव का स्वभाव बचपन से ही मिश्री के समान मधुर तथा कमल की भांति निर्मल हो गया।

उनके बाल लीला की अनेक वार्ताऐं है। पाँच वर्ष की आयु में पिताजी ने उनको पाठशाला में प्रवेश दिलाया। वहाँ वे एकचित होकर पूर्ण ध्यान से अध्ययन करते थे, किन्तु व्यवहार में अन्य बालकों से बिल्कुल निराले थे। उनमें किसी प्रकार की चंचलता नहीं थी। अन्य बालकों को किसी एकान्त स्थान पर बैठाकर सत्संग की बातें बताते थे। उनका मन सदैव वैराग्य से भरा रहता था। उनके जन्म के पश्चात उनकी माताश्री ने जो बालक जन्में वे सब चल बसे। इस घटना ने उनके कोमल ह्रदय पर गहरा प्रभाव डाला। समय समय पर अपनी माताजी से पूछते कि अमां! जो बालक जन्म लेते है वे सब कहाँ चले जाते हैं? माताजी डबडबाते नयनों से उत्तर देती थी कि जिस परमात्मा ने दिये थे उन्होंने ही वापस ले लिये। इसी कारण उनका मोह घर से उठता चला गया और वे अब अधिकतर गाँव के बाहर श्री राचुरामजी के मन्दिर में समय व्यतीत करने लगे। वहाँ पर कोई न कोई साधु-संत ही रहते थे। तथा सत्संग भी नित नियम से होता था। संतों की संगति में उनसे शिक्षा लेकर वे साधना व योगाभ्यास करने लगे।

दस वर्ष की आयु में उनको एक बहन हुई। जब वह कन्या तीन वर्ष की थी तो माताजी पुन: गर्भवती हुई और इस प्रसव में माता देवी का देहान्त हो गया और नवजात बालक भी चल बसा। इस बिछोह से इनके हृदय को बहुत बड़ा आघात पहुँचा ओर इनका मन घर से विरक्त हो गया।

ऐसे समय में संयोग से सत्गुरू स्वामी टेऊंराम जी महाराज रटन करते हुए बन्ध ग्राम में पधारे। वे प्रेम प्रकाश मण्डल के महामण्डलेश्वर थे। टण्डे आदम नगर की दक्षिण दिशा में बालू के टीले पर अपने हाथों से परिश्रम कर सुन्दर स्थान का निर्माण किया था। जिसे अमरापुर दरबार कहते थे।

अपने साथ मण्डली लेकर गांव-गांव में जाकर भजन-कीर्तन द्वारा प्रेम का प्रचार करना उनके जीवन का मूल सिद्धान्त था। जब बन्ध ग्राम में उनके पर्दापण का समाचार फैला तब भाई सेऊमल भी बालक माधव को लेकर दर्शन के लिए आ गये। दर्शन करने के पश्चात् बालक माधव के मन में इतना आकर्षण उत्पन्न हुआ कि वे वहां से हिल ही नहीं रहे थे। सत्गुरू महाराज ने भी उनके मुख की कान्ति देखकर उन पर वह कृपा दृष्टि की कि उन्होंने मन ही मन में अपने आप को सदा के लिए अर्पण कर दिया।

स्वामी जी का मन अब उदास रहने लगा। मन में तड़फ थी अपने प्रियतम से मिलने की। पांचवीं कक्षा उतीर्ण कर पाठशाला में जाना तो पहले ही बन्द कर चुके थे। अब भाई राचूराम के मन्दिर में गायन विद्या सीखना आरम्भ किया। वहाँ पर जो विद्वान महात्मा आया करते थे उनसे यज्ञ की विधि भी सीखी। मन्दिर के बगीचे में गहरा गड्ढा खोदकर उसके अन्दर जाके एकान्त में समाधि लगाकर बैठ जाते थे। बड़े-बड़े व्रत रखने लगे। सांसारिक बातों से बिल्कुल मुँह मोड़ लिया। इन सब बातों को देखकर उनके पिता जी को चिन्ता हो गई। उनको पैतृक व्यवसाय में लगाकर गृहस्थ जीवन के लिए आकर्षित करने का भरसक प्रयास किया, परन्तु स्वामी जी पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उनकी लगन तो

उस परमात्मा से लग चुकी थी। घर के वातावरण से दूर रहने के लिए वे रटन करने लगे। श्वेत वस्त्र धारण कर वे एक एक माह के लिए "लक्की" तीर्थ स्थल की ओर यात्रा के लिए निकल जाते थे। घर लौटने पर परिवार जन उन्हें सामान्य जीवन व्यतीत करने के लिए विवश करते थे। तंग आकर गाँव से बाहर एक वृक्ष पर चढ़ कर तपस्या करने लगे। घर परिवार के सदस्य एवं अन्य गाँव वाले इस प्रकार की कठिन तपस्या देख नही पाये। सब मिल कर उन्हें घर चलने के लिए विवश करने लगे। कुछ समय के लिए वे अपनी इस अजीब लीला में मगन रहे और किसी की नहीं सुनी। सारा दिन वृक्ष पर तपस्या करने के पश्चात रात्रि के शान्त वातावरण में नीचे उतर कर भाई राचूराम जी के मन्दिर में जाकर विश्राम करते थे, किन्तु प्रभात की अमृत बेला में उठकर स्नानध्यान करने के पश्चात भाई राचूराम से गायन विद्या का पाठ पढ़ कर पुन: पेड़ पर चढ़ कर अपनी साधना में लीन हो जाते थे।

ऐसी कठिन तपस्या का अधिक समय तक चलना सम्भव नहीं था क्योंकि घर परिवार के लोग एवं ग्रामवासी प्रतिदिन आकर उनकी तपस्या में विघ्न डालते थे यह बात उनको पसंद नहीं थी। एक दिन उनके मन में विचार आया कि क्यों नहीं चलकर सतगुरू स्वामी टेऊंराम जी की शरण ली जाये। सो पूछते पूछते टण्डो आदम अमरापुर दरबार में पहुँचे। सीधे जाकर सत्गुरू स्वामी टेऊंराम महाराज जी के चरणों में शीश रखकर उनसे अपनी शरण में लेने की विनती की। सत्गुरू महाराज जी ने पहले तो घर लौट जाने की आज्ञा दी किन्तु उनका दृढ़ संकल्प देखकर उन्हें आश्रम की सेवा में लग जाने की आज्ञा दी। अभी मुश्किल से दो ही दिन बीते थे कि घर वाले भी आकर वहाँ पहुँचे और सत्गुरू महाराज से अनुनय विनय कर स्वामी जी को वापस घर ले गये, परन्तु उनका मन पहले ही घर से उठ गया था सो वे घर में कैसे रह सकते थे। सत्गुरू महाराज जी की शरण में रहकर जिस आनन्द की अनुभूति हुई थी उसे भला कैसे भुलाया जा सकता था। थोड़े ही दिनों में घर त्याग कर पुन: आकर सत्गुरू महाराज जी की शरण ली और सदा के लिए अपने चरणों में रखने की विनती की। सत्गुरू महाराज की ने भी उनका दृढ़ निश्चचय एवं वैराग्य वृति देखकर नाम रूपी अमृत

पिला कर अपना शिष्य बना दिया। स्वामी जी का तेजस्वी रूप एवं तीक्ष्ण बुद्धि देख कर सत्गुरू महाराज ने उनको ऐसे स्थानों पर भेजा जहां पर वे संस्कृत, पारसी व गायन विद्या का गहन अध्ययन कर हर तरह से विद्वान बन गये। जब वहां से अमरापुर दरबार लौटे तब उन्हें देख कर सत्गुरू महाराज अति प्रसन्न हुए। अब तो उन्हें अपनी शरण में रखने लगे। उन्हें सत्संग करने का अवसर देते थे। अपने साथ रटन पर ले जाते थे। थोड़े ही समय में स्वामी जी का प्रभाव बढ़ने लगा और सभी उन्हें आदर की निगाह से देखने लगे। वह समय आया जब परम पूज्य सत्गुरू महाराज जी को ऐसा अनुभव होने लगा कि स्वामी जी अब सत्संग का दीवान लगाने और प्रेम प्रकाश सिद्धान्त का भली-भांति प्रचार करने में समर्थ हो गये थे, सो स्वामी जी को पास में बिठा कर खूब प्रसन्नता से आज्ञा की ''माधव अब हमारी इच्छा है कि तुम हैदराबाद में जाकर आश्रम बनाओ और मण्डल का नामाचार बढ़ाओ। अचानक ऐसी आज्ञा सुनकर स्वामी जी विस्मय में पड़ गये परन्तु सत्गुरू महाराज जी ने उन्हें प्रबोध दिया, ''हम तुम्हें अपने से जुदा नहीं कर रहे है। हम सदैव तुम्हारे साथ होंगे और समय पर तुम्हारे पास आकर तुम्हें सेवा का अवसर देंगे।''

सत्गुरू महाराज जी की आज्ञा पाकर स्वामी जी हैदराबाद पधारे जहाँ प्रेमियों ने उन्हें सहयोग दिया और फुलेली रोड़ पर जमीन लेकर सुन्दर आश्रम खड़र कर लिया जहां पर प्रतिदिन नियम से अपनी मधुर वाणी द्वारा सत्संग कर प्रेमियों का मन ऐसा आकृष्ट किया कि थोड़े ही समय में आश्रम की खूब तरक्की हुई। पूज्य सत्गुरू महाराज जी भी अपने वचनानुसार अवसर निकाल कर अमरापुर से आकर प्रेमियों को सत्संग का आनन्द दिलाते थे ओर स्वामी जी भी उनकी खूब सेवा कर अपने दिल को ठण्डा करते थे।

जब सत्गुरू महाराज जी को यह आभास हुआ कि अब यह सांसारिक यात्रा समाप्त होने वाली है तब स्वामी माधवदास जी महाराज के आश्रम में आकर डेरा जमाया और अन्तिम समय में अपने परम प्रिय शिष्य से सेवा लेकर संवत् 1999 के जेष्ठ माह की तारीख 4 शनिवार को अखण्ड समाधि ले ली। सारे शहर में शोक की लहर छा गई। मण्डल के

निर्णयानुसार सत्गुरू महाराज जी का अन्तिम संस्कार टण्डो आदम के अमरापुर स्थान में किया गया। परन्तु जैसे कि सत्गुरू महाराज स्वामी माधवदास जी के आश्रम में ज्योति ज्योत समाये थे इसलिए प्रेम प्रकाश मण्डल ने यह निर्णय लिया कि वार्षिक उत्सव मनाने के अधिकारी स्वामी माधवदास जी ही रहेंगे। इस निर्णयानुसार वार्षिक उत्सव मनाने का श्रेय स्वामी माधव दास जी महाराज को मिला जो यह रीति आज तक चली आ रही है।

सत्गुरू स्वामी टेऊंराम जी के ज्योति में ज्योत समाने के शीघ्र बाद ही देश का विभाजन हुआ और सिंध से हिन्दुओं का पलायन शुरू हुआ। स्वामी माधवदास जी ने भी हैदराबाद छोड़कर भारत के कुछ नगरों का रटन करने के पश्चात अजमेर आकर आदर्शनगर में पहाड़ियों की तलहटी में भूमि लेकर एक शानदार भव्य आश्रम की स्थापना की, जिसके बीच में मन्दिर बनवाकर सत्गुरू स्वामी टेऊंराम जी की बैठक वाली संगमरमर की बड़ी मूर्ति स्थापित की। इस मूति की जितनी महिमा की जाये थोड़ी है। जैसे कि सत्गुरू महाराज स्वयं साक्षात् विराजमान है और प्रेमियों की आशाएं पूर्ण कर रहे है।

स्वामी माधवदास जी महाराज के आदर्शनगर प्रेम प्रकाश आश्रम का विस्तार इस प्रकार किया कि जंगल में मंगल हो गया। जेष्ठ माह के वार्षिक उत्सव पर जब भी प्रेमी आवे तब कोई न कोई नया काम आकर देखे। सबसे पहले राम मन्दिर बना बाद में गीता मन्दिर और अपने सत्गुरू स्वामी टेऊँराम जी महाराज की जीवन प्रदर्शनी। उसी समय पुष्कर राज जो तीर्थों का गुरू माना जाता है, वहां एक बहुत बड़ा प्लाट लेकर आलीशान मन्दिर बनवाया जिसमें सत्गुरू महाराज जी की खड़ी संगमरमर की मूर्ति स्थापित की और दोनों ओर बैठक वाली दो मूर्तियाँ भी स्थापित करवाई। हाल के चारों ओर चौबीस औतारों की सविस्तार अतिसुन्दर मूर्तिया स्थापित की गई है। उसी के सामने नव ग्रहों के कक्ष व गीता प्रदर्शनी भी बनवाई तथा एक ओर राम मन्दिर और दूसरी ओर यात्रियों के विश्राम हेतु गेस्ट हाऊस भी बनवाये। शुरू-शुरू में यह प्लाट रेत के एक टीले के समान था। और हूबहू टण्डे आदम वाले टीले के समान लग रहा था जिस पर घोर परिश्रम कर सत्गुरू स्वामी टेऊँराम जी महाराज ने

अमरापुर स्थान बनाया था। उस प्रकार स्वामी माधवदास जी महाराज जी ने भी अथक परिश्रम से रात दिन एक कर रेत के टीबे पर संगमरमर की फर्श लगवाकर उसका रूप ऐसा सुन्दर बनवा दिया कि देखने वाले आश्चर्य चकित हो जाते है।

एक तरफ तो यह कार्य कर स्वामी जी अपने परम् पूज्य सत्गुरू महाराज का सुयश फैला रहे थे दूसरी ओर आश्रम पर आने वालों का यथा योग्य आदर सत्कार कर सुबह शाम नियम से सत्संग कर प्रेमियों को खूब आनन्दित भी करते थे। हर शनिवार को शाम वाले सत्संग में तो बिल्कुल मेला ही लग जाता था। ढोढा चटनी खूब चलता था। भण्डारा तो वैसे भी चलता रहता था। उनका यह आदेश था कि बिना प्रसाद पाये कोई भी वापस नही जायें।

पूज्य स्वामी जी अपने सत्संग में मधुर वाणी द्वारा जो शिक्षा गृहस्थियों को आदर्श जीवन यापन के लिए और आध्यात्मिक उन्नति के लिए देते थे उसका यह उल्लेख करना परम आवश्यक है।

1. यह संसार सागर के समान खारा है। उसे बिलोकर उसमें से अमृत निकालना है।

2. जीवन का आनन्द उसमें है कि हम किसी से तनाव नही रखें।

3. दो लोटे दूध के हमारे हाथों में है, एक जा कर धूल में गिरता है और दूसरा किसी भी जीव को मिलता है। वह दूध सफल है जो किसी जीव को मिलता है।

4. अन्तकाल में परिवार जन गेंहू के थाल पर हाथ लगवाकर दान करवाते हैं। उस समय जीव को पूरी सुधि ही नही रहती, क्यों नही अपने जीते जो दान किया जाये।

5. जिस विधि राखै तिस विधि रहिये। ऐसे भी मालिक वाह-वाह वैसे भी मालिक वाह वाह। सदैव शुक्र (संतोष) करना चाहिये। जहां दो पांव वाला बेशुक्र (असंतुष्ट) रहता है वहा एक लंगड़ा जिसके दोनो पांव कटे हुए है वह यह कह कर संतोष करता है कि हे भगवान! तेरी बड़ी कृपा है जो मुझे जूते पहनने से तुमने बचाया है। उससे कितना न सन्तोष लिया जाये।

6. कभी तो कितना भी प्रयास करने पर सफलता नही मिलती और कभी तो थोड़े प्रयास करने पर सफलता मिल जाती है। यह चाबी ईश्वर ने अपने हाथ में रखी है।

7. कभी भी किसी संत या दरवेश कि क्रिया की ओर नही देखो।

8. कर्मी आवे कपड़ा, नन्दरी मोख द्वार। कर्मों के अनुसार इन्सानी जामा मिलता है। सेवा से जीवन सफल होता है। ईश्वर तो थोड़े में ही राजी हो जाता है।

तीर्थ तप दया व दान, जो पावे तिन का मान।

9. जो सुख पहले जहर के समान लगता है किन्तु बाद में अमृत लगता है वही सच्चा सुख है।

10. भाग्य से सत्संग प्राप्त होता है। सत्संग से सुबुद्धि प्राप्त होती है। सुबुद्धि से शान्ति मिलती है। शान्ति से आनन्द आता है।

11. सत्गुरू स्वामी टेऊंराम जी कहते थे चेलों के बेले मत गिनो, आगंतुक की खूब सेवा करो समझो कि सत्गुरू स्वामी टेऊँराम स्वयं आपके पास आये हैं।

12. एक बार कुछ चेलों ने स्वामी जी का मुक्त हाथ देखकर उनसे कहा कि स्वामी जी ऐसे तो काम नही चलेगा, तो सत्गुरू महाराज फरमाने लगे कि ''आश्रम के कुएं से दो दिन पानी निकालना बंद कर लो'' तीसरे दिन उन शिष्यों को कहा कि अब देखकर आओ कि कुएं में कितना पानी बढ़ा है। क्या देखते है कि पानी पहले की सतह से भी नीचे उतर गया है।

13. बहते दरयाह से जो किया जाये वह थोड़ा है। अब देखो, जिन्होंने एक हजार के नोट छिपा कर रखे थे वे ही उन्हें जला रहे हैं। पहले से यदि दान पुण्य कर लेते तो कितना अच्छा होता।

14. दान अनेक प्रकार का होता है। सोना, चाँदी, हाथी घोड़े चाहे जितने कोई दान करे पर सनमान के दान का मूल्य सबसे अधिक है। जो आये आदर पा कर जावे, ऐसा कोई दूसरा दान नहीं है।

15. गुरू की सेवा में सभी पदार्थ प्राप्त होते हैं गुरू अपने सेवाधारी को खाट पर बिठाते हैं। किसी ने पूछा ''श्रीमान् जी कैसे'' उत्तर दिया ''सेवाधारी जब गुरू के पांव दबाता है तब वह गुरू के साथ खाट पर बैठता है। सो यदि पांव दबाने से शेवाधारी गुरू के साथ खाट पर बैठता है तो दूसरी सेवा करने से उसे क्या नहीं मिलेगा?''

16. गुरू की मूर्ति के आगे नियम से आरती पूजा करनी चाहिए। पूजा का अर्थ ही है शुद्ध भावना व श्रद्धा ।

17. काश! मैं पनहारिन बन कर पानी भरू! मन में सदैव सेवा की भावना रखो।

18. संसार में रहते हुए वैराग्य वृत्ति धारण करो। गृह त्याग नहीं करना है, परन्तु घर बसाना है।

19. त्याग एवं वैराग्य के बिना भोग से आनन्द नही प्राप्त होगा। त्याग भोग से अधिक महत्वपूर्ण है। कितने भी पकवान आगे क्यो न हो परन्तु जब तक त्याग नही होगा तब आनन्द नही आयेगा। खाना खाना बंद कर सकते हो किन्तु त्याग से छुटकारा नही पा सकते। पेड़ में फूल होता है तभी फल बनता है। त्याग करने से फल के अधिकारी बन सकते हैं।

20. दान के लिए पांच बातों की आवश्यकता है (1) देश (2) काल (3) वस्तु (4) पात्र (प्राप्त करने वाला) (5) कर्त्ता (देने वाला) जब ये पाँचों योग्य होते है तभी दान देना सफल होता है।

जहाँ पर ऐसे अनमाल वचनों की वर्षा प्रतिदिन होती रहे ऐसा स्थान कैसे नही फलेगा फूलेगा। शरीर तो नाशवन्त है। ''जो आइया सो चलसी!'' पूज्य स्वामी जी ने भी देखा कि अब

वह समय आया है आत्मा का परमात्मा के साथ लीन होने का। सो संवत् 2041 के जेष्ठ में अपने परम् सत्गुरू महाराज का वार्षिक उत्सव बड़े धूम धाम से मनाने के पश्चात दिनांक 11 जून, 1984 को सायं 4 बजे समाधि ले ली।

प्रेम प्रकाश आश्रम आर्दश नगर का ट्रस्ट पूज्य स्वामी जी के ब्रह्मलीन होने से पूर्व स्थापित किया गया था आज भी नियम से सत्संग, आने जाने वालों को आदर, साधु सन्त का सत्कार व भण्डारा उसी प्रकार से चल रहा है जैसे स्वामी जी स्वयं चेतन रूप में विराजमान होकर यह सारा कार्य चला रहे हैं। हम ट्रस्टी तो निमित्त मात्र है। और सदैव ही प्रार्थना करते है कि हमें सदा सुमति प्रदान करते रहे ताकि उनकी बताई हुई राह पर चलकर आश्रम की शान बढ़ावें और तन मन से सेवा कर सत्गुरू का यश और कीर्ति बढ़ाएं, यही विनीत अरदास उनके चरण कमलों में है। यह पुस्तक इससे पूर्व 1991 में प्रकाशित सत्गुरू स्वामी माधवदास महाराज के ''जीवन दर्शन'' नाम सिन्धी संस्करण कर हिन्दी में अनुवाद है क्योंकि कुछ हिन्दी भाषी प्रेमियों जो सत्गुरू स्वामी के शिष्य है के आग्रह पर किया है।

इसके लिए श्री जमनालाल केसवानी, श्रीमती लक्ष्मी केसवानी अवश्य ही यश के भागी है जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर बड़े परिश्रम व पुरूषार्थ से इस अनमोल पुस्तक का अनुवाद तेयार किया है। इसी तरह श्री प्रहलाद करमवाणी जिन्होंने निहायत ही सुन्दर चित्र बनाकर पुस्तक को आकर्षक बनाया है, श्री टिलवाणी कौशल प्रेस वालों के शुक्रगुजार है जिन्होंने हर प्रकार का सहयोग देकर यह पुस्तक छपा कर तैयार की है। श्री मुरलीधर करनानी, श्री वाशी दीपा, श्री ठाकुरदास पंजाबी व शंकर सामतानी यश के पात्र है जिन्होंने इस पुस्तक को छपवाने में खूब उद्यम किया है उन्हीं के लगन से पुस्तक का यह प्रथम भाग आपके हाथों में पहुँच सका है। पूज्य स्वामी जी की कृपा से शीघ्र ही इस पुस्तक का दूसरा भाग भी आप प्रेमियों के हाथों में आ सकेगा।

हम सब परम पूज्य मण्डाचार्य सत्गुरू स्वामी शांति प्रकाश जी के अति आभारी है जिन्होंने बड़ी कृपा कर हम सब पर महर की नजर व अपना आशीर्वाद का हाथ हम पर रखा है। आपकी महर मया से ही सत्गुरू महाराज जी के चरणों में की गई यह विनीत सेवा पूर्ण हो सकी है।

स्वामी गणेशानंद जी महाराज ग्वालियर के भी कृतज्ञ है जिन्होंने बड़ी कृपा कर प्रेम प्रकाश आश्रम में पधारकर अपना आशीर्वाद प्रदान करने की कृपा दृष्टि की व परम पूज्य सत्गुरू स्वामी माधवदास जी महाराज जी के जीवन सम्बन्धी वृतांत बताने की कृपा की।

आशा है कि प्रेमी सत्गुरू महाराज जी के ऐसे अलौकिक जीवन दर्शन को पढ़ कर आनन्द लेंगे व उचित लाभ प्राप्त करेंगे।

सेवा में

देवनदास हरीरामानी (ट्रस्टी)

प्रेम प्रकाश आश्रम,

आदर्श नगर,

अजमेर

तीर्थराज पुष्कर व हरिद्वार

ॐ

श्री सत्नाम साक्षी

ॐ श्री गणेशाय नम:

ॐ श्री गुरू परमात्मा ने नम:

ॐ श्री सरस्वती माता ने नम:

ॐ श्री सर्वअन्तर्यामी भगवान ने नम:

प्रार्थना

ऐ प्रभु परमेश्वर दयाल पाल तू

असीं नियाज़ सां तो अगियां था नमूँ

रखी वठु असां खे तूं भुलुनि खां

सूंहूँ थीउ असांजो संईअ वाट दाहुं

करि महिर असांते ऐ साईं सचा

घुरूं रहमृ तोखां तूं मञु इल्तिजा

भगिती ज्ञान बुधी दे तूं साईं सदा

सेवा सन्दी राह में रहनि पेर पुखिता

मंगला चरण

सतगुर शिव स्वरूप को, वन्दऊं वारों वार

जास कृपा भई ज्ञान की, प्रघटे ज्योति अपार

करऊं वन्द गणेश को, वक्र तुन्ड है जोइ

तास चरण के वन्द से, विघ्न न लागे कोइ

शारदा मात विद्या परद, रूप गुणन की खान

वन्दऊ तास चरन को करऊँ रैन दिन गान।

यदि मिलना है मालिक से तो पहले मिल उनके भगतों से,

जिन्हें ज्ञान है उसे अनन्त अगम देश का, जहाँ नहीं है सूर्य, नहीं

चान्द, नहीं तारे, न नक्षत्र, न हर्ष, न शोक, न हानि, न लाभ।

राह बड़ी कठिन और रास्ता भी दुर्गम।

मंजिल कठिन जाना है दूर राह में है घोर अंधकार

हाथ में सतनाम का दीपक रोशन हो तेरी राह।

इसी राह को दिखाने के लिये वे सच्चे संत दरवेश परमात्मा के प्यारे आते है मानुष देह में मार्गदर्शक बन कर हमारे पास। खोज करवाने उस अमर आत्मा की कि हम कौन है, कहाँ से आये है कहां जाना है और यहाँ क्या करना है। इन्सान की हालत उस मृग के समान बन जाती है जो मरूस्थल को पानी समझकर दौड़ रहा है परन्तु वह पानी पी कर प्यासा नही बुझा सकता है।

निस दिन माया कारणे, प्राणी डोलत नित

कोटन में नानक कोऊ, नारायण जह चित

इन्सान भी इसी प्रकार माया के पीछे दौड़ता भागता हुआ जीवन के सही उद्देश्य को भुलता देता है। आखिर उसकी वृद्ध अवस्था आकर उसके ऊपर पड़ती है जिस में शरीर निर्बल हो जाता है, आखों की ज्योति कमजोर हो जाती है शरीर में शक्ति न रहने के कारण रोगों की लढ़ी लग जाती है। उनमें व्याकुल रहते हुए भी संबन्धियों के मोह में फंसकर अनेक प्रकार के दुःख सहता रहता है।

मूर्ख थो मारे-पहिंजे हथां पाण खे

लगी माया मोह जे कूड़ी लवं लाड़े

दिसे न सार सरूप खे, सामी संभारे

गपिण मंझि गारे-हीरा-लाल अण मया।

परन्तु यदि पूर्व जन्म के संसकार हो शोभनीक भाग्य और देवे सहारा तो मिल जाये किसी का संग जिनके साथ में अपने उद्देश्य को पहचान जपले भगवान को और बना अपनी राह रोशन।

सतसंग का सुधरिया भला, जैसे कागज़ टाट का

रजब गुर प्रसाद ते, मिट गया अंग ललाट का।

भाग्यशाली बन गये वे जिनको मिल गया सहारा सतगुरू सवामी माधवदास जी महाराज का।

कहिड़ी करियां वदाई, संत हुआ लासानी

आया जे शरण में, तिन खे राहत मिली रूहानी।

उस सुन्दर सूरत मोहनी मूरत व चमकते हुए चेहरे में कितना प्रकाश भरा हुआ था। उनके नेत्रों में था नूरानी नेह का नशा जिनके साकार शरीर में निराकार का जलवा खूब चमक रहा था, ज्ञानरूपी प्रकाश की झलक ऐसे प्रतीत होती थी जैसे किसी अलौकिक शक्ति के दर्शन हो रहे हों। उनके तेजस्वी ललाट को देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि परमात्मा बराबर निराकार है किन्तु उनके साकार किरणें रोशन रेखाएं चमकती रहती है। उनकी मधुर मुसकान देखकर ऐसा लगता था जैसे आत्मा के अंग अंग मुस्करा रहे हैं। उनकी आत्मा की उज्वलता, चेहरे की गंभीरता व तेज ने आकृष्टि किया था छोटे बड़े को। ऐसे ब्रह्म ज्ञानी, बह्म नेष्ठी, कामिल पुरूष मानुष देह धारण कर आये कल्याण करने करोड़ों का सिंध की पवित्र भूमि पर जहां ऋषियों मुनियों ने बैठकर वेदों की रचना की व आत्मा की खोज की थी।

इनके गुरू महाराज 1008 सतगुरू टेऊँराम जी महाराज महा मण्डलेश्वर प्रेम प्रकाश मण्डल टण्डेआदम वालों ने ज्ञान एवं वेराग्य द्वारा अज्ञानरूपी निद्रा से सोते हुए लोगों को जगाया तो उनके परम एवं पूर्ण शिष्य 108 स्वामी माधवदास जी महाराज ने करनी द्वारा निराकार को साकार रूप में सामने रखा। इनकी अटूट गुरू भक्ति ने सिद्ध कर दिया कि निराकार तथा साकार में कोई भेद नही है। निराकार ही कभी भक्तों के संकट मोचन हेतु तो कभी भक्तों की अतिप्रेम की प्यास बुझाने के लिए आकर प्रकट होते है।

जब जब हौवे धर्म की हानि

बान्दहि असुर अधर्म अभिमानी

तबतब ले प्रभु निज शरीरा

हरहिं कृपा निध सज्जन पीड़ा।

परमात्मा का निरगुन रूप पिता के समान है। वही परमात्मा परमेश्वर सगुण रूप में महतारी का रूप धारण कर प्रकट होते हैं। स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी ने तो साफ-साफ शब्दों में कहा है:-

''नरगुण हैं पिता हमारे, सगुण है महतारी,

का को निन्दऊँ का को वन्दऊँ, दोनो पलड़े भारी।' '

सगुण की तुलना महतारी से इसलिए की गई है क्योंकि बालक माता के अधिक निकट होता है और माता से दिल का हाल कह सकता है। इसी प्रकार जिज्ञासु या भक्त भी संत एवं गुरू देव से ही अपना दुख सुख एवं दिल का हाल कह सकता है। बाकी निराकार के आगे तो उसकी प्रार्थना ही पर्याप्त है। सगुण अपने सेवक का इतना स्नेह एवं श्रद्धा देख कर ज्ञान के द्वारा उसे अपने समस्वरूप बना लेते है।

सन्त बड़े परमार्थी, शीतल जांके अंग,

तपत बुझावन औरन की, और देवन अपना रंग।

ऐसी कामिल पुरूष ने जन्म लिया संवत् 1971 वैसाख माह की 19 तारीख को सिंध देश के हैदराबाद जिले में बन्ध ग्राम में पूजनीय दादा साहब गेहीमल वासवाणी एवं संतसेवी पिता मूलचन्द खत्री के घर। माता देवी बाई के गर्भ में, अमृत बेला के समय प्रात: काल 4 बजे, जिस समय अंधाकर रूखसत हो रहा था और सूर्य देवता भी झाँककर अपने रथ को तैयार कर रहे थे। भारत भूमि को प्रकाशित करने के लिए। जब तक उनका प्रकाश पृथ्वी पर

पड़े उससे पूर्व ही इस कलाधारी ने मनुष्य देह में जन्म लेकर वायुमण्डी को खूब प्रकाशित कर लिया। पिता साहब मूलचन्द के घर में खूब शुभ शकुन होने लगे और अड़ोस-पड़ोस में खुशी की लहर छा गई।

घर घर हुए शुभ शकुन, हर एक मन हुलास

एक दूजे को कही, यह खुशखबरी खास

पहली संतान ऐसी तेजस्वी समस्त पित्रों को तैराने वाली मालिक ने बख्शी है। जैसे जैसे अड़ोस-पड़ोस वालो को पता लगता गया वे सब माता देवी को बधाई देने आने लगे। चारों और खुशी की लहर छा गई और शुख होकर गीत गाने लगे:-

गीत-1

देवी देवीअ वटि लाल आयो

भेनरू देवीअ वटि लाल आयो

1 हुंयू अन्दर में जे इच्छाऊँ

पूरियूँ थियूँ से सभि सुखाऊँ

भगवान अची भाल भलायो

भेनरू देवीअ वटि लाल आयो

2. शुरू थी विया जणु शादमाना

ऐं खुशीअ जा नाच गाना

झूमण लगो माहोल सारो

देवियूँ देवीअ वटि लाल आयो।

3. चन्द्रमा दर्शन कयरा वेन्दे वेन्दे

सूर्य भी लीयड़ा पाता ईंदे ईंदे

प्रकृति पाणु हो खूब सजायो,

देवियूँ देवीअ वटि लाल आयो।

धन्य माता देवी जिसके कुल में पैदा हुआ ऐसा लाल।

धन्य वह जननी जिन हरिजन जाया

नानक दासन दास कहाया।

पण्डितों के जन्म कुण्डली बनानी आरम्भ की। ललाट की रेखाऐं देखकर आश्चर्यचकित हो गये। लगन जाँच कर कहने लगे भाई मूलचन्द भाग्यशाली हो। बालक बड़ा होकर बड़ा विद्वान व गुणी बन कर अनेकों का उद्धार करेगा। लक्ष्मी तो इनकी दासी बनकर सेवा करेगी। इसलिये नाम ही रखा माधव। माधव तो स्वयं लक्ष्मी पति है। घर कुटम्ब वाले बड़े लाड प्यार से उन्हें पालने लगे। माता के स्नेह की तो सीमा ही नहीं थी। बड़े प्यार से उन्हें पाला पोसा। उठते बैठते उन्हें चूमा और प्यार किया। और फिर काले टीके लगाने लगे ताकि किसी की बुरी नजर न लग जाये उनके लाड़ले लाल को। तोतली जबान में उनसे खूब मीठी मीठी बातें करती थी। गोदि में घुमाते घुमाते उनको सुन्दर शिक्षा वाली लोरी भी सुनाती थी।

लोरी शब्द

1. माँ पुटिया तोखे पालियाँ

माँ गीता ज्ञान सेखारे ऐ धर्म जी राह देखारे

मां त प्रेम हिन्दोरे विहारे सभि दुखिड़ा तुहिंजा वरियां

मां पुटिड़ा तोखे पालियां।

2. मां ते प्रेम जो अखरू पाढे, हिन लोक खे लाड़ो लाड़े

सभि जम जा कागज फाड़, लेखा जम जा वारियां

मां पुटिड़ा तोखे पालियां।

3. मां ते ममिता मोहु मिटाए, सचो ज्ञान गुरूअ जो रटाए

अनुभव जी ज्योति जगाए, सोहंम जी सुरिकी पियारियां

मां पुटिड़ा तोखे पालियां।

4. मां त माधव पाणु भुलाया, पहिंजे कुल जो शानु वधायां

पहिंजे पुट खे सुपुत्र बणायां, पोइ सभिनी कुलनि खे तारियां

मां पुटड़ा तोखे पालियां

(अर्थ) इस लोरी में माता देवी बालक से कहती है कि मेरी प्रिय पुत्र मैं तुम्हें गीता का ज्ञान सिखा कर धर्म की राह दिखाऊँगी। मैं तुम्हें प्रेम के झूले में झुलाकर तुम्हारे सभी दुखों का निवारण करूंगी। मैं तुम्हें प्रेम का अक्षर पढ़ाकर व इस लोक से किनारा कर और यमराज से सब कागज़ फड़वा कर सब हिसाब साफ कर दूंगी। मैं मोह ममता मिटा कर सत्गुरू का सच्चा ज्ञान रटाकर कर, अनुभव की ज्योति जगाकर तुम्हें सोहंम अमृत पिलाऊंगी। में अपने आप को भुलाकर अपने कुल का शान बढ़ाऊंगी। मैं अपने पुत्र को सुपुत्र बनाऊंगी जिससे मेरे सभी कुल तैर जायेंगे।

इतना प्यार और दुलार पाकर बालक माधव स्नेह की साक्षात् मूर्ति बनता चला गया। क्योंकि बालक के बाल्यकाल के संस्कार ही उस के जीवन की पूंजी है, जिन के आधार पर ही वह जीवन रूपी नौका को संसार रूपी सागर को पार कर बढ़ता रहता है अपनी मंजिल की ओर। बालक के पैदा होते ही प्रकृति उस में वह शक्ति उत्पन्न कर देती है और कहती है कि बच्चा जाओ और जाकर अपने चारों ओर के वातावरण से संस्कार लेकर अपनी जीवन यात्रा को सफल कर वापस लौटना। परन्तु बाद में उसको जैसा जैसा वातावरण मिलता है, वह वैसा बनकर अपने आप को समाज के सामने प्रकट करता है। परन्तु पूज्य स्वामीजी तो थे इश्वरीय शक्ति, इस लिये उनमें समस्त देवी सम्पदा के गुण प्रारम्भ से विद्‌यमान थे। मल विक्षेप के आवरणों से मुक्त उनका मन शीशे के समान उज्जवल था, इस वातावरण के संस्कार उनके मन रूपी पटल पर सीधे छपते चले गये। बचपन में ही उन्होंने देखा कि उनके पिताजी, तीन चाचाजी व अन्य घर के सदस्य प्रातःकाल उठ कर सतसंग का दीबाण कीर्तन करते है। जिसमें उसके पिताजी यकतारा, चाचा साहब गंगाराम तबला, श्री सेऊमल खरताल और श्री टीकमदास ढोलक लेकर बैठ कर भजन गाते हैं और मालिक को सराहते है भगवान को अनुनय विनय कर मनाते हैं।

भजन

हरी शल सच्चो ध्यानु दे तूं

सदा शान्त वारो सच्चो ज्ञान दे तूं ।

1. रहे ताति तुहिजी दींह राति दिल में,

   सच्चे नाम पहिजे जो नीशान दे तूं।

2. पसू प्रभु तुं हिजीत सूरत सदाईं,

   सच्चे प्रेमवारो सो परवान दे तूं ।

3. सदा श्याम तंहिजी रहे प्यास प्रभु,

असां खे त ईश्वर इहो दानु दे तूं ।

4. रहे यादि माधव हरि नामु तुहिजो,

सच्चो प्रेम पहिजो त भगवान दे तूं ।

(अर्थ) हे भगवान मुझे सच्चा ध्यान देना और दया शांति वाला ज्ञान देना। दिन रात दिल में तुम्हारा ही ध्यान रहे। हे भगवान आप अपनी सच्ची पहचान दो। हे परमात्मा ऐसा प्रेम पैदा करो ताकि सदा तुम्हारी सूरत देखता रहूँ । हे भगवान तुम अपना सच्चा प्रेम पैदा करो ताकि दिल में सदा तुम्हारी याद रहे।

इस प्रकार भगवान का भजन करने के पश्चात ही सभी सदस्य घर के काम काज में जाकर लगते थे। सायंकाल भी उनके पिता दुकान से लौटने के पश्चात संध्या वंदना करने के बाद ही भोजन करते थे। फिर रात्रि को 9 बजे से 11 बजे तक भगत राचूराम (जो वैद्य का कार्य भी करते थे) जी को बगीची में नित नियम से सतसंग होता था। वहाँ से चारों भाई भी जाकर भाग लेते थे। 11 बजे के बाद ही घर आकर विश्राम करते थे। कभी कभी कोई साधु संत यदि बाहर से आते थे तो ये चारों भाई उनको अपनी बैठक में चरण घुमाने के लिए ले आते थे, वहा सत्संग का दीबान लग जाता था।

उस समय कभी चाचा सेऊमल तो कभी उनके पिता साहब बालक माधव को अपनी गोद में लेकर बैठते थे। और सभी सन्त उनके सर पर आशीर्वाद का हाथ फेरने के बाद ही विदा होते थे। इस प्रकार बचपन में ही सत्संग रूपी मीठी धार कानों द्वारा उनके हृदय में प्रवेश करती रहती थी और उनका हृदय सदैव इस अमृत रूपी हरि रस से भरे शब्दों को सुनने के लिये उत्सुक रहता था।

यह अमृत वर्षा बालक माधव के ऊपर चारों और से बरसती रही। उनकी माता जी भी उसी राह की राही थी। घर गृहस्थ के स्वांग को सफल बनाने के साथ साथ वह आठों पहर अन्दर से प्रभु का स्मरन करती रहती थी। माता साहब के सुन्दर संस्कार भी बालक पर पड़ने लगे। जैसे ही थोड़े से बड़े हुए माता साहब यह सुन्दर शब्द सुना कर उन्हें प्यार से जगाती थी।

भजन (स्वर विहागु)

अमृत समे प्रभात जो, स्नान पाणी करि उथी,

प्रेम सा प्रभूअ सन्दो तू, ध्यान दिल में धरि उथी

1. अवल में ईश्वर अगियां, करि प्रेम सा प्रणम तूं,

हथ बुधी हरि जे अगिया, वत्रि करि नीजारी वरि उथीद्ध

2. प्रेम सां प्रभात में, करि कीर्तन करतार जो,

ताति सुहिणी लाति सां, हिरदे पंहिजे खे भरि उथी।

3. अमृत समें ईश जो, नालो जपे तूं नियम सां,

नाम जे पिणि राग सां, पापनि पहिंजनि खे हरि उथी।

4. माधव ध्याए मन सां, प्रभत वेले प्रभूअ खे,

अमर आदी आसीस जो तूं, पाए परिझी घर उथी।

(अर्थ) पूज्य मातजी इस शब्द में बालक माधव से प्यार से कहती है कि प्रभात की अमृत बेला में उठकर स्नान कर। स्नान करने के पश्चात प्रेम से प्रभु का दिल में ध्यान धरो। सबसे पहले प्रेम से ईश्वर को प्रणाम करो। हाथ जोड़कर उनसे विनती करो। प्रभात की इस अमृत बेला में परमात्मा का प्रेम से कीर्तन करो। दिल से प्यार से उस परमात्मा का स्मरण

करो। अमृत बेला में ईश्वर का नाप जपकर अपने पापों को दूर करो। अमृत बेला में प्रेम से मन में परमात्मा का स्मरण कर अपने घर को उस शुभाशीश से भर ढालो।

प्रतिदिन ऐसे सुन्दर भजन सुनकर मन में और कानों में ये शब्द गूंजते रहते थे। मन में विशेष कर इन शब्दों नें बेचैनी पैदा की।

''अवल में ईश्वर अगियां, करि प्रेम सां प्रणाम तूं ।

हथ बधी हर जे अगियां, वञ करि नीजारी उथी। ''

उनके पूज्य चाचा श्री सेऊमल जी का सांय काल भी सत्संग में जाने का नियम था बालक माधव भी उनको जाते हुए देख कर भागकर उनकी उंगली पकड़कर चलना शुरू करते थे। वहां वे बड़े ध्यान से संतों की वाणी तथा उपदेश सुनते थे। जैसे कि जगत मुसाफिर खाना है, यहाँ से आखिर सबको चलना है इसलिए इन्सान को कभी भी गन्दे कर्म या पाप कर्म नही करने चाहिये। सदैव उनसे बचते रहना चाहिये। संत जब भजन गाते थे तो वे भी अपनी तोतली जुबान में उनके साथ गाने लगते थे।

भजन (स्वर तलंग मांझ)

जाग उथी तूं जाग मुसाफिर,

मणि तूं पंहिजो भाग मुसाफिर।

1. जागी रहु होशिया, बन्दा तूं

छटि गंदा तूं कम मंदा तूं

पाए विवेक वैराग मुसाफिर

जागी उथी तूं वहाइण,

2. हिति आएं तूँ वणिजु वहाइण,

सचु कमाइण ऐं धर्म वधाइण

राह सचीअ सां राग मुसाफिर,

जागी उथु तूं जाग।

3. दिसां जेकी थे हीउनि ज़ारो

पल में सारो थीन्दों उजारो

जाग उथी तूं जाग।

4. माधव अविद्या निन्ड निभागी

तहिं मां जागी करि तूं सुजागी

संत माणि सुहाग मुसाफिर

जाग उथी तूं जाग

अर्थः- इस भजन में संत जन संसारी लोगों को संदेश देकर कहते है कि ऐ मुसाफिर! तुम गफलत की नींद से जागो और अपनी मंजिल की ओर चलकर आनन्द प्राप्त करो। तुम जागकर होशियार रहो। पाप कर्म छोड़ दो। अपने विवेक से वैराग्य लो। तुम इस संसार में सत्य का व्यापार करने आये हो और धर्म बढ़ाने आये हो इसलिए सत्य की राह से प्यार करो। तुम ये जो संसांरिक दृश्य देखते हो वह सब क्षण भंगुर है तुम इस संसार को फूलों का बगीच समझो। जैसे फूल सुबह को खिलते हैं और सांय को मुरझा जाते हैं और उनके स्थान पर नये फूल खिलते हैं, उसी तरह इस संसार में भी एक आता है दूसरा जाता रहता है। यह जो अविद्या और अज्ञान की नींद है वह दुर्भाग्यपूर्ण है। इसलिये तुम इस गफलत की नींद से जाग कर संत महात्माओं के सत्संग का आनन्द उठाओ।

इस प्रकार का वैराग्य पूर्ण संतों की वाणी इन्हें अपनी और आकृष्ट करती गयी और दिल में गहरी बैठ गयी। उस समय वैराग्य बढ़ाने वाली घटनाऐं घटने लगी। उनकी पूज्य माताजी को हर दूसरे वर्ष पुत्र सन्तान होने लगी। परन्तु कुदरत का करिश्मा देखो जो वह बालक इस क्षण भंगुर संसार में कुछ समय जीवित रहने के पश्चात परलोक पधार जाते थे। ये घटनाऐं उनके मन को अन्दर ही अन्दर विचलित करती रही। अपनी माताजी को इस प्रकार अश्रु बहाते देख कर पूछते थे कि माताजी । मेरे ये प्रिय भ्राता इस जहान में जन्म लेकर फिर कहां चले जाते है। माताजी उनको सांत्वना देकर कहती थी कि मेरे पुत्र! इनका हमारे यहाँ इतना ही अन्न जल लिखा था। इसलिए परमात्मा उनको वापस वहाँ बुला लेता है जहाँ एक दिन हम सबको चलना है। माताजी के मुखारबंद से इस प्रकार के शब्द सुनकर उनके चेहरे पर मायूसी छा जाती थी। माताजी उन्हें मायूस और मुरझाया हुआ देखकर भजन सुनाने लगती थी। परन्तु माधव के मन में वैराग्य बढ़ता ही रहा।

आयु के पाँच वर्ष पूर्ण होने पर पिताजी बालक को पाठशाला में प्रवेश दिला आए और देखभाल के लिये निवेदन कर आये। अध्यापक जी ने माधव का मासूम चेहरा देख कर उनके सर पर आशीर्वाद का हाथ फेर कर उन्हें सांत्वना दी। बालक की आँखों में श्रद्धा और भक्ति की झलक देखकर मास्टर साहब उन्हें खूब प्यार करने लगे। माता साहब प्रतिदिन प्रातःकाल उन्हें नहला धुलाकर साफ वस्त्र पहना कर जब प्यार और दुलार से पाठशाला भेजती थी तब उन्हें यह शब्द सुनाती थी।

भजन (स्वर तलेग भेरवी)

सत्नाम थीन्दो तोसा साणी

मन तूं पढ़ प्रभूअ जी बाणी

1. गफिल छदि गफिलत हटाए

मन पंहिजे जो ममत मिटाए

तूं त धारि गुरूअ जी वाणी

सत्नाम थीन्दो तोसां साणी।

2. जो ध्याए सो त धीरज पाए

मन पंहिजे जा पाप मिटाए

इहा वेदन गल्हि बरवाणी

सत्नाम थीन्दो तोसां साणी

3. राम पहिंजे खे जे यादि कन्दे तूं

अंङुणु पंहिजो बाबाद कन्दे तूं

इहो जाणु सचो तूं जाणी

सत्नाम थीन्दो तोसा साणी।

4. माधव गुण गोविन्द जा गाए।

राम पंहिजे खे रूह में रीझाए

तूं पीउ प्रेम जी पाणी

सत्नाम थीन्दो तोसां साणी।

(अर्थ):- ऐ मन! तू प्रभू की वाणी पढ़ तो परमात्मा तुम्हारे सहायक बने। ऐ गाफिल इन्सान तूं गफलत छोड़कर अपने मन से ममता मिटाकर तुम गुरू की वाणी को धारण करो तो सत्नाम तुम्हारा सहारा बने। जो परमात्मा का स्मरण करना है उसे धैर्य प्राप्त होता है और उसके मन

के समस्त पाप मिट जाते है। यह बात वेदों में लिखी हुई है। यदि तुम अपने राम का स्मरण करोगे तो तुम्हारा आंगन आबाद हो जायेगा यह बात तुम सत्य वचन करके मानो। ऐ मानव! गोबिन्द के गुन गाकर अपने राम को मन में रिझा कर तुम प्रेम का पानी पीओ तो सत्नाम तुम्हारा बने।

इन प्रेम रूपी शब्दों को दोहराते हुए और अपने राम का स्मरण करते हुए वे आकर पाठशाला पहँुचते जहाँ बड़े चाव से गुरूजी की शिक्षा को ग्रहण करते थे। अपने संगी साथियों से बड़े प्यार मौहबत से व्यवहार करते थे। अवतारी बालक थे इसलिए उनकी कुण्डलनी जगृत थी। इस कारण वे इच्छा शक्ति के मालिक थे। साधारणतः मनुष्य की कुण्डलनी सुप्त अवस्था में रहती है और शास्त्रानुसार उसका मुख नाभि के नीचे होता है। परन्तु सिद्ध पुरूषों की कुण्डलनी का मुख शरीर में ऊपर की ओर होता है, इसी कारण उनकी रग रग में इच्छा शक्ति व्याप्त थी और डर तो उन्हें लेशमात्र भी नहीं था।

अपने संगी साथियों के साथ खेलते खेलते भी भगवान की लीलाओं की वार्ताएं करते थे। वे कहते थे हमें संसार में रहते हुए ईश्वर को याद करना चाहिये तथा सन्तों का सत्संग सुनकर उनकी शिक्षा का अनुसरण करना चाहिये। ईश्वर हर जगह हाजिर है और हमारे रक्षक हैं। इस प्रकार वार्तालाप करते करते संध्या हो जाती थी और बालक उनको कहने लगते थे माधव भैया। अब हम डरते हैं क्योंकि रात हो रही है। उस पर स्वामी जी उनका डर मिटाने के लिए मधुर स्वर में उनको कहते थे

''उठत सुखिया बैठत सुखिया, भय नहीं लागे,

जां ऐसे बुझिया राखा एक हमारा स्वामी सकल घटा का अन्तरयामी

सोइ अंाचता, जाग अंाचता, जहां कहां प्रभू तूं वरतंता

घर सुख वसिआ, बाहर सुखु पाइया

कह नानक गुरि मन्तर दौराड़ाइआ''

कभी कभी आसन्न बांध कर साथियों से वैराग्य एवं शिक्षाप्रद वार्ताएं करते थे। यह संसार एक सराय है। किसी को भी यहां हमेशा नहीं रहना है। जो भी जन्म लेकर यहां आया है उसे आखिर यहां से चलकर उस परम पिता के पास जाना है। इस लिये परमात्मा का समरण करना परम आवश्यक है जो है ही हमारे अन्दर, केवल अन्तर आत्मा में झांक कर उसे ढूंढ़ना है। परन्तु जब तक झूठ कपट को अन्दर से निकालकर नहीं फैंकते तब तक उनका दर्शन करना असम्भव है और यह भजन गाने लगते थे।

भजन (स्वर तलंग)

झाती अन्दर में पाइ प्रीतम

मन हरीअ सां मिलाइ प्रीतम

1. पसु पिरीअं खे पाण में दोरे,

कुबुधिया कोरे मन खे मोड़े,

सची सुरत हंडाई प्रीतम - झाती अन्दर में................

2. पसु प्रभूअ खे पाण में गोल्हे

अखियूं खोले अन्दर फोले

अनभव जोति जगाइ प्रीतम - झाती अन्दर में .....

3. पंहिजों पाण में प्रभू जाणी

सही सुञाणी दम पछाणी

रूह में राम रीझाइ प्रीतम-झाती अन्दर में......

4. माधव दिलि में दर्शन पाए

मन मिलाए आनन्द पाए,

अनहद नाद वजाइ प्रीतम - झाती अन्दर में पाइ......

(अर्थ)- इस भजन में स्वामी जी कहते है कि ऐ मनुष्य तुम अपनी अन्तर आत्मा में झांककर अपना मन हरि से मिलाओं। अपने मन से झूठ कपट दूर कर परमात्मा को अपने ही अन्दर ढूंढों और अपने अन्दर सच्चा प्रेम पैदा करो। अपने अन्दर की आँखें खोलकर अपने अन्दर ही परमात्मा की तलाश करो और अनुभव की ज्योति जगाओ। अपने अन्दर ही परमात्मा को जानकर और उसे सही पहचान कर और उसे श्वास में ढूढ कर अपनी ही आत्मा में परमात्मा को रिझाओं। स्वामी जी कहते है कि अपने ह्रदय में ईश्वर के दर्शन कर और उनके साथ मन मिलाकर आनन्द प्राप्त कर अनहद नाद बजाओ।

पाठशाला में उनके ऐसे गीत सभी बहुत रूचि से सुनते थे। इस प्रकार शिक्षा ग्रहण करते हुए स्वामी जी ने पाँच कक्षाऐं उत्तीर्ण की। जब वे ग्यारह वर्ष के हुए तब उनकी माताजी ने एक कन्या को जन्म दिया। घर में सबको बहुत खुशी हुई कि घर पवित्र हो गया। सबने भगवान से यह प्रार्थना की कि कन्या को बड़ी आयु प्रदान करें। क्योंकि भगवान ने अब तक पाँच बालक देकर वापस ले लिये थे। बालिका का नाम चेताबाई रखा गया परन्तु बाद में आगे चलकर वह मूली बाई के नाम से पुकारी जाने लगी। परन्तु स्वामी जी को इन बातों ने आकर्षित नही किया। समय बीतते उनकी वृत्ति वैराग्य मयी होती चली गयी। सुबह जब नियम से सत्संग का दीबान लगता या तो सर्व प्रथम यह भजन गाते थे।

भजन

प्रभूअ खे थई प्रेम प्यारो,

प्रेम सां प्रभू पाइ।

1. मोह माया जो मान त्यागे,

दिल मां दम्भ विञाइ,

लोक कुटम्ब खां मुखिड़ों मोड़े,

लवं सच्ची तूं लाइ।

2. पाण प्रभू थो प्रेम खे चाहे,

प्रेम जी रसि रचाइ

प्रेम पदार्थ प्रभू मांगे,

प्रेम ते प्रीत बसाई।

3. प्रेम जी माल्हा खणी हथनि में,

प्रेम जी सुरत पढ़ाई।

प्रेम धागे सा दिल खे पूई

प्रेम सां राम रीझाई।

4. माधव मन मोहन सां मिली,

धुनि में ध्यान लगाइ,

प्रेम हिन्दोरे हरदम वेही,

गुण गोबिन्द जा गाइ।

(अर्थ): इस भजन में स्वामी जी ने कहा है कि प्रभू को प्रेम ही प्रिय है इसलिये तुम उसको प्रेम से ही प्राप्त करो। माया का मोह त्यागकर दिल में से अहं निकालो और लोक परिवार से मुंह मोड़कर उससे सच्ची लगन लगाओ। प्रभू स्वयं प्रेम चाहते हैं इसलिए तुम प्रेमी रास रचाओ। प्रभू तो प्रेम पदार्थ ही मांगते है इसलिए दिल में प्रेम बसाओ। प्रेम की माला हाथों में लेकर दिल में प्रेम जगाओ और प्रेम के धागे में दिल को पिरोकर तुम राम को रिझाओ। स्वामीजी कहते है कि अपना मन मोहन से मिलाकर उसी की धुन में ध्यान लगाओ और हृदय प्रेम के झूले में बैठकर गोबिन्द के गुन गाओ।

इस प्रकर वहां सत्संग से उठकर कृष्ण भगवान की मूर्ति के सामने बिना पलक झपकते देखते रहते और मुस्कराते रहते थे। पाठशाला के आगे गाते रहते थे। माता जी कहती कि बेटा पाठशाला जाने का समय हो गया है, जल्दी तैयार हो जाओ। तो उत्तर देते थे कि कल जाऊँगा, आज जाने की इच्छा नही है और गाने लग जाते। गाते गाते सुरत शब्द में समा जाती थी और बिल्कुल शान्त हो जाते थे। माताजी उठकर आकर देखती थी कि माधव का सम्पूर्ण ध्यान कृष्ण भगवान में लगा हुआ है और दुनियां की सुध बुध ही नही है। इनकी स्कूली शिक्षा में रूचि कम होती गई। धुन लगी हुई थी परमात्मा के दर्शन की। माताजी इनको घर और संसार की और आकृष्टि करने का यतन करने लगी परन्तु सब व्यर्थ जाता था। माताजी को कहते थे कि स्कूली शिक्षा अच्छी नही लगती। अब श्वासों की माला हाथ में ली है जिसे जप कर परमात्मा को ढ़ूँढ़ रहा हूँ । माता जी को यह भजन गाकर सुनाते थे।

भजन (स्वर भैरवी)

सुवास सुमरणी सोरे

दातरू लहु दोरे, दातरू लहु दोरे

1. सुवास अमोलक मणिक मोती

जगत दाता जी जहिं में जोती

दिसु विजूद में बोडे-दातरू लहु दोरे

2. सुवासनि माला सिक सां सोरिज

लोकइ लिकाए चरखो चोरिजि

जाणि अलख खे सोरे- दातरू लहु दोरे।

3. माधव ही तूँ सुवास सुञाणिज

वठी गुरूअ खां शब्दु उचारिज

कंधु कुल्हनि खां कोरे- दातरू लहु दोरे।

(अर्थ)- इस भजन में स्वामी जी ने कहा है कि श्वास की माला के द्वारा तुम परमात्मा को ढंूढ कर प्राप्त करो। श्वास अनमोल मोती है जिस में परमात्मा की ज्योति है। तुम अपनी ही काया में उसे ढँूढ कर देखो। यह श्वास की माला बड़े प्यार से जपना और लोगों से छुपकर इसका स्मरण करना और परमात्मा को अपने बिल्कुल निकट समझना। स्वामी जी ने कहा है कि इन श्वासों की पहचान कर अपने सत्गुरू से 'नाम लेकर उसी के द्वारा अहं भाव त्याग करना। उसी नाम के द्वारा परमात्मा का दर्शन करो।

माता जी इस अल्पायु में इनका इतना वैराग्य देखकर बहुत दुखी होती थी। माता जी ने तो ऐसा सोचा भी नही था कि इतना जल्दी इनकी वृत्ति वैराग्यमय हो जायेगी। वह उनको कहती रहती थी कि इस अल्पायु में तुम से गुरू के नाम का उच्चारण किस प्रकार होगा? यदि आपका मन पढ़ाई में नही लगता तो अपने पिता के दुकान पर जाकर बैठो या अपने चाचा जी के खेत पर जाकर खेती का कार्य करो। उन्होंने उत्तर दिया कि मैं तो व्यापार करूंगा। मुझ सौदा करना है उस परमात्मा का।

ऐसे शब्द सुनकर माता जी समझने लगी कि इन्होंने सन्यासी बनने का निश्चिय कर लिया है। अब इनको किस प्रकार मनाया जाये ताकि इनका मन घर संसार में लगे। वे स्वामी जी को गृहस्थ जीवन की अच्छाइयाँ बताकर कहती थी कि परमात्मा ने मुझे एक दिया है मैं उसमें से अनेक देखना चाहती हूँ । मैं तो तुम्हारी शादी के सपने देख रही हूँ कि कब बहु लेकर घर आओगे और मुझे सुख देकर सब कष्ट मिटाओगे। उत्तर देते थे कि माताजी सब भुला दो। इस संसार में कुछ भी नही है। ये रिश्ते नाते सब झूठे है। जिसे आप सही समझती है वह सब असत्य है। मैं उस सत्य को खोजूंगा और सत्य को खोजने के लिए सन्यास के अतिरिक्त मुझे और कोई रास्ता नही आता है। माताजी को यह भजन सुना कर अपने मन के भाव बताये।

भजन

सन्यास पातो मूँ माता

छदे सभि जगत जा नाता।

1. गले कन्ठी माला पाए

जान जिस्म ते खाकि लगाए

मां त कुण्डल कननि में पाता

सन्यास पातो मूँ माता।

2. मिट माइट मां कोन थो जाणा

पत्नी पुत्र ना प्रेम सुञांाणा

से त सुपने जीअं मूँ जाता

सन्यास पातो मूँ माता

3. रातों दींहां दर्द दुखे थो,

मन अन्दर में मचु बखे थी,

ही अंग अंगनि में राता

सन्यास पातो मूँ माता।

4. माधव रोई रात विहाई,

रत रंङिया ही कपिड़ा पाए

मां त लाल लिङनि ते राता

सन्यास पातो मूँ माता।

(अर्थ) - स्वामी जी इस भजन द्वारा अपनी माताजी से कहते है कि जग के सब नाते रिश्ते छोड़कर मैं ने सन्यास धारण कर लिया है। मैं ने गले में कंठी, कानों में कुण्डल और शरीर पर भभूत मल ली है। मैं रिश्तेदारों पत्नी और बच्चों को सपने के समान मानता हूँ । मेरे दिल में दिन रात दर्द का दूहां उठ रहा है। मेरे अंग अंग में परमात्मा बस रहे है। स्वामी जी कहते है कि मैं ने सारी रात परमात्मा के विरह में रो कर काटी है अब मैं यह सन्यासियों का बेस पहनकर अंग अंग में प्रभू को बसाकर सन्यास लूंगा।

ऐसे वैराग्य के शब्द सुनकर माता जी की आंखों से अश्रु बहने लगते थे। मन ही मन में दुखी होकर सोचती थी कि मैंने ही वैराग्य की लोरियां गाकर इन्हें सचमुच का सन्यासी बना दिया है। मैं ने तो ऐसा स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि भावी ये नाता तोड़ लेगी। बार बार उन्हें समझाती रहती थी कि तुम ऐसी बातें मत करो। मैं तुम्हारे वैराग्य के भजन सुन नही सकती हूँ । भगवान यह तो नहीं कहते है कि केवल वैराग्य में ही जीवन बिताओ। परन्तु घर गृहस्थी के अन्दर रहकर भी भगवान को प्राप्त किया जा सकता है। देखो, कबीर ने काम करते करते

परमात्मा को पा लिया। गुरू नानक ने भी गृहस्थ जीवन में रहकर दोनो स्वाँग संवार लिये। तुम्हारे पिता जी और चाचाजी भी संसार में रहकर राम का स्मरण कर रहे हैं और संतों की सेवा कर रहे हैं। इसलिए आप भी सांसारिक कार्य करते हुए राम को रिझाते रहो। घर की भी करो तो हरि की भी करो। माताजी ऐसे शब्दों द्वारा उनको समझाने लगी।

भजन (स्वर विहाग)

रही दुनिया में धरि ध्यान बच्चा

पाइ आत्म पद निर्बण बच्चा

1. तन सां करि तूँ कारि पुटड़ा

मनड़ो मिलाइ मोहन सां

सच्चों संतनि खा वठु ज्ञान बच्चा - रही दुनिया में ....

2. जाण दुनिया खे तूँ सपनो

रह तंहि में नियारो सदा

मेटे मन सन्दो त गुमानु बच्चा- रही दुनिया में ....

3. करि विवेक सां वहिवार तूँ,

पाइ प्रेम सा प्रभूअ खे

पसु नाम सच्चे जी नीशान बच्चा - रही दुनियां में ....

4. माधव करि वर्हिवार तूँ

ऐ परमार्थ भी प्रेम सां

चल पल पल में भगवान बच्चा - रही दुनियां में......

अर्थ:- इस भजन में माताजी स्वामी जी से कहती है कि संसार में रहते हुए भगवान का भजन करो और आत्म पद प्राप्त कर मुक्त हो जाओ। इस तन से सांसारिक कार्य करो और मन से प्रभू का स्मरण करते रहो, यह सच्चा ज्ञान तुम संतों से लो। इस संसार को सपने के समान समझो और तुम इस में न्यारे रहकर मन में से संदेह को मिटा दो। इस ससंार के कार्य विवेक से करो। प्रेम द्वारा प्रभू को प्राप्त करो और अपने अन्दर नाम का चिन्ह पहचानो। इसलिये हे माधव! तुम प्रेम से परमार्थ की राह पर चलते हुए पल पल भगवान का स्मरण करते हुए सांसारिक कर्म भी करो।

परन्तु जिसने एक बार राम रूपी नाम का रस पीया हो उसे अन्य सब रस कैसे अच्छे लगेंगे?

माताजी से नम्रता से कहा कि इस जगत का व्यवहार सपने के समान है। जो पदार्थ आप देखते है वे सब क्षण भंगुर है और खेल के समान है। माता जी आप मुझे संसार की ओर मत ले चलो। प्रभू की प्रीत ही सच्ची जानो। जिस कार्य को करने के लिये हमने जन्म लिया है वही कार्य करना है। अन्त समय कोई भी साथ नही जाएगा। जिन को आप अपना समझती है वास्तव में अपने नहीं हैं। अपना है तो केवल प्रभू परमात्मा ही है। इसलिये मेरी माताजी जब तक इन सांसारिक पदार्थों का त्याग नही करेंगे तब तक प्रभू भी प्राप्ति नहीं होगी, क्योंकि यह मनुष्य संसार में जन्म लेकर वृद्ध अवस्था, रोग, शोक आदि क्लेशों से अनेक प्रकार के दुख भोगता और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध आदि विषयों में आसक्त हाकर जन्म मरण के चक्र में फंस कर संसार में बार बार जन्म लेकर और मरकर अनेक दुख भोगता है। इसलिये इस जन्म और मरण के बन्धन से मुक्त होने के लिये चाहिये भक्ति और मुक्ति और मुक्ति का साधन है त्याग और वैराग्य। इसलिये मैं इन सांसारिक पदार्थों ओर विषयों को दुखरूप व

स्वपन मात्र जानकर अपना मन ईश्वर को मनाने के लिये भजन और स्मरण में लगाता हूँ ।
माताजी को यह बात इस भजन के द्वारा समझाने लगे।

भजन (स्वर तलंग)

वहिंवार जातो मूँ माई

सभि सपनो जींअ रहनाई।

1. ही दुनियां जो झूठो नातो,

जेकी पाप आहे पंहिजो जातो

थे अन्त समे न सहाई- वहिंवार जातो......

2. संगु दुनिया जो झूठो आहे,

कोई कहिं सा नेबहु नाहे

ही झूठी प्रीत लगाई- वर्हिंवार जातो......

3. कहिं लाई मां कूड़ कमायां,

पाप करे मां पंहिजो जन्म विञाया

हितां संग न हलन्दी पाई- वहिंवार जातो ....

4. माधव मन जो मोहु मिटाये

प्रेम पको प्रभूअ सां पाए।

मूँखे करिणी उमिरि सजाई- वहिंवार जातो.....

(अर्थ)- स्वामी जी इस भजन में माता जी से कहते है कि इस संसार के व्यवहार को रात्रि में स्वप्न के समान मानता हूँ । ये दुनिया के नाते रिश्ते जिन्हें हम अपना समझ बैठे हैं, सब झूठे हैं और अन्त समय में हमारे साथ नही रहेंगे। दुनियां का संग झूठा है और किसी के साथ सदा रहने वाला नही है, हमने उसके साथ झूठी प्रीत लगा रखी है। मैं किस के लिए झूठ कमाऊँ और पाप करके जन्म गवाऊं। यहाँ से एक पाई भी साथ नहीं जायेगी। स्वामी जी कहते है कि मुझे अपने मन से मोह हटाकर प्रभू से पक्का प्रेम कर अपना जीवन सफल बनाना है।

माता जी वैराग्य सुनकर बड़ी चिन्ता में पड़ गई और उन्हें समझाने लगी कि मेरे पुत्र! हर कार्य को करने का समय होता है। यह उमर तुम्हारे खाने और खेलने की है। गृहस्थ जीवन का पालन करने के बाद ही तुम्हें ये बाते सोचनी चाहिये। भजन तो तुम बाद में भी कर सकते हो। अभी तो तुम्हारी जवानी आरम्भ हो रही है। तुम जवानी में तो संसार के सुख भोगो बाद में भजन करते रहना और राम को रिझाना। उन्होंने उत्तर दिया कि बाद में तो सब इन्द्रियां शिथिल हो जायेंगी, शरीर में शक्ति क्षीण हो जायेगी धर्म कर्म की बूझ और बुद्धि भी जवानी में मजबूत रहती है। भजन करना है तो जवानी में करना है।

भजन (स्वर फलो)

भजन आ करिणो, करणो, जोभन जवानीअ में

1. जोभन में जगदीश रचियो, पैदा करणु संसार जो

इल्म प्राइण, हुनुरू प्राइण ऐ करणु कमु वर्हिवार जो

धर्म कमाइण कर्म कमाइण ऐ करणु प्रेम प्रचार जो

ज्ञान पाइण, ध्यान पाइण ऐ पाइण सच्चे कर्तार जो

चाढ़ीअ ते चढ़िणों चढ़िणे, जोभन जवानीअ में।

जोभन में इंसान झले, तरार जी थो चोट खे

जोभन में इंसान काटे, कर्म जे थो कोट खे

मौत सा लड़िणों लड़िणों, जोभन जवानीअ में।

3. जोभन में वणु थो झले, मेवे गुल ऐ फल खे

जोभन में दरियाह दें, लहरूनु जी त उछल खे

जोभन में थो शेर मारे, हाथियुनि जे पिणि दल खे

जोभन में इंसान जीते, चंचल मन जी कल खे,

जीअरे आ मरिणें मरिणों, जीभन जवानीअ में।

4. जोभन में जगदीश जो वेही करि वीचार तूँ।

नाभीअ खां पिणि नाम जो करि, ओम सां त उचार तूँ

जफा सा हिन जाति जो करि कटे धरू धार तूँ

जो चवनि पदु पराहूँ, माधव लहु सो यारू तूँ

सागर आ तरिणो तरिणों, जोभन जवानीअ में

भजन आ करिणों करिणों, जोभन जवानीअ में।

(अर्थ)- इस भजन में स्वामी जी अपनी माता जी से कह रहे है कि यौवन अवस्था में ही भजन करना है। जगदीश ने इस संसार की रचना के लिये यौवन अवस्था दी है इसी अवस्था में विद्या ग्रहण करना, हुनर सीखना और व्यवहार करना है। धर्म कमाना, कर्म करना और

प्रेम का प्रचार करना, ज्ञान प्राप्त करना ध्यान करना और सच्चे कर्तार को प्राप्त करना है। चढ़ाई पर इसी जवानी में चढ़ना है।

जवानी में इंसान परबत को तोड़ सकता है। जवानी में इंसान तलवार की चोट झेलता है। जवानी में इंसान कर्म के कोट को काट सकता है। जवानी में इंसान मौत से भी लड़ सकता है।

यौवन अवस्था में पेड़ फल फूल और मेवा देता है। यौवन में दरियाह लहरें उछलता है। यौवन में शेर हथियों के झुंड को मारता है। यौवन में इंसान चंचल मन को जीतता है। जीते जी मरना है यौवन जवानी में।

यौवन अवस्था में बैठकर जगदीश का विचार करो। नाभी से नाम का ॐ से उच्चार करो। युक्ति से इस जान से धर काट कर अलग कर। स्वामी जी कहते हैं जिसे परम पद कहते हैं उस प्रीतम को प्राप्त कर। सागर तैर कर पार करना है जवानी में, भजन भी करना है जवानी में।

ममता की मूर्ति किसी भी तरह मोह ममता को छिपा नही पाती है। माता तो है ही ममता का औतार। सचमुच प्यार का सागर। भगवान यदि माता के हृदय को इतना ममता से भरा हुआ और अति कोमल नही बनाते तो संसार का यह हरा भरा बगीचा निःसन्देह उजड़ जाता। माता ने बहुत यत्न किये परन्तु सब व्यर्थ गये। समस्या का समाधान नही मिला। उनका इतनी अल्पायु में इतना गहरा वैराग्य माता के बर्दाश्त करने से बाहर था। माता का मन चिर्तित रहने लगा। माता गर्भवती थी और गर्भपात हो गया और माता इस संसार से विदा होकर प्रभू चरणों में प्यारी हो गई। इस दुर्घटना ने स्वामी जी के हृदय में गहरी चोट पहुँचायी। दिल में वैराग्य की चिंगारी तो पहले ही सुलग चुकी थी उसे प्रज्वलित होने के लिये केवल घी डालने की देर थी। वैराग्य बढ़ता गया। कोई भी बात अच्छी नही लगती थी। माता का प्यार ही बाहरी सहारा था। उस से वंचित हो गये। उनका मन उचाट हो गया। उनकी

आत्मा इस संसार के झूठे बंधन तोड़ने के लिये बेचैन रहने लगी। सोचा बरहवां गुजर जाय तो एकान्त वास में चला जाऊं जहां अपने राम को रिझाने का यत्न करें। परन्तु उनके आगे अपनी छोटी बहन के पालने पोसने की समस्या थी। पिता जी का स्वभाव सरल था। विवेक बार बार कह रहा था कि बहन के प्रति कर्त्तव्य को पूर्ण करना है। कुछ समय ठहरना ही पड़ेगा। फिर तो सीधा निकल जाऊँगा हरिद्वार की ओर और जाकर गंगा पर आसन्न जमाऊंगा। समय की प्रतीक्षा करते हुए यह भजन करते थे।

भजन

मां त रहंदुसु गंगा किनारे

1. गंगा किनारे ध्यान लगाए, दर्द जो दिल में दूँहों दुखाए

   मुहबत वारो मचु मचाए, पहिंजे मन   जूँ वागूं वारे

   गंगा किनारे ....

2. प्रेम में प्रभू नीरू टिमायां, रोअन्दे रात विहायां

   शिव शिव चवन्दे शान्ति पायां, अखंड नाम उचारे ।

   गंगा किनारे ....

3. गंगा किनारे लाए समाधी, मन जी मेटे सब उपाधी

   सब में जाणी ईश अनादी, ज्ञान जो दीपक वारे।

   गंगा किनारे ....

4. माधव गंगा महर कृपालू, दानु इहो दे दाता दयालू

   अन्त समे मिले जोति उजालो, वञा बलिहारी।

गंगा किनारे ....

(अर्थ)- स्वामी जी इस भजन में कहते हैं कि मैं गंगा किनारे रहूंगा। वहां पर दिल में दर्द का दूँहा सुलगाऊंगा। मुहब्बत की आग प्रज्वलित करूंगा और अपने मन की वृति को फेर लूँगा। प्रभू के प्रेम में नीर बहाऊं, रोते रोते रात काटूँ। शिव शिव कहते शान्ति पाऊं और नाम का अखण्ड उच्चारण करता रहूं। गंगा किनारे समाधि लगा कर मन की सारी उपाधि मिटा कर सब में अनादि ईश्वर को जान कर ज्ञान का दीपक जलाऊं। स्वामी जी कहते हैं हे कृपालू ! मैं तुम से दया मांगता हूं। यह दान दो दाता कि अन्त समय उस अनन्त ज्योति में समा जाऊं। मैं आप पर बलिहार हो जाऊं।

इस घटना को घटे एक महिना भर मुश्किल से बीता होगा कि बन्धि ग्राम में सत्गुरू स्वामी टेऊंराम महाराज टण्डे आदम वाले प्रेम प्रकाश मण्डल के मण्डलेश्वर अपनी मण्डली सहित प्रेमियों की प्रेरणा पर कीर्तन करने पहुंच गये। सत्गुरू स्वामी टेऊंराम महाराज उस समय भंभरनि के ग्राम पधारे हुए थे। जहां से भक्त श्री राचूरामजी उन्हें मण्डली सहित अपने मन्दिर में ले आये। बन्धि ग्राम के प्रेमियों को इसका पता लग गया। चाचा श्री सेऊमल जी के साथ स्वामी जी भी वहाँ पहुंच गये। संतों को झुककर प्रणाम किया। बस दर्शन करते ही मन आकृर्षित हो गया। यह मोहनी सूरत मन में उत्तर गई। फिर ऊपर से वैराग्य का जो सत्संग सुना तिस पर वृति ही स्थर हो गई। संतों ने पहले तो महत्व बताया कलियुग में राम नाम की महिमा का।

संत दारा और लक्षमी पापी को भी होइ,

संत समागम हरि कथा, तुलसी दुर्लभ होइ।

सत जुग में थियूँ वदियूँ कथाऊं

त्रेता में वदा यज्ञ कथाऊं

द्वापर में खूब योग कमायाऊं

हाणि कलजुग में गदिजी राम नाम गायूँ

इसके अतिरिक्त देह धारी गुरू की आवश्यकता और महत्व बताया कि निर्गुण तक पहँुचने के लिए सगुण गुरू करना आवश्यक है। ऐसे ज्ञान गुरू से ही प्राप्त किया जा सकता है।

गुरू बिन होइ न आत्म ज्ञान, गुरू बिन मिटइ न तन अभिमाना

गुरू बिन शिष्य भरम न जावे, गुरू बिन कीन्हू शान्त न पावे।

कहने का अर्थ है कि गुरू के बिना आत्म ज्ञान प्राप्त नही हो सकता। आत्म ज्ञान के बिना अनात्म देह का अभिमान और भरम दूर नहीं होगा। संशय दूर नहीं हुए तो शांति मिलना कठिन है। किन्तु ऐसे शास्त्रानुसार, बिन गुरू की सहायता के ईश्वरीय मार्ग पर चलते चलते इंसान को गिरने का डर रहता है। परन्तु गुरू अपने ज्ञान द्वारा अपने शिष्य को संसार सागर से पार उतार लेता है। सतगुरू महाराज जी ने गुरू की महिमा का यह भजन सुनाया-

भजन (स्वर खंभात)

पूरो गुरू, प्रेम भगितीअ जो भरे प्यालों प्यारे थो

भर्म भोला कढी भ्रांतियूँ , संसा सभेई निवारे थो।

1. वस्त्र जींअ धोबी धोए

कर्म शुभ पाप खे खोए

पारसु तींअं सत्गुरू सींगारे थो।

2. माता जींअं बाल खे पारे,

भ्रंग जींअं कीट सुधारे

जवाहरी परख देखारे,

अर्थ तीअं गुरू सेखारे थो।

3. दवा जीअं दर्द हटाए,

रवि जीअं रैन मिटाए

तीअं गुरू ज्ञान रटाए

लेखो जम जो मेसारे थो।

4. कहे टेऊं से निकाली

दियन था बलु गंज गुणशाली

सच्चे गुरूअ जी सुन्दर चाली,

मअल दिल खे जीआरे थो।

पूरो गुरू प्रेम भगितीअ जो,

भरे प्यालो प्यारे थो।

(अर्थ)- सतगुरू स्वामी टेऊँराम जी ने इस भजन में कहा है कि पूर्ण गुरू अपने शिष्य को प्रेम भक्ति का प्याला भर कर पिलाते है और सब संदेह व शंका निकाल कर संशय दूर करते है। जैसे धोबी वस्त्र का मैल निकाल कर उन्हें साफ करता है वैसे ही सतगुरू मन का मैल निकाल कर व पाप को धोकर साफ कर लेते है। वह पारस के समान लोहे रूपी शिष्य को सोना बना कर उसे सजाते है। जैसे माता अपने बालक का पोषण करती है। जैसे भ्रंग कीट को सुधारता है। जौहरी जैसे जवाहर को परखता है वैसे ही गुरू शिष्य को अर्थ सिखाता है। जिस प्रकार दवा दर्द को दूर करती है सूर्य रात्रि के अंधकार को दूर करता है वैसे ही गुरू ज्ञान रटा कर यम के हिसाब को साफ कर देता है। सतगुरू स्वामी टेऊंराम जी कहते है कि गुरू त्रकाली अपने शिष्य को सद्‌गुणों की असीमित शक्ति प्रदान करते है। सच्चे गुरू की चाल सुन्दर होती है, वे मृत हृदय को जीवित कर देते है। भजन सुनाने के बाद गुरू की महिमा और मुक्ति के मार्ग में गुरू की आवश्यकता को समझाने के लिये सतगुरू स्वामी टेऊंराम जी महाराज ने प्रेमियों को एक पौराणिक कथा सुनाई।

दृष्टान्तः- सुखदेव ऋषि वेद व्यास जी का पुत्र था। चौदह कला सम्पूर्ण था, उसे गर्भ से ही ज्ञान था। जन्म नहीं ले रहा था कहता था कि अगर जन्म लिया तो माया भुला देगी। आखिर उसके लिए भगवान ने पाँच पल के लिए माया की गति बन्द की कि सुखदेव जन्म ले ले। वह अभ्यास करता था और बड़ी कमाई वाला था। जन्म लेते ही जंगल में चला गया।

एक दिन विचार आया कि जिसका रोज ध्यान करते है उसका दर्शन भी करें, सो अन्दर विष्णुपुरी में चले। सहस्त्रदल कमल तक सारी पुरिया खत्म हो जाती है। जब विष्णुपुरी में गया तो धक्के पड़े। जो द्‌वारपाल थे, उन्होंने कहा कि तू निगुरा है, इसलिये विष्णुपुरी में नही आ सकता। विष्णु ने कहा कि हे सुखदेव! तू निगुरा है। मेरे दरबार में निगुरे के लिये जगह नही है। अगर तुझे मुझसे मिलना है तो जाकर गुरू धारण कर।

आखिर सुखदेव अभ्यास से उठकर, वाहर बाप के पास गया। कहा कि आज मुझ विष्णुपुरी में धक्के मिले है। मुझ में अहिंकार था कि मैं ऋषि पुत्र हूँ परन्तु मुझे धक्के मिले। बोला कि अब मुझे गुरू की जरूरत है। तब पिता ने कहा कि इस समय अगर कोई योग्य गुरू है तो वह राजा जनक है। यह सुनकर सुखदेव ने कहा, ''आपकी बुढ़ापे में बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। वह राजा, मैं हूँ ऋषि। वह गृहस्थी है, मैं हूँ त्यागी! मैं उसकों गुरू कैसे बनाऊं?'' वेद व्यास ने कहा कि उसके समान इस समय और कोई गुरू नहीं है। बाप ने उसे हर बार राजा जनक के पास भेजा, वह जाता और हर बार कोई न कोई बहाना लेकर रास्ते से वापस आ जाता। एक बार वहाँ पहुँचा भी। अब राजाओं के महल भी होते है, दरबार भी लगता है। कहता है, राजा बड़ा भोगी है, तभी तो मैं इसको गुरू नहीं धारण करना चाहता। अब नियम तो यह है कि अगर हम कमाई वाले महात्मा की निन्दा करे तो कमाई घटती है। सुखदेव ज्यों ज्यों अभाव लाता रहा कमाई घटती गई। अब चौदह कला में से दो कला ही बाकी रह गई।

जब तेरहवीं बार पिता ने उसे भेजा तो नारद जी ने देखा कि यह बेवकूफ तो लुटा जा रहा है। रास्ते में एक नाला पड़ता था। एक ब्रह्मण का रूप धारण करके उसमें मिट्टी फैंकने लग गया। इधर वह मिट्टी की टोकरी पानी में फैंक उधर पानी बहा कर ले जाये। फिर मिट्टी की टोकरी भरकर डाले, फिर पानी बहा कर ले जाये। सुखदेव ने देखा कि बूढ़ा आदमी है, पिछली अवस्था है। बड़ी मुश्किल में मिट्टी की टोकरी भर कर लाकर फैंकता है, पानी बहा कर ले जाता है। उससे बोला, ''देख बाबा! मेरी बात सुनो। पहले छोटी छोटी लकड़ियों रखो, फिर मिट्टी के ढेले रखो और फिर ऊपर बारीक मिट्टी डालो। बांध लग जायेगा। अगर अपनी मरजी करते रहे तो वक्त बरबाद करोगे और सारी उमर लगे रहे तो भी बांध नही लगा सकेगा।'' नारद जी ने कहा, ''मेरी तो आज की मेहनत बेकार चली गई, लेकिन मेरे से भी बेवकूफ वेद व्यास का पुत्र सुखदेव है, जिसकी जनक पर अभाव लाने के कारण बारह कला बेकार चली गई, सिर्फ दो ही रह गई है।'' जब सुखदेव ने सुना तो बेहोश होकर गिर पड़ा। नारद जी अपना काम करके चल दिये।

जब सुखदेव को होश आया तो न वहाँ कोई बूढ़ा था, न कोई और। चल तो पड़ा लेकिन मन में अहंकार था कि में वेद व्यास का पुत्र हूँ । शायद राजा जनक मुझे लेने आये, खैर राजा के दरबार में पहुँचा, इत्तिला करवाई कि वेद व्यास का पुत्र सुखदेव आया है। राजा ने हुक्म दिया कि बाहर खड़ा रहे। जहाँ खड़ा किया वहाँ सईस रहते थे। सारा कूड़ा कर कट, घोड़ों की लीद आदि वहीं फैंकते थे। लीद में दब गया। कई दिन हो गये इस तरह खड़े हुए। आखिर जनक ने पूछा कि वेद व्यास का पुत्र आया था। दरबानों ने अजर् की, हुज़ूर! वह बाहर खड़ा है। अब वह न पीछे जाने योग्य था न आगे आने योग्य। राजा ने हुक्म दिया कि उसको नहलाओ, धुलाओं और पेश करो। राजा जनक ने यह देखकर कि इसको त्याग का अहंकार है और मुझको भोगी समझता है, एक नया कौतुक दिखाया। जब सुखदेख नहा धोकर सामने आया, तब क्या देखता है कि राजा बैठा है, उसके एक पैर को तो औरतें अपने कोमल हाथों से दबा रही है, दूसरी ओर एक आग का चूल्हा है और दूसरा पैर उस में जल रहा है। यह देखकर सोचता है कि ओहो! मुझ से बड़ी भूल हो गई कि इसको भोगी राजा कहता था। यह तो कोई बड़ा महात्मा है। अब राजा ने दूसरा कौतुक शुरू किया।

एक नौकर ने आकर अर्ज की। 'हजुर! शहर को आग लग गई है।' जनक बोला, 'हरि इच्छा' ! फिर खबर मिली छावनी जल गई। फिर बोला, "हरि इच्छा!" फिर खबर मिली कि शहर की तमाम कचहरियां जल गई है। कहता है, "हरि इच्छा!" फिर खबर मिली आपके महलों को आग लग गई है। सुखदेव मन में कहता है, बड़ा बेवकूफ है। इन्तिज़ाम नहीं करता। इतने में आग राजा के पास आ गई। यह देखकर सुखदेव ने अपना झोला डण्डा संभाल और भागने की तैयारी करने लगा। राजा जनक ने बांह पकड़ ली और कहा, "देख मेरी सारी सामग्री जल गई," मैंने परवाह नही की, लेकिन तू झोली डण्डा संभालने लग गया है, जो आठ आने का या रूपये का होगा। तुझे अहंकार है ऋषि होने का ? अब बता त्यागी कौन है ? ऋषि चुप चाप सुनता रहा। आखिर समझ गया कि मैं त्यागी, नहीं, सच्चा त्यागी राजा जनक है। अर्ज़ की कि मुझे नाम दो। राजा ने कहा कि तू नाम के योग्य नहीं है। सुख देव मन में सोचने

लगा कि जिसको मैं पुण्य समझता था वह सब पाप निकला। आखिर राजा जनक ने एक कौतल और दिखा कर नाम दे दिया।

जब सुखदेव गुरू धारण करके, उसके आदेशानुसार कमाई करके बाप के पास आया, तो उसने पूछा, ''गुरू कैसा है ?'' सुखदेव चुप! आखिर बाप ने कहा, ''क्या सूर्य जैसा है?'' सुखदेव बोला, ''सूर्य जैसी चमक वाला है, लेकिन सूर्य में गर्मी है, गुरू में गर्मी नहीं।'' फिर बाप ने पूछा, ''क्या चन्द्रमा जैसा है'' बोला ''है तो चन्द्रमा जैसा शीतल, लेकिन चन्द्रमा में दाग है, गुरू में दाग नहीं।'' बाप ने पूछा ''फिर किसके जैसा है?'' सुखदेव ने उत्तर दिया, ''गुरू जैसा कोई नही। गुरू जैसा सिर्फ गुरू ही है।''वेद व्यास ने कहा, ''अब चाहे रोज विष्णु पुरी जाओ, कोई नहीं रोक सकता।''

सत्गुरू स्वामी टेऊँराम जी महाराज का सत्संग सुन कर स्वामी मन ही मन कहने लगे कि कितन मधु भरे अमृत वचन हैं। चित को पागल कर दिया है। यह सत्य है कि पूर्ण ज्ञान तो गुरू ही दे सकता है। निर्गुण तक पहुँचने के लिये सगुण का सहारा लेना परम आवश्यक है। ऐसे ही त्यागी, वैरागी और ज्ञानी संतों के हाथ में शरीर रूपी नाव की डोरी सुरक्षित रह सकती है। किसी प्रकार का खतरा नही होगा। क्यों नही अभी जाकर उनके चरण पकड़ लँू। परन्तु गुरू कृपा पाने के लिए सबसे पहले गुरू की सेवा तो मन, वचन और कर्म से करनी चाहिए और अपने में वह पात्रता पैदा करनी चाहिए। शायद अब स्वीकार भी नही करे क्योंकि अभी इतनी योग्यता नही है। पहले मंै अपने को उनके योग्य बनाऊँ फिर अपने को तैयार कर उन महा पुरूषों को पल्ला पकडूंगा जिन्होंने इतना अपनी ओर आकर्षित किया है। कहने लगे :

दिसी नेण ठरिया, दर्शन दर्दवन्दनि जा

उताहीं अनभउ जा, वचन मन्द भरिया

सामी लोक परलोक जा, कार्ज सब सरिया

लखे लोक तरिया, सतह लगी तिनजे।

कोई बात अच्छी नही लग रही थी केवल उनके सत्संग रूपी अमृत को पी रहे थे, जैसे कि उनके मधुर वचनों ने उनके प्राणों को पुर कर लिया था। सुबह उठते ही भजन गाने लगते थे।

भजन (राग आसा)

मूँ त पीतो प्रेम जो पाणी

मूखे कान वणे बी वाणी

1. प्रेम जो प्यालो आहे निरालो

पियण सां थियो मन मतवालो

मुंहिजी लंव लंव में थी लाणी,

मूँ त पीतो........

2. नाम नशे में आ खास खुमारी

पियण सां थी दिल हुबकारी

मर्हिजी सरतियूँ साह सीबाणी

मूँ त पीतो......

3. प्रेम प्रभूअ जो दिल में आयो,

होशु अकुलु जहिं शानु गंवायो,

मुहिंजी दिलड़ी थी त दीवानी

मूँ त पीतो......

4. माधव मन में बाति इहाई,

पल पल में आहे ताति

मुंहिजी रूअन्दे रात विहाणीं-

मूँ त पीतो.....

(अर्थ) - स्वामी जी ने इस भजन में कहा है कि मैने परमात्मा के प्रेम का अमृत पिया है इसलिये उसके अलावा और कोई भी वाणी अच्छी नहीं लगती है। प्रभु प्रेम का प्याला बड़ा निराला है जिसके पीने से मन मतवाला हो गया है। मेरे रोम रोम में प्रभू समा गये हैं।

नाम के नशे में एक अजीब खुमारी है। पीते ही दिल में एक खुशबू फैल गई। प्रभू प्रेम मेरे श्वास में समा गई है।

जैसे ही मेरे दिल में प्रभू का प्यार पैदा हुआ मेरा होश और अक्ल चली गयी, मेरा दिल दीवाना हो गया है।

स्वामी जी कहते है कि मेरे मन में केवल यही बात है हर पल में उनकी याद है। मैंने उनके वियोग में रोकर रात काटी है।

सत्गुरू महाराज जी ने मण्डली सहित दस बारह दिन बन्ध गाँव में रहकर वेदान्त व सत्कर्म का प्रचार किया और दृष्टांत देकर प्रेमियों को मुक्ति की राह बताई। परन्तु स्वामी जी के सन्तों के अमृत वचनों ने इतना तो मोह लिया कि सुबह होते ही सब से पहले उस अमृत को पीने के लिये श्री राचूराम जी के मन्दिर में पहुँच जाते, जहाँ सेवा भी करते थे और बड़े चाव से सन्तों के वचन भी सुनते थे। अन्तिम दिन सत्गुरू महाराज जी ने जो सत्संग किया उस ने तो स्वामी जी की वृत्ति को ओर अधिक वैराग्यमय बना लिया। उस दिन मौज

में आकर सत्गुरू महाराज कहने लगे कि मनुष्य जन्म लेकर जिस ने प्रभू का दर्शन नहीं किया है उसने इतना दोष किया है कि जैसा एक खूनी खून करके करता है अर्थात् वह फांसी के योग्य है। यहाँ एक दृष्टांत दिया।

दृष्टांत : एक करोड़पति सेठ था जिसे एक ही सुपुत्र था जिससे वह बहुत प्यार करता था। उसने सोचा कि कुछ धन छिपा कर रखूं । ताकि संकट के समय में काम आ सके। यह विचार कर वे एक लाख का हीरा खरीद कर लाये। हीरा सोने की डिबिया में बंद किया और डिबिया चाँदी की चरी में डाल दी और उस चरी को अपने मकान के पूर्व दिशा वाले कोने में ढाई फुट गहरा गड्डा खोदकर गाड़ दिया। यह बात उसने अपने लड़के को नही बताई, परन्तु एक बही में लिख दी कि ‘‘बेटा जब तुम्हें धन की आवश्यकता पड़े तब मकान के पूर्व दिशा वाले कोने में ढाई फुट गहरा गढ्ढा खोदने पर चाँदी की चरी मिलेगी उसमें एक सोने की डिबिया है उस डिबिया में लाख का हीरा पड़ा है। हीरा बेचकर अपना कारोबार करना और व्यवहार करना।‘‘

बीस पच्चीस वर्ष बाद सेठ का देहान्त हो गया। लक्ष्मी जी भी अब पीछे लौटने लगी। चार पाँच वर्षों में सेठ के लड़के का यह हाल हुआ कि दिन को खाये तो रात्रि को भोजन नही मिले। कर्जा लेकर कोई व्यापार करता तो उसमें घाटा पड़ जाता। इस प्रकार दस बीस हजार रूपये कर्जा चढ़ गया। आखिर ऐसा हाल हुआ कि उसे मजदूरी करनी पड़ी। बेचारे को पूरी मजदूरी भी नही मिलती थी जो पूरा पेट भर सकें। लेनदारों की लाईन लग गई। वह बहुत दुखी हुआ। एक विचार उसके मन में आया कि मेरे पिताजी करोड़पति थे। बही खाता खोल कर देखँू कहीं किसी के पास रकम रही हुई तो नही है। वहीं लेकर कुछ काम चलाऊँ। सो बैठा बहियाँ खोलकर देखने। उसने सचमुच देखा कि एक कागज के टुकड़े पर लिखा हुआ था कि हे पुत्र यदि तेरे को धन की आवश्यकता पड़े तो अपने मकान के पूर्व दिशा वाले कोने में ढाई फुट जमीन खोदने पर तुम्हें एक चाँदी की चरी मिलेगी, चरी में एक सोने की डिबिया है जिसमें एक लाख का हीरा पड़ा है। तुम उसे लेकर अपना कारोबार करना। यह पढ़ने से जैसे किसी

मृत शरीर में प्राण आ गये हो या किसी का खोया हुआ पुत्र वर्षों के विछोह के बाद मिला हो और उसके हर्ष की सीमा न रही हो। तुरन्त मकान के कोने को खोदकर चांदी की चरी में से सोने की डिबिया निकालकर खोलकर देखा तो वास्तव में उस में हीरा पड़ा था। सो हीरा लाकर माताजी को दिखाकर सारी हकीकत बताई और कहा कि माताजी इस नगर में ऐसा कोई साहूकार ही नही है जो इस हीरे का मोल कर सके इसलिये बताईये कि क्या करना चाहिये? माताजी ने खुश होकर कहा कि बेटे यहाँ से बीस पच्चीस कोस दूर एक रियासत का राजा है जो तुम्हारे पिता का घनिष्ठ मित्र है। यह हीरा लेकर तुम उसके पास जाओ और उसका मोल लेकर आओ। वह तुम्हें अवश्य इसके पैसे देगा।

लड़का हीरा लेकर राजा के महल में पहुँचा। देखा कि वह राज सभा लगी हुई है। एक कोने में बैठकर प्रतीक्षा करने लगा। घन्टे भर बाद सभा समाप्त हुई। राजा ने मंत्री से पूछा यह कौन बैठा है? इस पर लड़का प्रणाम कर बोला कि मेरे पिताजी आपके मित्र थे। पिताजी के स्वर्गवास के पश्चात यह एक लाख वाला हीरा मेरे हाथ लगा है सो लेकर आपके पास बेचने आया हूँ । यह कहकर हीरा राजा के हाथ में दे दिया।

राजा ने मंत्री को आज्ञा दी कि इस नगर का जो सबसे बड़ा जोहरी है उसे बुलाकर इस हीरे का मोल पुछवाया जाय ताकि हम इस लड़के को पैसे दे सकें। मंत्री ने जोहरी से जाकर कहा कि राजा का एक आवश्यक कार्य है सो आप चलो। जौहरी ने कहा कि इस समय मेरे यहां कुछ महत्वपूर्ण अतिथि आए हुए हैं मैं उसकी व्यवस्था में लगा हुआ हूँ सो आप मुझे यही पर बता दो कि कौन सा आवश्यक कार्य है। मंत्री ने कहा कि एक सेठ का लड़का एक हीरा बेचने के लिये लाया है जिसका मोल आप से करवाना है। जोहरी ने कहा मंत्री जी! हीरा तो आपने भी देखा होगा सो उसके सब चिन्ह और रंग रूप बताओ। मंत्री ने हीरे के बारे में सब कुछ बताया। जोहरी ने कहा मंत्री जी! वह हीरा नब्बे हजार का है, आप ले सकते है। इस मूल्य से न आप को हानि है और उसको हानि है। मंत्री ने सारी बात राजा से कही। राजा ने कहा कि अपने हाथ में हीरा है तो भी हमें पता नही लगता परन्तु जोहरी ने तो हीरा देखा भी नही है, फिर घर बैठे हीरे

की परख कर उसका मूल्य बता दिया? इसलिए फिर जाकर उसे बुला लाओ। मंत्री जोहरी को ले आया। जोहरी राजा को प्रणाम कर बोला है पृथ्वी नाथ! इस हीरे का मूल्य मैंने आंक कर आपके पास भेजा था यह हीरा नब्बे हजार का है एक पाई भी उससे अधिक नही। इस पर राजा ने जोहरी को हीरा देते हुए कहा कि मेरा मित्र सत्यवादी था। एक लाख रूपये हीरे का मूल्य लिखकर रख गया है। सो नब्बे हजार कैसे आंकते हो? फिर से अच्छी तरह से जाँच कर देखो। जोहरी ने हीरा देख कर फिर से कहा कि हुजूर! यह हीरा नब्बे हजार से एक पाई भी ज्यादा का नहीं है। आप को हीरे की परख करनी हो तो आप एक चांदी की थाली और दस लकड़ियाँ मंगवाओ। राजा ने तुरन्त एक चांदी की थाली और दस लकड़ियां जोहरी को मंगवा कर दी। जोहरी ने हीरा चांदी की थाली में रखकर उस के चारों ओर लकड़ियाँ रखी। लकड़ियों की परछाई जाकर हीरे पर पड़ी। इसके बाद राजा से कहा कि हुजूर! अब आप देखिये कि लकड़ियों की परछाई एक जैसी है या कम ज्यादा है। राजा ने देखकर कहा कि लाली तो एक जैसी नजर आती है। जोहरी ने कहा कि एक बार फिर जांच कर देखिये। राजा ने फिर से जांचा। जांच कर देखने के पश्चात कहने लगा कि इस तरफ से हीरे में एक लकड़ी की दमक कुछ कम देखने में आ रही है। जोहरी कहने लगा हीरा बराबर एक लाख का था, किन्तु पच्चीस, तीस साल जमीन में दबे रहने के कारण थोड़ा पानी उतर गया है। इसी कारण इसका मोल दस हजार रूपये कम किया है। इतना सुन कर राजा बहुत खुश हुआ। जोहरी के गले में माला डालकर कहने लगा कि हे जोहरी! तेरी बुद्धि धन्य है जो परख सही की है। मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हुआ हूँ । तुम्हे मुँह मांगा इनाम देना चाहता हूँ । जो मांगों सो दूँ । जोहरी ने कहा मुझे और कुछ भी नही चाहिये केवल आपका आशीर्वाद चाहिये। राजा ने फिर कहा कि जोहरी! कुछ मांगो। परन्तु जोहरी ने फिर भी इंकार किया।

इस पर राजा ने मंत्री से पूछा कि तुम बताओं कि कौन सा इनाम दिया जाये। मंत्री सत्संगी और ज्ञानवान था। उसने कहा कि हे महाराज! मैं जो कहूँ वह आप नहीं दे तो? आप मालिक हैं आप जो चाहे दीजिये। इस पर राजा ने कहा कि मेरा यह वचन है कि तुम यदि

कहोंगे कि इसे सारा राज्य दे दो तो मैं अपना सारा राज्य देने के लिये भी तैयार हूँ । तुम संकोच मत करो, जो कहो सो देवें। मंत्री ने कहा अच्छी बात है तो फिर जल्दी से इसे फांसी दे दी जाये। यह सुनकर राजा कहने लगा कि आज तुमने भांग या शराब तो नही पी है? दिमाग तो ठिकाने है? तुम यह क्या कह रहे हो? जोहरी तो बड़े इनाम के योग्य है। इसको फांसी क्यों दी जाये? इस बेचारे ने कौनसा गुनाह किया है?

मंत्री ने कहा कि जोहरी सममुच फांसी के लायक है। परमात्मा ने इसे ऐसी तेज बुद्धि पत्थरों को परखने के लिये नहीं दी है। यह बुद्धि इसे परमात्मा ने आत्मा रूपी हीरे को परखने के लिय दी है। दुख की बात है कि जोहरी ने आत्मा रूपी हीरे की परख ही नहीं की है। इसलिये यह फांसी के लायक है। राजा चुप हो गया। जोहरी को यह सुनते ही वैराग्य हो गया और मंत्री के पैर पकड़ कर कहने लगा कि आप मेरे गुरू है। मैं वास्तव में फांसी के लायक हूँ । अब मैं इन पत्थरों को छोड़कर अपने आत्मा रूपी हीरे को पहचानने का यत्न करूंगा। अब कृपा कर उस आत्मा रूपी हीरे को पहचानने का रास्ता बताइये। आज के बाद जोहरी ने मन्त्री के परामर्श पर सन्तों से नाम लेकर उतराखण्ड के लिये प्रस्थान किया। राजा ने लड़के को नब्बे हजार देकर रवाना किया।

यह दृष्टान्त बताकर सत्गुरू महाराज जी कहने लगे कि परमात्मा ने इस मनुष्य को सभी जीवों से ज्यादा उत्तम बुद्धि आत्मा रूपी हीरे को परखने के लिये ही है। सो जिसने इस मानुष देह में परमात्मा का दर्शन नहीं किया है वह फांसी के लायक है। जिनको मनुष्य जन्म पाकर गुरू मिल गया उनका जन्म सफल हो गया लेकिन अफसोस है उन पर जिनकी सारी उमर गुजर गयी दुनिया के काम करते हुए, लेकिन अब तक रास्ता नहीं मिला। बस ऐसे ही दृष्टान्त सुनते ही स्वामी जी जैसे समाधि में समा जाते थे और परमात्मा रूपी हीरे को ढूँढने के लिये दिल दीवानी हो गई। आत्मा का दर्शन कर उसे परमात्मा से मिलाने का पुरूषार्थ चल रहा था। सांयकाल सत्संग और दिन में एकान्त में रहना। बिल्कुल चुपचाप रहते थे। मुख से कभी कभी यह अक्षर निकलते थे।

चुपकर चप म चोरि, बूटि अखियूँ ढकि कन पाणी पी म पेट भरि रहु अधूरो अनु

त हूअ जा मूरत मन तंहि जो मुशाहिदो माणीं।

(अर्थ)- चुप रहो होट मत हिलाओ, आँखे बंद करो, कान को ढक दो। पानी पी कर पेट मत भरो और अधूरा अन्न खाओ ताकि जो तस्वीर तेरे मन में है तुम उसके दर्शन कर सको।

सुबह उठकर भजन भी वैसे ही गाते थे जिन में केवल मालिक से मिलने की बात होती थी। सीप के समान उन्होंने उस स्वाति बून्द का आनन्द प्राप्त किया था। अब यह संसार उन्हें खारे सागर के समान लगने लगा था। जैसे सीप विशाल सागर में रहते हुए भी मुँह बहार निकालकर बरसात की उस मीठी बून्द को तरसती है, उसी प्रकार स्वामी जी के मन में परमात्मा को पाने के लिए एक प्यास पैदा हो गई थी जिस कारण खाना, पीना और नींद आदि सब छूट गए थे।

भजन

उथी साझुरि करि त सुजागो, छदे निन्ड कर याद धणी।

माणि मुहब्बत बारे भाग खे....

1. तो त दीहं विञायो घुमन्दे,

   पर्हिजो पाण कयुइ, कूड़ो माणु कयइ

   लातई मोह माया जे दाग खे।

2. हीअ उमिरि वञे थी हलन्दी,

   तिखी नहर नन्दीज जीअं वहन्दी

   ध्यान धारि सिघो, हलु पारि सिघो

लंघे छोह छोलियुनि जे छाग खे।

3. दिसु पहिर घड़ी, हीअ पलक वेई,

लदे लाक मझां हीअ खलक वेई

तुहिंजी अजुं सुभाणे थीन्दी जाणु पुजाणी

कीअं झागीन्दे हिन झाग खे।

4. हीअ माधव निन्ड निभागी

जपि नाम गुरूअ जो जागी

अविद्या मोह वारी कई तुरत जारी

वारि वारिस दे तूं वाग खे

अर्थ- प्रभात के समय तुम उठकर सुजाग हो जाओ, नींद को त्याग कर तुम परमात्मा को याद कर प्रेम की मंजिल का आनन्द उठाओ। तुमने घूमते हुए दिन और सोते हुए रात गंवाई। झूठे मान अभिमान में तुमने, मोह माया का अपने ऊपर दाग लगा लिया है।

यह उम्र तेज बहने वाली नदी के समान ढलती जा रही है। इसलिये शीघ्र ध्यान दो और इस संसार की तेज लहरें पार कर उस पार चल।

देखो! घड़ी और पल बन कर समय बीतता जा रहा है और इस जहान में से लोक पलायन करते जा रहे है। तेरी आज और कल भी जल्दी समाप्त हो जायेगी फिर तुम इस विशाल सागर को कैसे पार करोगे ?

स्वामी जी कहते है कि यह नींद अभागी है इसलिये तुम जागकर गुरू का नाम याद करो। मोह और अविद्या के जाल को हटाकर तुम अपनी मंजिल की ओर चलने की तैयारी करो।

बस दिन रात चिन्ता लगी हुई थी अपने आप को लायक बनाने की, गुरू करने की और नाम लेने की। यह आत्मा जन्म जन्मातर से ईश्वर के दर्शन की प्यासी है। उसे पाने के लिये सैकड़ों श्रंृगार करने पड़ेंगे जिस से कि परमात्मा प्रसन्न होकर हम पर कृपा दृष्टि डाले। परन्तु इस दुर्गम राह पर चलने के लिये मार्ग दर्शक की आवश्यकता है। कामिल गुरू को आवश्यकता है, गुरू की आवश्यकता है, गुरू बिन गत नही। इस संसार रूपी सागर को पार करने के लिये नाम रूपी नाव की आवश्यकता है जो हमें काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहिंकार रूपी मगरों से बचा कर प्रभू के पास पहँुचायेगी। अब प्रभू की ओर एक कदम आगे चलने लगे।

सबसे पहले श्री देवीदास से हारमोनियम सीखने लगे। श्री देवीदास भक्त राचूराम जी के मन्दिर में रोज़ आकर भजन गाते थे और उनके ही गाँव के थे। कुछ दिनों के बाद उनकी मित्रता संत मुरलीधर से हुई। संत मुरलीधर जी सत्गुरू स्वामी टेऊँराम जी महाराज के ही शिष्य थे और खाही गांव के निवासी थे। वे बड़े प्रेम से आकर श्री राचूरामजी के मन्दिर में भजन भाव करते थे। संत मुरलीधर जी हारमोनियम बजाने में बड़े निपुण थे और स्वामी से स्नेह होने के कारण बड़े चाव से उन्हें हारमोनियम सिखाने लगे। स्वामी जी के दिल में लगन थी सो थोड़े ही दिनों में सीख गए। बस बाजे सीखने की देर थी, सुबह शाम नियम से अपने चाचाजी श्री गंगाराम जी ने उनका खूब साथ दिया। परछाई की भांति उनके पीछे चलते रहे। यह जोड़ी तो कृष्ण सुधामे का उदाहरण बन गई। एक दूसरे की प्रेरणा से खूब अध्यात्मिक राह पर चले। उन्हें कहते थे चाचा जी आप तबला उठाओ तो मिलकर भजन गाये और फिर भजन गाना शुरू कर देते।

भजन (स्वर भैरवी)

कयां सिक सा शेवा मन्दिर में ठाकुर जी

रखी सिक सची मां, अन्दर में ठाकुर जी।

1. बिहारे वेदीअ ते, सींगारे संदुल ते

अतुर जे पाणअ सां, अन्दर में ठाकुर जे।

2. गुलनि ऐं फुलनि सां, मणियनि ऐं मोतियुनि मा

चन्दन जे तिलक सां, मन्दिर में ठाकुर जे।

3. मखण ऐ मलाई, पूरियूँ पेडा ठाहे

मिसरीअ मेवनि सां, मन्दिर में ठाकुर जे।

4. पसां शाल माधव, मन्दिर में हरिअ खे

सच्ची पूजा पलि, पलि, मन्दिर में ठाकुर जे।

(अर्थ)- मैं मन्दिर में आकर स्नेह से ठाकुर जी की सेवा करू। मैं अपनी अन्तर आत्मा में ठाकुर जी का प्रेम रखकर उनकी सेवा करूं। सबसे पहले मैं अपने ठाकुर जी को पूजा की वेदी पर बिठाकर उनको इतर के जल से नहिलाकर श्रंृगार कर उन्हें सजाऊंगा। उन पर फल फूल चढ़ा कर और मोतियों व जवाहरातों से उनका श्रंृगार कर उनको चन्दन का तिलक लगाऊंगा। उसके बाद मक्खन और मलाई लेकर, पूरी व पेड़े बनाकर, मिश्री और मेवे से उनको भोग लगाऊँगा। स्वामी जी कहते है कि ठाकुर जी की सच्चे मन से हर पल पूजा कर उनका दर्शन मन मन्दिर में करूं। यही मेरी अभिलाषा है।

इस प्रकार सुबह शाम बाजे का अभ्यास भी करते थे और भजन भी गाते थे। भजन बनाने की देन तो उनको जैसे जन्म से ही थी। भगवान के भक्तों को केवल पुरूषार्थ करने की देर है। उनके ऊपर प्रभू कृपा का हाथ तो सदैव रहता है। इस कारण उनको कोई भय नही। उनके ऊपर जल्दी माँ सरस्वती की कृपा हो गई जो कण्ठ में मधुरता आ गई। फिर साज़ तो संगीत की शोभा बढ़ाता है। उनका मन तो पहले ही परमात्मा के चरणों में लगा हुआ था सो इस विद्या ने तो उनके मन में मौज मचा दी। अब उनके पास एक ही कार्य था संत मुरलीधर के पास बाजे का अभ्यास करना, गाना और प्रभू को मनाना। क्योंकि भक्त के मन में तो केवल एक ही अभिलाषा होती है कि जो गुप्त है उसे प्रकट करूं। उसको कोई और चाह नही होती है सिवाय इसके कि किसी भी प्रकार अपने प्रीतम परमात्मा को किसी प्रकार राजी कर लँू। फिर उसका हृदय ही मन्दिर बन जाता है और भक्त करता है प्रार्थना। अन्दर भी प्रार्थना और बाहर भी प्रार्थना। प्रार्थना द्वारा ही वह प्राप्त करना चाहता है उस सत्य को। बाकि जगत के पदार्थ उसे नकली नज़र आते हैं। नकली पदार्थ उसके मन में पीड़ा पैदा करते हैं। भक्त की यात्रा विरह से ही आरम्भ होती है। सूफी संत दरियाह ने तो यहाँ तक कहा है कि यही वह पीड़ा है जो उसको परमात्मा तक पहुँचाती है। दर्शन की धुन उसके अन्दर से बजने लगती है यह संसार उन्हें बेजान बुत के समान लगने लगता है। संसार की कोई भी वस्तु उनको बहला नहीं सकती। उनकी लगन लगी हुई थी केवल गुरू द्वारा निराकार तक पहुँचने की। इसलिये पुकार एक पल के लिये भी धीमी नही पड़ी। उनके विरह में गाते रहते थे:-

भजन

श्याम मुहिंजे मन अन्दर, अखियुनि द्वारा आउ तूँ

1. अखिंयू तुहिंजे अचण लाई,

देवता दरवाजों आह

देर न करि, सेघु अची

वारि सणाओ वाउ तूँ............

2. दिल में तुहिंजे रहण संदो,

आद खां स्थान आह

प्रीत सां अचु पेरा भरे,

प्रीतम रखाई नांउ तूँ.........

3. खिलाय सुठा कर्म चङा

ऐं जो कयमि पूजा तुहिंजी

सांवरा सादी सूदी महमानी

मुंहिजी खाउ तूं.....

4. माधव मुंहिजी मिंथ हीअ,

ऐं अथई अरदास भी

मुहिंजे मंदायू न दिसी,

दातार वराइं दाउ तूँ।

(अर्थ)- स्वामी जी कहते है कि मेरे श्यामा। आँखों के द्वारा मेरे मन के अन्दर आओ। हे परमात्मा ये आंखें आपके आगमन का द्वार है। आप शीघ्र पधारो देर नहीं करो यह कृपा आप अवश्य करो।

आदि समय से आप के रहने का स्थान यह हृदय है। मेरे प्रेम के खातिर आप मेरे पास अवश्य पधारे क्योंकि इस प्रेम के खातिर ही आप का नाम प्रीतम रखा गया है।

हे परमात्मा! मेरे विचार शुद्ध है और मेरे कर्म शुभ है और मैने आप की पूजा बड़ी श्रद्धा से की है इसलिये हे सांवरे! मेरा यह सादगीपूर्ण आतिथ्य स्वीकार करो। स्वामी जी कहते है कि मेरी यह विनय है यह अरदास है कि मेरे बुराईयों को न देख कर मेरे ऊपर अपनी कृपा की दृष्टि रखो।

परमात्मा को आठों पहर यह प्रार्थना करते रहते थे कि हे भगवान! आप मेरे ऊपर यह कृपा करना कि मैं एक पल भी आप के नाम से दूर नही र हूँ। उनके हृदय में विरह की चिंगारी सुलग चुकी थी।

''विरह जगावे दर्द को, दर्द जगावे जीव

जीव जगावे सुरत को पंच पुकारे पीव,''

साधक जैसे जैसे उस परमात्मा की ओर कदम बढ़ाता है वैसे वैसे वह उसको अपने निकट पाता है। परमात्मा ने तो अपने मुख से कहा है:-

तुम आओ एक पग तो मैं पग आऊं साठ,

तुम लकड़ी काठ की तो मैं लोहे की लाठ।

इस प्रकार हारमोनियम की शिक्षा के साथ साथ स्वामजी जी एक एक कदम प्रीतम परमात्मा के निकट जा रहे थे। अभी बाजे की शिक्षा पूरी ही की थी कि एक दिन बन्ध गाँव में ऋषिकेश के दो संतों का पदापर्ण हुआ। वे संत भक्त राचूराम जी के मन्दिर में आकर ठहरे। वहाँ पर स्वामी जी की उन संतों से भेंट हुई। उन संतों को उस आध्यात्मिक राह का मार्गदर्शन समझ कर अपने घर ले आये और उनकी श्रद्धा से खूब सेवा की। स्वामी जी में पात्रता देखकर उन संतों ने उन्हें योग साधना की शिक्षा दी। उन्हें हवन, यज्ञ, व्रत और नियम आदि का महत्व बताया। स्वामी जी यह सब बड़ी लग्न से करने लगे। उनकी इतनी रूचि देखकर

उनको कहा कि हम वहां से कुछ पुस्तकें भेजेंगे जिनके पढ़ने से तथा उनके द्वारा योग साधना कर सकते हैं। थोड़े दिनों के पश्चात उन संतों द्वारा भेजी गई पुस्तकें उन्हें प्राप्त हो गई। अब उनका सम्पूर्ण ध्यान उन पुस्तकों को पढ़ने में लग गया। पढ़ पढ़ कर घर में ही हवन, यज्ञ करने लगे और उसके साथ साथ व्रत भी रखने लगे। एकादशी, सत्य नारायण, ग्यारवे इक्कीसवें और चालीसे के व्रत भी रखे। जब चालीसे का व्रत रखा तब उनकी हालत बहुत नाजुक हो गई। घरवालों ने उन्हें समझाया किन्तु वे अपनी प्रतिज्ञा पर बिल्कुल अडिग रहे। आखिर जब हालत बिल्कुल कमजोर हो गई तब घर वाले यह सोच कर भक्त राचूराम जी को लेकर आये कि उनका भक्त राचूराम जी में विश्वास है शायद उनका कहा मानकर व्रत खोल दे। भक्त जी आये और उनका यह हाल देकर समझाने लगे कि व्रत अपने सामर्थ्य के अनुसार रखना चाहिये। स्वामी जी ने उनको कहा कि व्रत रखने से उनकी आत्मा को बल मिल रहा है। जैसे जैसे शरीर निर्बल हो रहा है वैसे वैसे आत्मा का बल बढ़ रहा है। उनको किसी प्रकार का कष्ट नही हो रहा है। उल्टा उनको आनन्द की प्राप्ति हो रही है। कहने लगे कि परमात्मा को प्राप्त करने के लिये तपस्या तो करनी पड़ेगी और शरीर का कष्ट तो देना पड़ेगा। उनका इस प्रकार दृढ़ निश्चय और आत्म विश्वास देखकर भक्त राचूराम जी ने उन्हें सफलता पूर्वक निविध्न व्रत पूर्ण करने का आशीर्वाद दी और प्रतिदिन सायंकाल नियम से उन्हें देखकर दवा देने लगे। जैसे जैसे समय गुजरता गया स्वामी जी का शरीर दुबला होता गया परन्तु उनके चेहरे का तेज बढ़ता गया। गाँव के श्रद्धालु जन उनके दर्शन के लिये उमड़ पड़े। अब वहां नियम से कीर्तन और भजन होने लगा। घर का वातावरण भक्ति के सुगन्ध से महक गया। भक्त राचूराम जी ने बड़ी धूम धाम से उनका चालीसे का व्रत हवन और यज्ञ द्वारा खुलवाया।

व्रत के साथ साथ स्वामी जी ध्यान व साधना भी करने लगे। ध्यान करने के लिये उनको एकान्त की आवश्यकता प्रतीत होने लगी सो घर में एक छः फुट गहरा गड्डा खोदा। उस गड्डे में छिपकर ध्यान करते थे और घण्टों इस प्रकार ध्यान में रहने लगे। अधिकतर वे

रात्रि को ही ध्यान में बैठते थे, क्योंकि उनकी यह धारणा थी कि जब दुनिया सोती है तब परमात्मा जागते है और यह समय अपने प्रीतम को मनाने के लिये अति उत्तम है। रात्रि में जब वे गड्डे में ध्यान के लिये उतरते थे तब चाचाजी श्री गंगाराज जी को कहकर जाते कि ध्यान रखे कहीं कोई जानवर उस गड्डे में नहीं उतर आए। इस प्रकार साधना करके अपने आप को पक्का कर रहे थे। सुबह होते ही गड्डे से बाहर निकल श्री राचूराम जी के मन्दिर में जाकर योगाभ्यास करते थे। अभ्यास करते करते उन पर प्रयोग भी करते थे। और उनके पूर्णता का परीक्षण भी करते थे। इस प्रकार दिन प्रति दिन दुनिया से वैराग्य लेते चले गये। परन्तु उनके परिवार वालों को ये सब बातें पसंद नही थी। उनके दिल में एक भय बैठ गया कि कहीं इस कच्ची उमर में वैरागी बनकर कहीं घर न त्याग देवे सो उनको समझाकर कहने लगे कि माधव! अब इन योगों को छोड़ दो। आखिर आप ने क्या सोचा है? आप घर की ओर ध्यान क्यों नही देते? आप की एक छोटी बहन भी है उनके प्रति भी आप का कर्त्तव्य है। वहाँ आप के पिता दुकान पर अकेले ही पिस रहे है आपको उनका भी मददघार बनना चाहिये। आप तो केवल हवन और यज्ञ में ही लीन हो रहे हो जिसका नतीजा आप देख रहे है, क्या निकला है। चारों और केवल सांप बिच्छू नजर आ रहे है। कहां है वे योगियों की पुस्तकें? वे सब हमें दे दीजिये। ऐसा कहते ही उन से सब पुस्तकें लेकर छिपा दी और कहने लगे कि लो यह घोड़ी और हमारे साथ खेत पर चलो। ये शब्द सुनकर उनके मन में बेचैनी मच गई। और अन्दर से पीड़ा होने लगी और कहने लगे राम की रहा से मुझ कोई नही हटा सकता। यह दुनिया क्षण भंगुर है। प्रिय माताजी गई, प्यारे भाई गये, अपने को फिर क्या रहना है? अब तो केवल भजना ही भगवान को है। परिवार के लोगों को इस शब्द द्वारा उत्तर दिया:

भजन

वञे थी वञे थी वञे थी हली।

हयाती हथानि मां वञे थी हली।

1. आया साणु साथी से कादे विया

अञा ता न दिल आ पापिन खा पली।

2. कुठा काल केई सर्वे लिकल से

समुझी कीन थो काल अहे बली।

3. परे कुटम्ब तोखां भजे पियो भजे

भली तो उन्हनि जी छो दोरी झली।

4. ईंदो मौत माधव जदहिं तो मथाँ

छुटण जी सुझे थी का तोखे गली।

वञे थी वञे थी वञे थी हली

हयाती हथानि मां वञे थी हली।

(अर्थ)- यह जीवन अपने से निकल कर जा रही है। जो साथी तुम्हारे साथ आये थे वे सब कहां गये? तुम्हें भी एक दिन यहां से जाना है परन्तु तुमने अभी तक पापों से अपनी दिल को नहीं हटाया है। काल ने अनेकों को अपना शिकार बना लिया चाहे वे कहीं भी छिपे थे। फिर भी तुम नहीं समझ रहे हो कि काल बड़ा बलवान है। जो कुटम्ब तुम से दूर जा रहा है, तुमने उसकी डोरी क्यों पकड़ी है। स्वामी जी कहते हैं जब तुम्हारे ऊपर मौत आयेगी तब तुम्हें उससे छूटने के लिए कोई भी गली नहीं मिलेगी इसलिये सोचा कि यह जिन्दगी हाथों से निकली जा रही है।

घर वालों के ऐसे व्यवहार ने उनके दिल को चोट पहँुचाई, उनका मन घर या संसार के कार्य में लग नही रहा था। उनके मन में एक धुन थी, परमात्मा के ध्यान और स्मरण की, प्रभू के पाने की। वे योग अभ्यास द्वारा दिल के दरवाजे में अपने प्रीतम के दर्शन करना

चाहते थे। जब घर वालों ने उस मंजिल की ओर जाने वाली राह को बंद करने की कौशिश की तो उनका मन उदास हो गया। वैसे भी विवशता के कारण घर में रह रहे थे। अब उन्हें अवसर मिल गया सुबह होते ही जैसे पिताजी दुकान पर और चाचाजी अपने काम पर रवाना हुए, तो खुद भी जंगल की राह पकड़ ली। गाँव के बाहर किसी सुनसान स्थान पर एक पेड़ पर चढ़ कर आसन्न जमा कर बैठ गये। संध्या हो गई और घर से पूछताछ होने लगी कि माधव अभी तक घर क्यों नही आया। पता नहीं किस तरफ निकल गया है। उनके चाचा जी कहने लगे कि आज सत्संग में भी नहीं आया था। रात्रि को जब पिताजी आये तब आकर पूछा, मूली! आज माधव नजर नही आ रहा है? उनको बताया गया कि जैसे आप घर से निकले वैसे ही वह भी निकल गये। सो अब तक उनका कोई पता नही है। उनके पिताजी अपने भाई को लेकर उनकी तलाश में निकले। ढँूढते हुए उस स्थान पर आकर निकले जहाँ स्वामी जी भजन गा रहे थे:-

भजन

मूँखे प्रभू तुहिंजो वसीलो आ

मूँखे प्रभू तहिंजो वसीलो आ

1. प्रभू माया तुहिंजो सताए

जीव खे फंद में फासाए

मूँखे तो बिना बियो ना हीलो आ ....

2. जगतु जेकी ही दिसां थो

पंहिजो अखियुनि सां त पसां थो

सो फानी कुटुम्ब कबीलो आ.....

3. भाउर भाईटिया मिट मिड़ेइ

सुख में संगी आहिनि सभेई

ही संग दुनियां जो डेलो आ......

4. माधव ते तूँ महिर कजांइ

अन्त समे में सहाइ थिंजाई

इहो दातर तुंहिज़ो देलो आ....

(अर्थ) - स्वामी जी कहते है कि हे प्रभू मुझे तुम्हारा ही सहारा है। हे प्रभू! यह तुम्हारी माया मनुष्य को अपने फंदे में फंसा कर बहुत सताती है। मुझे आपके अतिरिक्त और कोई सहारा नहीं है।

यह जगत जिसे मैं आंखों से देख रहा हूँ और यह कुटुम्ब परिवार सब नश्वर है।

ये भाई भतीजे, कुटम्ब कबीला सब सुख के साथी है। दु:ख में कोई किसी का नहीं है। यह दुनिया का साथ अस्थाई है।

स्वामी जी परमात्मा से यह प्रार्थना करते हे प्रभू! तुम अपनी कृपा मुझ पर करना। अन्त समय मेरी सहायता करना क्योंकि मुझे तो केवल आप का ही भरोसा है।

पिताजी ने पुत्र से बड़े प्रेम से कहा कि मेरे बेटे! घर चलो। इस प्रकार घर नही छोड़ा करते। यह बात आपको शोभा नहीं देती है। चारों ओर अंधकार लगा हुआ है। कोई भी बस्ती निकट नहीं। इस जंगल में तुम रात कैसे बिताओगे? रात्रि में अकेले तुम्हें डर नही लगेगा? तुम समझदार बनो, नीचे आओ तो घर चले। घर पर तुम्हारे बिना सब परेशान है सब खाना पीना ही भूल गऐ हैं। तुम्हारी ये वैराग्य वाली बातें सुनकर हमारा तो मन ही उलझ गया है। बेटे! तुम्हे यदि भगवान का भजन करना है तो घर चल कर करो। उस पर उत्तर दिया कि घर पर मन नही लगता है। भजन करने के लिये मुझे एकान्त और शान्ति चाहिये। एकान्त में ही

भगवान का भजन अच्छी तरह से कर सकते हैं। साधु सन्त भी इसी लिए एकान्त और शांति पसन्द करते है। पिताजी ने समझाते हुए कहा कि बेटे साधु संतों का घर बार नही होता है। इसलिये वे जंगल में रहते है और उनकी अवस्था भी बड़ी होती है। हम बड़ों को होते हुए तुम वैराग्य कैसे लोगे? वैराग्य लेने की आयु तो हमारी है। इस पर स्वामी जी ने कहा कि भक्त ध्रुव ने बाल्य अवस्था में जंगल में जाकर तपस्या की और आखिर भगवान के दर्शन किए, तो फिर मुझे क्या डर। आप मेरी चिन्ता नहीं करें और घर लौट जाएं। मैं तो कदाचित घर नही लौटूंगा विनम्रता और विनीत भाव से उन्हें निवेदन किया कि मुझे अकेला ही रहने दो और शब्द कहने लगे।

भजन

मूँखे रहिणी खास अकेली आहे

मूँखे रहिणो खास अकेलों आहे

1. अकेलो वेही हर खे ध्याए

श्यमा सुन्दर जो दर्शन पाए

मूँखे करिणी वक्त सुहेलो आहे.....

2. अकेलो साधु संत रहन था।

आत्म पद में पाण पहन था।

मूँखे मिलण सन्दो ही वेलो आहे......

3. अकेलो ईशा आहे असुल खां

धार थिया आहे जीउ नसुल खां

मूँखे करिणी तेहिं सां मेलो आहे....

4. अकेलो माधव वेही ओम में

सुरत लगाए पंहिंजे सोह में

मूँखे रूह दिनों रेलो आहे.....

अर्थ:- स्वामी जी ने इस भजन में कहा है कि मुझे अकेला ही रहना है। अकेला रहकर मुझे प्रभू का स्मरण करना है और श्याम सुन्दर का दर्शन कर अपना जीवन सफल बनाना है।

साधु सन्त अकेले रहकर आत्मा में गहरा प्रवेश कर आत्म पद प्राप्त करते है। मेरे लिये यह समय परमात्मा में मिलने का है, इसलिये मुझे अकेला रहना है।

आदि से ईश्वर एक है और अकेला है। यह आत्मा उस परमात्मा का अंश है और वह उस परमात्मा से जुदा हो गई है मुझे अपनी आत्मा को उस परमात्मा से मिलाना है।

स्वामी जी कहते है कि अकेले रहकर मुझे ओम का उच्चारण कर अपनी सुरत सोहं से लगानी है। यही मेरी आत्मा की पुकार है इसलिये मुझे खास अकेला रहना है।

पिता साहब और चाचाजी ने उन्हें समझाने की भरसक कोशिश की परन्तु स्वामी जी तो बचपन से हठयोगी थे। वे अपने हठ पर बने रहे। उन्होंने उनकी एक नही सुनी और अपने प्रण पर कायम रहे। आखिर आधी रात को दोनों जने निराश होकर लौट आये। परन्तु पिताजी के मन में गहरी चिन्ता थी। आंखों से नीद उड़ गई। आठों पहर चिन्ता थी कि उस बीहड़ जंगल में यह छोटा बालक कैसे रात काटेगा? रात्रि के समय सांप, बिच्छू और जंगली जानकर निकलकर बाहर आते है। उन्हें देख कर बड़ों बड़ों के दिल दहल जाते है सो छोटे से

बाल की क्या मजाल है। दूसरी ओर स्वामी जी को किस प्रकार कोई भी चिन्ता नही थी और चिन्ता रहती भी क्यों कर -

''चाह मिटी चिंता मिटी मनवा बे परवाह,

जांको कुछ न चाहिये सो शाहन का शाह।''

उनका ईश्वर में अटल विश्वास, गहरी वैराग्य वृत्ति एवं दृढ़ इच्छा शक्ति जैसे उन्हें अपने ध्येय तक पहँुचने में सहायता कर रही थी। दिल भगवान के दर्शन के लिये दीवानी थी। उनको बार बार विनती कर रहे थे:-

भजन

दर्शन देव पसाइ पल खिन में

दर्शन देव पसाइ पल खिन में

1. दर्शन दे तूँ श्याम मुरारी

देरि न करि तूँ बांका बिहारी

मन मोहन आ गिरिवर धारी

आहे असां जे अखियुनि में

2. माधव मन में प्यास पसण जी

मन मोहन तुंहिजे मुख पसण जी

देरि छदे करि सेघ अचण जी

साम्हूँ बीहु त सदन में।

अर्थ:- स्वामी जी परमात्मा से निवेदन करते है कि अपना दर्शन क्षण पल में दो। हे श्याम मुरारी! बांके बिहारी देर मत करो जल्दी दर्शन दो। मेरे परमात्मा मन मोहन गिरिवर धारी हमारी आँखों में है।

स्वामी जी कहते है कि हे प्रभु। मुझे दर्शन की प्यास है, मैं आप का दर्शन करना चाहता हूँ इसलिये आप देर नही करो जल्दी आकर मेरे मन मन्दिर में बिराजमान हो जाओ।

गाते गाते वे अपनी सुधबुध भूल जाते थे। भूख प्यास का तो उन्हें पता नही नही था। ऐसी कठिन तपस्या ने जैसे उनकी भूख प्यास को ही मार दिया हो। एक धुन थी परमात्मा के दर्शन की। परमात्मा के दर्शन के लिये दिल, बिना जल मछली की तरह तड़प रही थी। उधर उनके पिता जी ने नेत्रों में नींद ही नहीं थी। उनको चिन्ता लगी हुई थी कि बिना खाये पिये यह नाजुक बालक सुनसान जंगल में कैसे रहेगा। बिना अन्न जन के उसकी हालत कैसी होगी? आखिर सुपुत्री मूली को कहा कि वह हमारी तो बिल्कुल नही सुनता है, हो सकता है छोटी बहन समझ कर तुम्हारा कहना मान ले। तुम दादी जी के साथ जाकर उसे मनाओ। बहन मूली जी अब कुछ समझदार हुई थी, अपने प्रिय भाई के लिये भोजन लेकर दादी जी को अपने साथ लेकर आकर वहां पहँुची जहाँ स्वामी जी तपस्या कर रहे थे। विनीत भाव से उनसे कहा कि भैया! आप भली घर मत चलो परन्तु इस छोटी बहन से भोजन लेकर तो खाओ, आप को भूख नहीं लगी होगी? उत्तर दिया:-

''सांचे नाम की लागी भूख.''

बाकी इस भोजन की तो भूख नही लगी है। खाना वापस ले जाओ। दादीजी को कहने लगे माँ! आप मेरे लिये कोई चिन्ता मत करो, जो ईश्वर सबको रोजी देता है और पालता है, वह मुझे भी अपने आप पालेगा। ऐसे कहकर इस भजन द्वारा दादी जी को समझाने लगे।

भजन (स्वर फलो)

प्रभू तूँ पालीं, पालीं सभखे प्यार सां

1. जा उपायल खंलिक सारी, प्रभु हिन संसार में

सभ खे रोजी थो रसाई, जल थल परबत $गार में

पंहिजी दीं लाली लाली सभखे प्यार सां।

2. इंसान जातीअ में बि अकसर, के वणिया बेकार में

पखी पशु ऐं बुखायल रहनि आज़ार में

रोज़ी दीं वाली वाली सभ खे प्यार सां।

3. जे मणियां माधव बणिया, साहिब तुर्हिजे सार सां

रात दीहं तिन खे, तूँ पालीं प्रभु पंहिजे प्यार सां

पंहिजीं दीं माली माली, सभ खे प्यार सां।

(अर्थ) :- स्वामी जी ने इस भजन में कहा कि हे प्रभु! आप सब के पालन हार है और आप सबको बड़े प्यार से पालते है। हे प्रभु! इस संसार में जो भी जीव उत्पन्न हुए है उन सबको आप थल पर जल में पहाड़ पर या गुफा में अपनी रोजी पहँुचाते हो। आपने सब को बड़े प्यार से अपनी खुशबू प्रदान की है।

इंसान जाति में कुछ लोग बेकार पैदा हुए हैं, जिनके कारण पक्षी, पशु और भूखे लोग परेशान हैं। परन्तु हे मालिक! तुम सबको बड़े प्यार से रोजी पहँुचाते हो।

स्वामी जी कहते है कि जो लोग अपनी कृपा से इस संसार के सरमौर बने है, उन सब को रात दिन अपने प्यार से आप पाल रहे हैं। आप सब को बड़े प्यार से खूब खज़ाने प्रदान करते हैं।

इतनी अनमोल भक्ति ने उनके आत्मा को वह बल प्रदान कर दिया था कि उनको किसी की भी खबर नहीं रहती थी। आखिर बहन निराश होकर वह खाना लेकर घर लौट आती थी। इस प्रकार व्रत रख कर राम को रिझाते हुए आकर एक महीना पूरा हुआ।

तपस्या करते करते स्वामी जी परमात्मा के निकट होते जा रहे थे। प्रभात के समय प्रकाश होने से पूर्व ही पास वाले कुए में स्नान कर अंचली लेकर भक्ति करने बैठ जाते थे। वही लगन लगी हुई थी प्रभु को पाने की, उनको नशा चढ़ा हुआ था नाम का। ये ऐसी खुमारी थी जो आसानी से उतरने वाली नहीं थी।

'' भांग बसोई सुरा पान, उतर जाए प्रभात,

नाम खुमारी नानका, चढ़ी रहे दिन रात।''

उनको न घर याद था, नहीं घर वाले याद थे, न ही फिर संसार का ही ध्यान था। परन्तु घर वाले कैसे मोह निकाल सकते थे? पिता जी ने सोचा लड़का हाथों से निकला जा रहा है। इस प्रकार छोड़ देने से बात बनेगी नहीं। खुद ने तो नाम के नशे में सब कुछ भुला दिया है। सो पड़ौस वालों और भाईयों से राय लेकर और उनको साथ लेकर निकल पड़े माधव को मनाने। रास्ते में कहते आ रहे थे एक ही लाल है वह भी लग गया परमात्मा की राह में। क्या करें, प्रभू कोई सद्बुद्वि देवे जो हमारी बात मान कर वापस घर आ जाए तो ऐसा काम खुलवा दे ताकि उस राह से मन हट जाए या पढ़ने की राह पर चलेगा तो विद्वान बन सकेगा। इस प्रकार विचार विमर्श करते करते आकर उनके पास पहँुचे। विनय अनुनय कर उन्हें घर ले आये। घर पहुँच कर स्वामी जी बिल्कुल शान्त रहने लगे। दो चार दिन बीतने के बाद उनसे प्यार से कहने लगे कि ''बेटे! आप भली भजन भी करें, हम उसके नाम जपने में मना नही करेंगे यदि

साथ साथ स्कूल की पढ़ाई भी जारी रखो तो अच्छा होगा। क्योंकि विद्या महान बना कर राह रोशन करती है। घर वालों को क्या पता कि इस भक्ति में माधव को कौनसी मंजिल पर पहँुचाया है। घर वाले उन्हें बार बार विद्या अध्ययन करने की बात दोहराते थे कि बेटे चाह से विद्या ग्रहण कर जग में अपना शान बढ़ाओं। क्योंकि विद्या इंसान को नेक बनाती है, पाप छुड़ा कर धर्म बढ़ाती है और इंसान को विवेकशील बनाती है। विद्या से ज्ञान बढ़ता है। मान शान बढ़ता है और अनुभव द्वारा आंखें खोल कर शांति पद प्राप्त होता है, इसलिये मेरे माधव तुम हमारा कहना मान कर पाठशाला जाओ और वहां जाकर विद्या ग्रहण करो।''

जब उन्होंने देखा कि पिता जी और चाचा साहब किताबी ज्ञान प्राप्त करने के लिये अधिक आग्रह कर रहे है, तब उनको स्पष्ट मना कर दिया और उनको कहा कि मुझे राम नाम के अतिरिक्त कुछ भी नही भाता है। और किसी शिक्षा की मुझे चाह नहीं है। यह कह कर यह भजन सुनाया।

भजन (स्वर टोरी)

मूँखे इल्म पढ़ण जो चाहु नाहे

मूँखे दिल में प्रभूअ जो घाउ आहे।

1. नकी इल्म सन्दो मूंखे एर अचे,

न की पढ़ण परिझण जो पेर अचे।

न की कलम हलाइण जो फेर अचे

मूंखे राम सन्दो हिकु राउ आहे।

2. मूँ खे श्याम सुन्दर जो प्यार खपे

नकी इल्म अखर जो आर खपे।

नकी घरूतरू ऐं वहिंवार खपे

मूंखे तन में प्रभूअ जो ताउ खपे।

3. सच्चो इल्प प्रभूअ खे पाइण जो

पको प्रेम प्रभूअ खे लाइण जो

पाए प्रेम तोड़ि निभाइण जो

ही याद करिणी सुभाउ आहे।

4. आहे माधव प्रेम जो घाउ जिते

आहे इल्म संदो न समाउ उते

आहे दुनिया जो न परलाउ तिते

मूँखे लंव लंव में सचो लाउ खपे।

(अर्थ)- स्वामी जी इस भजन में कहते है कि मेरे दिल में पढ़ने का शौक नही है परन्तु मेरे दिल में परमात्मा के विरह का घाव है। मुझे इस लोकिक दुनियां का इल्म नहीं है। न ही इस दुनियां का पढ़ना और समझता आता है। मेरे को कलम चलाने का फेर भी नहीं आता है। मेरे को केवल 'राम' का 'र' ही आता है।

मेरे को श्याम सुन्दर का प्यार चाहिये, और दूसरा इसके अतिरिक्त इल्म और अकल नहीं चाहिए। मुझे घर परिवार और अन्य व्यवहार नहीं चाहिये, अपने मन में केवल प्रभू का प्रेम चाहिये।

मुझे वह सच्चा इल्म चाहिये जिससे प्रभू को पा सकूं और उसके साथ नाता जोड़ सकूं और जोड़ने के पश्चात अन्त तक निभा सकूं । इसी स्वभाव को मुझे याद करना है।

स्वामी जी कहते है कि जहां प्रेम का घाव होता है, वहां सांसारिक इल्म का स्थान नहीं है। वहां पर इस दुनियां की आवाज नहीं पहुंचती है। मेरे रोम में प्रभू प्रेम बस जाए यही मेरी मनोकामना है।

घर वालों ने हजार प्रयत्न किये कि माधव पाठशाला जाकर विद्या प्राप्त करे। परन्तु माधव के अन्तर आत्मा में सच्ची जोत जगी थी, जिसके प्रकाश में वे परमात्मा को खोजना चाहते थे। सो उनको इन अक्षरों की क्या आवश्यकता थी। जब घर वालों ने देखा कि माधव पाठशाला जाने के लिये राजी नहीं हो रहे है तो सोचा कि क्यों न उन्हें किसी व्यवसाय में लगाया जाये ताकि मन किसी दूसरी ओर लग जाये। अब उनको समझाने लगे कि पिताजी दुकान पर अकेले है, तुम जवान सुपुत्र हो, पिताजी के सहायक बनो, दुकान पर जाकर व्यवसाय में उनकी मदद करो। परन्तु उनके हृदय में वैराग्य की चिंगारी सुलग रही थी सो राम के अतिरिक्त उन्हें कुछ भी नही सूझता था। सभी के कहने पर वे जाकर दुकान पर बैठने लगे किन्तु उनका मन इस झूठे व्यापार में नहीं लगा। वे व्यापार अवश्य करना चाहते थे किन्तु वह व्यापार कोई दूसरा था। उस व्यापार को उन्होंने इस प्रकार समझाया है।

भजन (स्वर टोरी)

मूँखे नाम सन्दो त वापार खेप,

मूँखे बियो न कोई वहिंवार खेप।

1. सच्चो नाम संदो वापार आहे

जेको कोट जन्म जा कष्ट लाहे।

जंहि में लाभ घणो दुख कोबि नाहे,

मूखें सुखनि सन्दो ही सार खपे।

2. कढी नाम सन्दी त हटरीअ खे

तोरे विवेक सन्दी त तकड़ीअ खे।

रखी भाव प्रेम जी भगतीअ खे

मूँखे प्रेम सन्दो प्रचार खपे।

3. सच्चो नाम सन्दो वापार वटियां

जंहि मा नाम सच्चे जी मूरी मटियाँ

सो पाए जुटे ऐ बियनि खे लुटायां

मूँखे भगितीअ जो त भंडार खपे।

4. सच्चो माधव सो वापार करियां

जंहिं मां कोट जन्म जा कष्ट कटियां

हिन लोक सुखी परलोक थियां

मूँखे वणिज इहो वापार खपे।

(अर्थ)- इस भजन में स्वामी जी ने कहा कि मुझे राम के सच्चे व्यापार के अतिरिक्त और कोई भी व्यवहार नही करना है। नाम का व्यापार सच्चा व्यापार है जिससे कोटि जन्मों के कष्ट कट जाते है। इसमें बहुत लाभ है और कोई भी दुःख नही है। मुझे यही सुखों का सार चाहिये।

मैं राम नाम की दुकान को खोलकर और विवेक की तराजू में तोलकर, प्रेम भाव की भक्ति को मन में रखकर मैं प्रेम का प्रचार करना चाहता हूँ । मैं सच्चे नाम का व्यापार कर उसमें से राम की पूंजी कमाना चाहता हूँ , जिसे खुद लूट कर और औरों पर लुटाना चाहता हूँ । मुझे भक्ति का ही भंडार चाहिये।

स्वामी जी कहते है कि मैं वह सच्चा व्यापार करना चाहता हूँ जिससे कोटि जन्मों के कष्ट कट जावें। जिससे इस लोक में सुखी रहकर परलोक को भी सुखी बनाऊँ, मुझे वही व्यापार चाहिये।

इस प्रकार अपने घर वालों को समझाकर कहने लगे कि आपको मेरे से मोह हटा लेना चाहिये और गोपीचन्द की माता जी जैसा ज्ञान ग्रहण करना चाहिये। माता होकर उसमें मोह ममता का त्याग किया और एक ही इकलौते पुत्र को इस झूठे संसार को त्यागकर सच्चे सुख को प्राप्त करने की राह दिखाई। यह कहकर उनको गोपीचन्द की कहानी बताने लगे कि एक दिन गोपीचन्द स्नान कर रहा था। माताजी की नजर उसके सुन्दर सुडौल शरीर पर पड़ी। पिता जैसा उसका खूबसूरत शरीर देखकर उससे कहने लगी कि बेटे! यह तुम्हारा शरीर कितना सुन्दर है। आपके पिताजी का शरीर भी इतना ही सुन्दर था। परन्तु वह एक दिन जल कर खाक हो गया और तुम्हारा यह सुन्दर शरीर भी तुम्हारे पिता के समान जल कर खाक में मिल जायेगा। फिर तुम इस नाशवान शरीर का श्रंृगार क्यों करते हो? यह दुनियां क्षण भंगुर है। एक दिन सब कुछ छोड़ना पड़ेगा। फिर इस स्वप्न के समान संसार में मोह क्यों लगाना चाहिये। तुम ये रेशम के बहुमूल्य वस्त्र उतारो और कफनी ओढ़कर सच्चे सुख की तलाश करो। यह कहकर उन्हें यह भजन सुनाने लगे :-

भजन (स्वर टोली)

सुणु बच्चा गोपीचन्उ, छो थो करीं सींगर तूँ

जाणु दुनियां हीअ फानी, झूठो सभि वहिंकर तूँ।

1. सोन जहिड़ी देहि सुन्दर, तहिंजे बि पिता सन्दी,

साबि जली खाकि थी वेई, दिसु करे वीचार तूँ....

2. राजु राणियूँ महल माड़ियूँ , कीन के संग में हलनि

पोई पाई थो अञा भी, छो गले में हारू तूँ.....

3. थी चवाँ मां हाणि तोखे, लाहि रेशम जा वगा तूँ,

पाई कुण्डल, पहिरि कफिनी, विझु मथे में छारि तूँ....

3. मञु चयो मुहिंजा बच्चा, तूँ वठु फकीरी वेस खे,

उथु उथी सेघु माधव, करि इहाई कारि तूँ...

अर्थ :- माताजी अपने इकलौते पुत्र राजा गोपी चन्द का इस वैराग्य मय भजन द्वारा शिक्षा देती है कि बेटे गोपीचन्द तुम श्रंृगार क्यों करते हो। इस दुनिया को क्षण भंगुर समझो और यहां का सब व्यवहार झूठा है। तुम विचार करके देखों कि तुम्हारे पिताजी की देह भी तुम्हारे देह के समान सुन्दर थी किन्तु वह भी जल कर राख हो गई।

यह राज्य, रानियां और महल तुम्हारे साथ नही जायेंगे फिर तुम गले में ये हार क्यों पहनते हो।

माताजी अपने पुत्र से कहती है कि ये रेशमी वस्त्र उतार कफनी पहनो और कानों में वैरागियों के कुण्डल डाल कर सिर में राख लगा लो।

स्वामी जी इस भजन में कहते है कि मेरा कहना मानो और फकीरी का वेस धारण कर और देर नही करो जल्दी जैसे में कहता हूँ वैसे करो।

पिताजी को यह भजन सुना कर कहने लगे कि हम सब की देह एक दिन जल कर राख हो जायेगी। फिर आपने इस देह के साथ मोह क्यों रखा है। हमें गोपीचन्द के तहत अपने देह को मोह त्यागना चाहिये। इसी में समझदारी है। अब मेरे को छोड़ो तो जाकर अपने गुरू को भक्त राचूराम को दरबार में मनाऊं। इस प्राकर सब को समझा कर जा भक्त राचूराम की दरबार में रहने लगे। दरबार में रहकर उन्होंने हिन्दी और गुरूमुखी का अभ्यास आरम्भ किया। दिन में विद्या अध्ययन करते थे और रात्रि को योगाभ्यास और साधना करते थे। इस प्रकार साधना करते करते उनको सिद्धि प्राप्ति होती गई। जैसे त्रिकालदर्शी बन गए। महर्षि वाल्मीकी, रामायण के रचयिता ने दस हजार वर्ष पूर्व श्री रामचन्द्र भगवान के अवतार धारणा की भविष्यवाणी की थी, इसी प्रकार शायद उनको भी यह पूर्व आभास हो गया था कि देश का विभाजन होगा हम सबको पलायन कर भारत चलना पड़ेगा जहाँ हिन्दी भाषा हमारा सहारा बनेगी। तो खूब मन लगाकर हिन्दी सीखने लगे। न केवल स्वयं ने हिन्दी में रूचि ली किन्तु औरों को भी हिन्दी सीखने के लिये प्रोत्साहित करने लगे। उस समय हिन्दी के महत्व पर एक भजन लिखा जो सबको गाकर सुनाते थे। इस भजन में आने वाले वक्त का राज़ समाया हुआ था जिसको स्वयं ने समझा और दूसरों को भी बताया।

भजन (स्वर खंभात)

हिन्दी विद्या वधाईं दी, हिन्दुनि जो शानु भारत में।

1. हिन्दी विद्या सेवारे थी, धर्म नीति कर्म क्रिया,

   हिन्दी विद्या दीन्दी सभ खे, सचो ज्ञान भारत में।

2. हिन्दी पढ़ो हिन्दी सिखो, हिन्दी मुख सां बोलियो वाणी,

   हिन्दी विद्या कन्दी सभ जो, सचो कल्याणु भारत में।

3. हिन्दुनि जी आदि खां अहि, संस्कृत ऐं हिन्दी विद्या,

हिन्दी विद्या कन्दी पैदा, सच्चो संतान भारत में।

4. हिन्दी विद्या पढ़ो माधव, हिन्दू जे पाण खे चाहियो,

हिन्दी विद्या कन्दी सभ जो, मथे सौमान भारत में।

अर्थ:- स्वामी जी इस भजन में कहते है कि हिन्दी का ज्ञान भारत में हिन्दुओं की शान बढ़ायेगा। हिन्दी विद्या धर्म, नीति, कर्म और क्रिया का ज्ञान देकर सबको सच्ची शिक्षा देगी। इसलिये हिन्दी लिखो, पढ़ो और मुख से भी हिन्दी ही बोलो। हिन्दी भाषा बोलने से भारत में सबका कल्याण होगा। हिन्दी से भारत के सच्चे सपूत पैदा होंगे। स्वामी जी कहते है कि यदि तुम अपने आपको हिन्दु कहलाते हो तो हिन्दी बोलो। हिन्दी ही भारत में सबका सम्मान बढ़ायेगी।

धीरे धीरे उनकी भक्ति रंग लायी। यह भक्ति सुगन्धित फूलो के समान सब को खुशबू देने लगी। उनके भक्ति का प्रभाव न केवल उनके कुटम्ब परिवार पर पड़ा किन्तु पूरा बन्ध ग्राम प्रभावित हो गया।

''भक्ति करे पाताल में, प्रकट होइ आकाश,

रजब तीनों लोक में, छिपे न हरि का दास।''

अब उनके कुटम्ब वाले भी उनको समझने लगे कि कोई भगवान का सच्चा भक्त हमारे यहाँ जन्म लेकर आया है।, अब उन्हें सब लोग माधव के स्थान पर साध माधव कहने लगे और छोटे बड़े उनका आदर करने लगे। अब उनकी कमाई भी प्रकट होने लगी। उस समय उनके चाचाजी का सुपुत्र बहुत बीमार हो गया। उनके चाचाजी ने उनके सर पर हाथ रख कर कहा कि मेरी बुराईयां माफ करो। इसे जीवन दिलो दो। आप संत है और सन्तों में भगवान बसता है। भगवान ने खुद अपने मुख से कहा है कि:-

मेरी बान्धी भगत छुड़ावे, बान्दी भगत न छूटै मोह

एक समै तउ फुन मोकै बाधे, मोपै जबाब न होइ।

भगवान भक्तों की बात कभी नही टालते। आप मुझ पर दया करें। यदि यह नहीं रहेगा तो मेरा जीवित रहना मुश्किल होगा। भला संत तो दया के सागर होते हैं सो चाचाजी को रोता देखकर उन्हें दया आ गई। उन्हें सान्तवना देकर कहा कि आप रोएं नहीं भगवान सब ठीक करेंगे।

क्षमा जांके मन बसे तिस हर अन्तर नांहि,

कहे टेऊं सुर नर सभी दर्शन चाहत तांहि।

दृष्टांत:- सुबह हुई और गुरू ग्रंथ साहब का सात दिवस का पाठ रखा। सुबह से सायं काल खुद पाठ करते थे। कीर्तन करते थे और सेवा करते थे। सुबह को आसा दी बार स्वयं करते तो सांय काल का सत्संग और भोग भी खुद लगाते। सातवें दिवस भोग पड़ते ही लड़का उठकर खड़ा हुआ। उनके भक्ति का प्रत्यक्ष प्रभाव सबके सामने प्रकट हो गया। अब उनके घर परिवार, पड़ौसी उनको मानने लगे और मन ही मन खूब सराहने लगे। कहने लगे साध माधव ने खूब भक्ति की है। उन्होंने तो मरे हुए को जीवित कर दिया। वाह का कमाल किया है। लड़के के उठने की उम्मीद ही नहीं थी। अब सब उन्हें पूजने लगे और सराहने लगे। परन्तु सच्चे संतों को तो न ही सराहने में खुशी और न ही निन्दा में गम। ऐसे सत पुरूष तो जीते जी मुक्त है और पूजन योग्य है।

" उस्तत निन्दय नांहि जंहि कंचन लोह समान

कह नानक सुन रे, मना मुक्त तांहि ते जान।"

ऐसी बड़ी करामात दिखाने के बाद जब सब ने उनकी प्रशंसा की तो भी उनके मन में किसी प्रकार का अहंकार पैदा नही हुआ। कहने लगे यह सब गुरू ग्रंथ साहब का प्रताप है।

हमने तो कुछ भी नही किया है। करने करवाने वाले वे स्वयं है। हम सब तो उनके हुक्म के अन्दर है। कितनी बड़ी नम्रता है।

''जो प्राणी ममता तजे, लोभ मोह अहंकार

कह नानक आपन तरे, औरन लेत उद्धार।''

यह मंजिल पार करने के पश्चात उन्हें अब अन्दर ही अन्दर यह आवाज़ आने लगी कि अब चल आगे। तुम्हारा तो मिलाप होना है उस अलख पुरूष से और सेवा करनी है उस महापुरूष की जिस सूरत की संजोय रखा वर्षों से अपने सीने से। जिस के संग इस संसार सागर को पार कर जाओगे। सो अन्दर की यह बात पंडित राचूराम जी से कही। उससे कहा कि गुरू करना है। राचूराम ने कहा कि कौनसा गुरू करना चाहते हो? गुरू तीन प्रकार के होते हैं। एक वे जो हमें सांसारिक ज्ञान प्रदान करते है कि हमें इस संसार में रहकर कैसा व्यवहार करना चाहिए ताकि सुख के सब साधन प्राप्त हो सकें। ऐसा सं ासारिक सुख देने वालों को केवल गुरू कहा जाता है।

दूसरे प्रकार के वे गुरू है जो सद्मार्ग पर ले नेकी की राह दिखाते है जिससे जीव को आत्मिक सुख मिलता है ऐसे सद्मार्ग पर चलाने वालों को सत्गुरू कहते हैं।

फिर तीसरे है पूर्ण सत्गुरू। ये वो अकर्मी पुरूष है जो नेत्रों से नेत्र मिला कर जिज्ञासू का काम रास कर देते है। नजर निहाल कर देते है। वे अकर्मी जीव है। वे अपने कर्म पूरे कर अलखी पद प्राप्त कर जीव के कल्याण के लिये पृथ्वी मण्डल पर जन्म लेते हैं।

स्वामी जी ने उन्हें कहा कि मुझे ऐसे ही पूर्ण सत्गुरू की तलाश है। जो अन्दर के अज्ञान को काट कर आत्मा के प्रकाश के दर्शन करावे। ऐसा पूर्ण सत्गुरू वेदों के ज्ञान का ज्ञाता हो ब्रह्म श्रोत्री हो। ब्रह्म और आत्मा के अभेद ज्ञान में जिसकी निष्ठा हो, ऐसा ब्रह्म नेष्ठी हो, जो द्वेत को दूर कर अद्वैत शुद्ध ब्रह्म का साक्षात्कार करवा सकें। जो शास्त्रों की

विद्या का ज्ञाता हो और शास्त्रानुसार सद्गुणों को धारण करे और जिज्ञासु को भी धारण करवाये। ऐसे समस्त शुभ गुणों वाले पूर्ण सत्गुरू की मुझे तलाश है, उत्कंठा है और चिर प्रतीक्षा है। परन्तु ऐसे सत्गुरू की मेरे ऊपर कैसे कृपा होगी इसका ज्ञान नही है। इस पर भक्त राचूराम जी ने उन्हें एक दृष्टान्त बताया।

दृष्टांतः- एक व्यक्ति था, जिसके अन्दर में गुरू करने की बड़ी चाहना थी। परन्तु कहां और कैसे गुरू करना चाहिए इस पर उलझ कर खड़ा हो गया। कुछ समय के बाद और कोई चारा न देखकर, परमात्मा को विनय की कि है मेरे मालिक! मुझे पता नही है कि कौनसा गुरू होना चाहिये और उसे कहां ढूँढे। मैं प्रण करता हूँ कि जब तक उसे मेरे पास नहीं भेजोगे मै कुछ भी नही खाऊंगा और व्रत रखता हूँ , फि भले ऐसा करते मेरे प्राण निकल जाएं, इसी प्रकार जान दे दूँ गा, नही तो मेरा गुरू मेरे पास भेजो। मुझे क्या पता कि उसे कहां ढूंढू और कैसे ढूंढू। मेरे अन्तर तो बुद्धि नही है। हे मालिक आप ही सर्व बुद्धिमान है। खैर! पास वाले गांव में एक पहुँचा हुआ फकीर रहता था, जो सारा दिन मालिक के ध्यान में मग्न रहता था। वह प्रतिदिन घोड़े पर चढ़ कर जंगल से लकड़ियों लेने जाता था। एक दिन जैसे ही जंगल से लकड़ियाँ लेकर लौट रहा था तो उसे लगा कि उसका घोड़ा रास्ता भूल कर गलत रास्ते पर चल रहा है। उनके हाथ में घोड़े की लगाम तो नाम मात्र रहती थी। वे स्वयं तो मालिक के ध्यान में मग्न रहते थे। घोड़ा अपने आप आकर घर के पास पहुँचता था। सो जैसे ही आंख खोलकर देखा तो वास्तव में घोड़ा घर का रास्ता छोड़ कर दूसरी और जा रहा था। सो लगाम खींच कर घोड़े को घर की राह पर ले आये। कुछ देर पश्चात घोड़े फिर घर की राह छोड़कर उस रास्ते पर चलने लग गया। दरवेश उसे तीन बार सही राह पर लाया और उसे अड़ी लगाकर घर की ओर चलाना चाहा परन्तु अब घोड़ा अड़ गया और चलने की ही नहीं करे। फकीर ने उसे छोड़ दिया तो वह उस रास्ते पर चलने लगा। फकीर समझ गया कि इसमें मालिक का कोई राज़ समाया हुआ है। घोड़ा चलता चलता आकर एक झौपड़ी के सामने रूका। झौपड़ी का दरवाजा बंद था। दरवेश ने घोड़े से उतरकर आकर दरवाजा खटखटाया तो वह व्यक्ति

जिसने प्राण त्याग व्रत रखा था वह निकल आया। फकीर को अपने सामने देख कर हैरान हो गया और वही श्रद्धा से फकीर को प्रणाम किया। फकीर ने कहा बेटा! तुम्हारे स्नेह ने शायद हमें यहां भेजा है। अब बताओ कि तुम्हें क्या चाहिये? उसने सम्पूर्ण घटना दरवेश को कह सुनाई। दरवेश उसका स्नेह देखकर बहुत खुश हुए और कहने लगे मालिक ने तुम्हारी सच्ची लगन के कारण ही शायद हमें भेजा है। जिज्ञासू को नाम दान देकर अपनी रहमत की नजर से निहाल कर दिया।

भक्त राचूराम जी यह दृष्टान्त बता कर स्वामी जी से कहने लगे कि बेटे! तुम्हारे दिल में भी यदि ऐसी लगन है तो तुम्हें पूर्ण सत्गुरू अवश्य मिलेंगे। स्वामी जी कहने लग कि गुरू करना है तो सन्त पूर्ण सत्गुरू स्वामी टेऊंराम जी महाराज को। यह भक्ति गुरू बिना अधूरी है। आप मेरे साथ चलें तो सीधे निकल चलें उनके डिब पर। भक्त राचूराम जी ने कहा कुछ दिन ठहरो। मेरा चचेरा भाई चूलाराम बीमार है, वह ठीक हो तो चलेगे। इस बीच में सन्तों का बन्ध गांव में पधारपण हुआ। स्वामी जी ने उन सन्तों की सेवा की और कुछ दिन पश्चात उन सन्तों के साथ साधु बेला और लक्की तीर्थ स्थल के रटन के लिए निकल गये। साधु बेला स्थान पर उनकी बहुत साधु सन्तों से भेंट हुई। उन सन्तों से भेंट हुई। उन सनतों से मिलकर उनकी आत्मा को बड़ी शान्ति मिली। सारा दिन सन्तों के वचन सुनकर और उनसे ज्ञान गोष्ट की बातें कर उनके जीवन में एक नया मोड़ आया। अब स्वामी जी वैराग्य की साक्षात मूर्ति बन गये। थोड़े दिनों के पश्चात बन्ध गाँव में लौट आये। घर वालों से मिलकर राचूराम जी की दरबार में आये। घर वालों से मिलकर राचूराम जी की दरबार में आये। वहां उन्हें पता चला कि सेठ चूलाराम की हालत नाजुक हो गई है। वैद्य हकीम हार गये हैं। कोई भी दवा असर नहीं कर रही थी। चूलाराम के गांव वालों को पता चला कि साध माधव बन्ध गांव में पहुंच गये हैं। सोचा चल कर शरण ले उस साध की। आकर उनके चरण पकड़े और नम्र निवेदन कर कहने लगे कि यह रहमत तो आपको करनी है। कैसे भी चूलाराम की जिन्दगी

दिलाइये। सन्त तो दया के घर होते हैं। सो उनका दिल पसीज गया। उनके लिये न कोई अपना न कोई पराया। सभी को मालिक का रूप समझते हैं।

बकरी पथरी ठीकरी, भए आरसी मोह,

जहां जहां नयन पखारूं, तहां तहां दरस तोह।

परमात्मा के दर पर अरदास कर शुरू किया सात दिन का पाठ। पाठ करने में किसी कीे भी सहायता नहीं ली। बड़े स्नेह और श्रद्धा से सातों दिन नियम से पाठ किया। अपने ही परिश्रम से पाठ पूर्ण कर भोग डाला आसादी वार और भजनों के वचन जैसे-जैसे चूलाराम के कानों पर पड़ते चले गये वैसे-वैसे वे महाश्य भी मौज में आते गये। कहने लगे मैं अब अपने आपको काफी स्वस्थ समझ रहा हूँ। भोग डालने के बाद अपने आप आकर स्वामी जी के चरणों में पड़े कहने लगे स्वामी जी! आश्रय दीजिये, अपने चरणों में स्थान दीजिये। अब इस जन्म के साथी भी आप तो परलोक में सहारा देने वाले भी आप। आज से आप मेरे गुरू और मैं आपके द्वार का चाकर। अब आप हमें छोड़ कर कहीं बाहर नहीं जाना। इस पर उत्तर दिया:-

पक्षी सन्त-साधु दोनों जाति एक,

रहे दिन दो चार या रहे रात एक।

राह लेनी है जोगियों वाली जिन्होंने जाम पिलाया है

विरह का। और यह भजन गाने लगे।

भजन

भरे जाम जोगी विरह का प्याला,

पाया दिव्य दर्शन जो तन मन भुलाया।

भरे जाम जोगी विरह का प्याला,

खाया ज्ञान फल को पिया प्रेम जल को।

पाया ब्रह्म बल को द्वन्द को जलाया,

भरे जाम जोगी बिरह का प्याला।

अभी स्वामी जी निकलने को तैयार हुए तो चाची जी वीरूमल की माताजी (वीरूमल स्वामी जी का चचेरा भाई अब भी जयपुर में व्यवसाय चला रहा है और स्वामी जी के होते हुए हर बुधवार को दुकान बन्द कर आकर स्वामी जी की सेवा करता था।)जिन को पुत्र सन्तान नहीं थी, उनके शरण में आयी। सोचा घर में गंगा बह रही है क्यों नहीं एक लोटा मैं भी भर लूँ। उनको विनती की कि साध! मुझ बेसहारा पर अपनी कृपा दृष्टि करो। कोई जोत जले, मेरे पास कोई पित्रों को पानी देने वाला आए। स्वामी जी ने ध्यान कर कहा माताजी! आपको तो पुत्र सन्तान लिखा हुआ ही नहीं है। माताजी गिड़गिड़ा कर कहने लगी आप लेकर देने में समर्थ है। यहां भी लेकर देने वाले आप तो वहां भी लेकर देने वाले आप। माता के आंसुओं ने सन्त के हृदय को पिघला दिया। कुछ भी कह नहीं सके सातवां पाठ गुरू का रख दिया। भोग साहब डाल कर, पाठ का पानी उनको पिलाकर सत्नाम याद करवा कर, स्वयं निकल पड़े सन्त मुरलीधर के साथ टण्डे आदम की डिब की ओर। वहां पहुंच कर देखा तो सत्संग के लिए चबूतरा बन रहा है जिसके लिए सब सेवा कर रहे थे। सोचा जहां सन्त और सेठ सेवा कर रहे हैं वहां हम पीछे क्यों रहें। गुरू महाराज जी के दर पर सेवा करने का अवसर मिला है। इस सेवा से बढ़कर और कौनसी सेवा है। सो तग़ारी लेकर लग गए सेवा में। सुबह मिट्टी उठाते तो शाम को सत्संग सुनते और साथ-साथ अपने इष्ट देव का दर्शन भी करते रहते। मन ही मन परमात्मा के दर विनय करते कि कहीं कृपा कर नाम दान दे देवें। रात्रि में जब सब विश्राम करने चले जाते तब आप जाकर छुपकर साधना में बैठ जाते थे जिसका पता किसी को भी

नहीं चलने दिया। इस प्रकार गुरू के द्वार पर सेवा और भक्ति करते हुए कुछ महिने गुजर गए परन्तु सत्गुरू के कृपा की नार उन पर पड़ी, उनके ऊपर नाम दान की रहमत नहीं हुई। इस बीच बन्ध गांव से उनके घर वाले उन्हें बुलाने आये। बहुत आग्रह करने पर वे उनका कहा नहीं टाल सके और उनके साथ गांव लौट आये। आते ही खुशखबरी मिली कि उनकी चाची जी वीरूमल की माताजी को पुत्र सन्तान प्राप्त हो गया है। सबने मिलकर खुशी मनाई। छट्ठी के अवसर पर स्वामी जी को आसन पर विराजमान कर उनका खूब सम्मान किया और उनके चरणों पर गिर कर यह भजन गाने लगे।

भजन (स्वर पीलू)

जित किथ सन्त रहनि सोभारा,

उहे वसंदा रहनि चौबारा।

1. संत जगत जी सोभिता आहिनि,

पापियुनि जा था पाप मिटाईन,

ज्ञान करे गजकारा- जित किथ संत....

2. सन्त सदाईं सीतल आहिनि,

तन मन जी था तपति ब्रुझाईन।

वसाए अमृत धारा- जित किथ संत

3. संत जीवन का दुख कटीन था।

पापनि जी से पाड़ पटीन था।

जाणी प्रभू पसारा- जित किथ संत ....

4. माधव सभ सां मिली हलनि था,

हिन चित चङीचाल चलनि था।

रही नभ जियां त न्यारा- जित किथ सन्त ....

(अर्थ) - जहाँ जहां संत रहते है वे स्थान सदा आबद रहे। संत इस जग की शोभा है। ये अपने ज्ञान की वर्षा द्वारा पापियों के पाप मिटा देते है। संत जन सदा शीतल रहते है और औरों के तन मन के ताप को बुझाते है। अमृत धारा बसा कर संत जीवों के दुख काटते है, पापों की जड़ उखाड़ देते है। हर जगह प्रभू की लीला ही देखते है। स्वामी जी कहते है कि संत सबसे मिल जुल कर चलते हैं। इस संसार में आकाश के समान न्यारे रहकर सबसे सद्व्यवहार रख कर चलते हैं।

चाची जी तो निहाल हो गइे। लड़के का नाम मिर्चू रखा गया। फिर बारह महिने बाद चाची जी को दूसरा पुत्र जन्मा। जिसका नाम वीरू रखा गया। इस घटना के बाद स्वामी जी का स्वास्थ्य बिगड़ता गया। दिन पर दिन कमजोर होते गए। बहन मूली बाई को कहा कि कुछ को जीवन दान दिलाया अब खुद को जिन्दगी से हाथ धोना पड़ेगा। क्योंकि जन्म मरण ईश्वर के हाथ है। हमें उनके कार्य में हस्तक्षेप नही करना चाहिये था। यह कह कर भजन कहने लगे।

भजन (स्वर फलो)

कुदरत सन्दे कमनि में, नाहे मजाल कंहिजी,

ईश्वर सन्दे अमन में, नाहे मजाल कंहिजी।

1. ईश्वर बणाई आहे, कुदरत पंहिजे कल सां,

प्रभूज सन्दे चमन में, नाहे मजाल कंहिजी ....

2. ही जे हलनि था हरदम, प्राण जीवन जे पिंड में,

रोकरण संदी उन्हनि में, नाहे मज़ाल कंहिजी....

3. प्रभूअ रखियों आहे पंहिंजे, वस में ही जमु ऐं मौत,

जीवन में संदे दमनि में, नाहे मज़ाल कंहिजी....

4. हथ में सभेई हयातियू, माधव तंहि मालिक जे,

खालिक सन्दे गुलनि में, नाहे मज़ाल कंहिजी ....

अर्थ:- स्वामी जी इस भजन में कहते है कि कुदरत के कामों में किसी को हस्तक्षेप करने की हिम्मत नहीं है। परमात्मा की शान्ति में दखल देने की किसी की हिम्मत नहीं है। ईश्वर ने बड़ी कलाकारी और तरकीब से यह कुदरत बनाई है इसलिये उसके इस चमन में कोई हस्तक्षेप नही कर सकता।

ये प्राण जो हर जीव में निरन्तर चल रहे है उनको रोकने की किसी में हिम्मत नही है, परमात्मा ने जन्म और मृत्यु अपने ही हाथ में रखे है कोई भी एक सांस न घटा सकता है और न बढ़ा सकता है।

स्वामी जी कहते है कि इस जगत में जितने भी प्राणी है उन सबका जीवन उस मालिक के हाथ में है। इस संसार रूपी बगीचे में मालिक ने जो फूल उगाये है उन सबमें किसी के भी हस्तक्षेप करने की हिम्मत नही है।

हमने उस मालिक के रहस्य में हस्तक्षेप किया है इस कारण हमें इस संसार में चलना पड़ेगा। उनकी बहिन रोने लगी और कहने लगी कि आप यह क्या कहते है। ऐसी अशुभ वाणी मुख से नहीं निकालो। उनकी बहिन अब 13,14 वर्ष की हुई थी। उनके पास बैठे कर कहने

लगी कि इस संसार में आप ही मेरा सहारा है। पिताजी सरल स्वभाव के है। मैं आपके बिना रह नही सकती। मैं आपसे विनती करती हूँ कि कि आप अपने प्राण अभी नही त्यागें। छोटि बहिन को इस प्रकार विलाप करते देखकर उनका दिल भर आया और आंखे डबडबा गई। उसी समय उनको बहिन की शादी का ध्यान आया। और उसे कहने लगे तुम मत रोवो। वैसे तो हम अभी अपना शरीर छोड़ देते परन्तु बराबर मेरा तेरे प्रति कर्तव्य रहा हुआ है। वह ऋण मुझे चुकाना है। तुम रोना बन्द करो। भगवान सब भली करेंगे। प्रभू को याद करो। चिन्ता छोड़ कर सब उस पर छोड़ दो।

तेरा काम न चिन्ता गम से, हरि नाम सुमर दम दम से, तूँ है हरि का हरि है तेरा, मेरा काम नहीं आलम से, तेरा काम नही राम चिन्ता से, हरि नाम सुमर दम दम से।

अब दोनो बहिन भाई प्रेम से प्रभु को पुकारने लगे कि इस कष्ट की घड़ी में तुम आकर सहायता करो। आप दयालु है आप का नाम ही है, दीन दयाल सो आप हम बच्चों पर दया करो। ऐसे कहकर यह भजन गाने लगे।

भजन (स्वर तलंग)

प्रभू तोखे प्रेमी पुकारीन था, सिक मंझां था श्याम संभारीन।

1. प्रभू तोखे प्रेमी पुकारीन, राह निहारे सिक मां, सारीन,

   है है हंजू हारीन कृष्ण ....

2. प्रभू तोखे पालक जाणी, मालिक जाणी खलिक जाणी,

   नेण खणी त निहारीन कृष्ण....

3. प्रभू तुंहिजों नाम दयालू, आहे कृपालू दीन रखवालों,

ध्यान तुहिंजो धारीन कृष्ण...

4. प्रभू तंहिंजो अझो सुञाणी, प्रेम रसाए बोली वाणी,

माधव तन में कृष्ण...

(अर्थ):- स्वामी जी इस भजन में कहते है कि हे प्रभू! प्रेमी आपको बड़े स्नेह से पुकार रहे हैं। हे प्रभू आपके प्रेमी आपके आने की राह देख कर थक गए वे आपके याद में आंसू बहा रहे है। हे परमात्मा, आपके प्रेमी आपको मालिक व जग का रचयिता और पालनहार समझकर आपकी प्रतीक्षा कर रहे है। हे प्रभू, आपका नाम दयालू है और आप है भी दयालू दीन दुखियों के रखवाले, इसलिए वे सदा आपको याद कर रहे हैं।

हे कृष्ण तुम्हारे प्रेमी यह जानते है कि आपका घर अनके दिल में है इसलिये वे प्रेम से आपको याद करके दिल में ढँूढ रहे हैं।

बहिन मूली की पुकार भगवान के ह्रदय तक पहुॅंच गई। मालिक ने कन्या की विनती स्वीकार कर ली। अब स्वामी जी धीरे धीरे ठीक होते चल गये। बहिन को सान्तवना दी कि अब तुम कोई विचार मत करो मालिक ने तेरे भाग्य से मुझे जिन्दगी दी है। अब हम अपना फजऱ् अवश्य पूरा करेंगे। उसके पश्चात उनको सदा अपने बहिन के रिश्ते की चिता रहती थी। सोचते थे कि कोई योग्य वर मिल जाए तो बहिन की शादी कर इस ऋण से मुक्त होकर, अपने मालिक को जाकर रिझाऊँ। इस बीच स्वयं तो कीर्तन भजन करते रहे। कभी कभी थोड़े दिनों के लिए लक्की और साध बेला का रटन भी करते रहे। आखिर प्रभू की कृपा से यह कर्तव्य पूर्ण करने का दिन भी आ गया। बहिन के योग्य वर मिल गया। अपनी बहिन की शादी बड़ी धूमधाम से श्री मोतीराम टेकचन्दानी से करवा कर निश्चित हो गए। एक कर्तव्य निभाने के बाद उन्हें सब सच्चे कर्तव्य का ध्यान आया। सो अब सीधे श्री राचू राम की दरबार में पहँुचे। उनहें निवेदन किया कि अब देर मत करो। कैसे भी करके पूरन सत्गुरू का दर्शन

करवाओ। भक्त राचूराम उन्हें लेकर सीधे नये हाला में आये जहाँ सत्गुरू स्वामी टेऊँराम के गुरू दादा आसूराम जी रहते थे। वे दरवेश संस्कृत और पारसी के पण्डित थे। स्वामीजी को कहा भाई! हम आपको योग्य स्थान पर ले आये हैं। यहां रहकर आप संस्कृत और पारसी का अभ्यास भी कीजिए और उसके साथ साथ अपने महबूब की दीदार करते रहिये। स्वामी टेऊँराम जी दो चार दिन में यहाँ अपने सत्गुरू के दर्शन करने आते रहते हैं। तुम्हें अपने सत्गुरू का दर्शन होता रहेगा उनका भक्त राचूराम की बात बहुत अच्छी लगी। विद्या अध्ययन के साथ सत्गुरू महाराज की कृपा होने की आस बड़ी थी।

दादा आसूराम जी के स्थान पर रहकर उन्होंने दिल व जान से उनकी सेवा की। जब सेवा विनम्रता और लगन से दादा साहब खुश हुए तो स्वामी जी ने उन्हें निवेदन किया कि साहब! अपनी रहमत की नज़र कीजिये ताकि सीख लूं देव वाणी, संस्कृत और विद्धानों की भाषा पारसी। मेरे अन्दर इतनी बुद्वि तो नहीं है, किन्तु अपना बालक समझ कर दया दृष्टि कीजिये। दादा साहब उस जमाने के संस्कृत एवं पारसी के बड़े विद्वान थे। उस समय चारों तरफ उनके विद्वता की धाक थी। माधव की विनती स्वीकार कर उन्हें निहाल कर दिया। कहा कि यहाँ बैठो और यह श्लोक सुनोः-

''तवंगरी ब दिल अस्त, न ब माल,

बुर्जगी व अक्ल अस्त, न ब साल।''

माधव इस श्लोक का अर्थ है कि साहूकारी धन पर निर्भर नही है परन्तु वह निर्भर है दिल पर। दुनियां में वह धनवान है जिसका दिल बड़ा है। इसी प्रकार आयु में बड़े होने से कोई बड़ा नही कहलायेगा परन्तु बड़ा वह है जिसमें अक्ल है। इन शब्दों ने उनके दिल पर गहरा प्रभाव डाला। समझने लगे कि दादा साहब ज्ञान के सागर है। इसलिये यहां रहकर ज्ञान की गंगा में गहरी डुबकी लगा कर अपने आपको योग्य बनाना है। दिल में मन लगा कर संस्कृत

और पारसी का अध्ययन करते थे और रात को भजन करते थे। वहाँ सत्गुरू स्वामी टेऊँराम जी अपने गुरू के दर्शन करने आते रहते थे और स्वामी जी उनके दर्शन का खूब प्रसन्न होते थे। एक दिन अवसर पाकर उनके पीछे निकल पड़े। दिल व जान से उनकी सेवा करने लगे ताकि रहमत की नज़र डाले। उनका सत्संग भी सुनते थे और भजन भी गाते थे।

जब घर वालों को पता चला कि माधव फिर डिब पर जा कर तगारियाँ उठा रहा है, सो सब आये उन्हें लेने के लिये। स्वयं सत्गुरू महाराज जी के सामने दर्शन झुका कर खड़े रहे। आदर और मर्यादा के कारण कुछ भी नही कह सके और विवश होकर घर वालों के साथ अपने घर लौट आये। शरीर भली यहाँ था किन्तु दिल तो प्रीतम से जुड़ा हुआ था। मन पर बहुत उदासी थी कुछ भी अच्छा नही लग रहा था। विरह में गाते रहते और आंसू बहाते रहते थे।

भजन

मां त दोहु कयो आ कहियो,

न थो श्याम अचे सुख धाम अचे,

मुंहिजो जीउणु अजायो जेदियूँ ।

1. मां त परिझी पेरू न पातो,

मूँ सां श्याम निबाहि नातो।

पेई पंधु पुछां मां त रोजु लुछां,

रूआं वाट वाझायो लेदियूँ

2. मां त पलि पलि श्यामु पुकारियां

रोई आबु अखियुनि मां हारियां।

न थो ताम वणे घुरू वणे,

दाढो सिक सतायो जेदियूँ

3. दाढो विरह विछोड़ो भारी,

दहै श्याम वियो त मुरारी।

कयां कीअं हाणे, टिका कंहिजे टांणे,

नऊँ नीहं लगायो जेदियूँ ...

4. मां त माधव दोहु बखशायां,

पंहिजे पांदु गिचीअ में पायां।

सखी मूँसा मिली कयो मिंथ हली,

सुन्दर श्याम सरचायो जेदियूँ ...

अर्थ:- स्वामी जी ने इस भजन में अपने प्रीतम के लिये विरह को व्यक्त करते हुये कहा कि मैंने कौनसा दोष किया है जो मेरे श्याम मेरे पास नही आते है उनके बिना मेरा जीवन व्यर्थ है।

मैंने सोचकर इस राह में पावं नही रखा। हे श्याम! आप मेरे साथ प्रीत का नाता निबाहो। मैं आप के आने की प्रतीक्षा में तड़फ रहा हूँ और आपकी राह देखते-देखते व्याकुल हो रहा हूँ ।

मैं पल पल श्याम को पुकार रहा हूँ उनके विरह में नैनों से अश्रु बहा रहा हूँ । मुझे उनके बिना न खाना अच्छा लगता है। न ही घर अच्छा लता है। मुझे उसकी याद ने बहुत सताया है।

मेरे से श्याम बिछुडकर मुझे भारी विरह का दर्द दे गया है। अब मैं क्या करूं और कहा जाऊँ मैंने उनसे पहली बार प्यार का नाता जोड़ा है।

स्वामी जी कहते हैं अपने दोषों के लिये क्षमा मांगू आप सब मेरे साथ चलकर विनय कर मेरे श्याम को मनाओ।

नैनों में नींद नहीं, चित्त में चिन्ता लगी हुई थी गुरू करने की। बिना पूर्ण ज्ञान के निर्गुण को जानकारी नहीं हो सकेगी। फिर अनुभव देश तक कैसे पहुँचेंगे। अन्दर के द्वार खोलने की चाबी तो गुरू के पास है। गुरू कृपा से ही आत्मक ज्ञान प्राप्त होगा। नाम द्वारा ही इस आत्मा का परमात्मा से मेल होगा और यह आत्मा संसार के बन्धनों से छूट कर मुक्त होगी। उस सच्च खण्ड की मंजिल तक पहुँचने के लिये काबिल गुरू के मार्गदर्शन की आवश्यकता है। गुरू द्वारा दिया गया नाम उस पतवार के समान है जो आत्मा रूपी नाव को किनारे पर पहुँचायेगी। आत्मा संसार रूपी खारे सागर में रहकर उस स्वाति बून्द की प्यासी है। वह प्यास गुरू ही बुझाएगा। सो इस बार दृढ़ निश्चय किया कि गुरू चरणों की शरण लेंगे। फिर वापस बिल्कुल नही लौटेंगे। अब भली सम्पूर्ण बन्ध गाँव वापस लौटाने का प्रयत्न करे। बस दो दिन पश्चात एक रात्रि के टण्डे आदम चलने की तैयारी की। परमात्मा को याद कर निकल पड़े मंजिल की ओर। चलते चले और याद में गाते चले।

भजन (स्वर विहागु)

अनिभई देश में केर पुजाए ज्ञान ज्ञान

1. हलु सतगुरू जे दरि काहे,

दे सीस भेटा लाहे,

शान्त सरूप में केर समाए - ज्ञान ज्ञान ज्ञान

2. सच्चो ज्ञान गुरूअ खा पाइजि,

सब भोला भ्रम भुलाइजि,

कर्म जी रेखा करू मिटाए- ज्ञान ज्ञान ज्ञान

3. लहु ज्ञान सां घरू तूँ आदि,

जेको माधव आहे बुनियादी,

मुक्ति पद सां केरू मिलाए - ज्ञान ज्ञान ज्ञान

(अर्थ):- स्वामी जी इस भजन में कहते हैं कि मनुष्य जीवन की एक सच्ची और सही मंजिल है -परमात्मा की प्राप्ति। उस तक पहुँचने के लिए ज्ञान की आवश्यकता है। और यह सच्चा ज्ञान केवल गुरू द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। इसलिये तुम सत्गुरू के द्वार तक बढ़ता चल। तुम सत्गुरू के आगे अपना सीस उतार कर भेंट करो ताकि सत्गुरू ज्ञान देवे जिसके द्वारा तुम शान्त स्वरूप में समा जाओ।

सत्गुरू से सच्चा ज्ञान प्राप्त कर अपने मन के सब भ्रम और सन्देह मिटाओ, फिर सत्गुरू ज्ञान के द्वारा तुम्हारे कर्म की रेखा ही मिटा देंगे।

स्वामी जी कहते हैं कि गुरू द्वारा प्राप्त ज्ञान से तुम वह आदि घर ढूँढ लो जो तुम्हारी असली मंजिल है। फिर तुम उस ज्ञान द्वारा मुक्ति पद को प्राप्त कर लोगे।

भजन गाते चले और साथ साथ गुरू को भी याद करते चले। ऐसे करते करते आखिर आकर टण्डे आदम गुरू की दरबार में पहुँचे। उस समय सत्संग चल रहा था। सत्गुरू महाराज जी को दण्डवत प्रणाम कर सत्संग में बैठ गए। परन्तु आज सत्संग में मन ही नहीं लग रहा था। मन में तमन्ना थी कामिल मलाह के मिलने की। चित्त में चिन्ता थी कि काश दया कर अपना लेवे और कर लेवे अपना। सत्संग पूर्ण हुआ। सब प्रेमी एक एक कर माथा टेक कर रवाना हो गये। सत्गुरू महाराज जी विराजमान थे। अब उनकी सम्पूर्ण दृष्टि साध माधव पर थी। माधव का हृदय जोर जोर से धड़कने लगा। कैसा न अलौकिक दृश्य था। महबूत मिलने की घड़ी आखिर आ गई। हिम्मत करके स्वामी जी आकर सत्गुरू महाराज जी के चरणों पर गिरे और विनती की कि अब आश्रय देकर अपनी शरण में ले लीजिये। अब कितना तड़फायेंगे? अपने चरणों का दास बनाईये। सवाली बनकर सवाल लेकर आया हूँ गुरू करने। आज गुरू मंत्र देकर अपना सेवक बनाईये। अब इस दर से बिल्कुल न हटूँगा। हाथ जोड़ कर उन्हें वारों वार विनती करने लगे।

भजन (स्वरा तलंग)

गुरू पंहिले चरननि जो दे ध्यान,

आश रखी मां दर ते आयुसि,

आतम जो दे ज्ञान

1. सतगुरू तुंहिजे दर ते सुवाली,

   आश रखी मां आयुसि वाली,

   मालिक थी महिराबान....

2. चरण कमल मां चित्त में ध्यायां,

ताप कलेश सभि पाप मिटाया

पाया पद निर्बाण....

3. सतगुरू तुंहिजी सूरत पसां माँ,

मन में पंहिजे मूरत दिसां मां,

इहो करि अहिसान.....

4. माधव मन सां सतगुरू ध्यायां

पल पल खिन में दर्शन पायां,

इहो दे तूँ दान गुरू पंहिजे चरननि जो दे ध्यान।

अर्थ:- स्वामी जी इस भजन में कहते है कि सतगुरू महाराज जी! आप अपने चरणों का ध्यान दीजिये। मैं आस लेकर आपके द्वारा पर आया हूँ । मुझे आत्म ज्ञान दो। सतगुरू महाराज जी मैं आस लेकर आपके द्वारा पर सवाली बन कर आया हूँ । हे मेरे मालिक! आप मेरे ऊपर कृपा कीजिये।

मैं आपके चरण कमल का मन में ध्यान कर सब ताप क्लेश मिटाना चाहता हूँ और निर्बाण पद पाना चाहता हूँ ।

हे सत्गुरू महाराज जी मैं सदा आपकी सूरत देखना चाहता हूँ और मन में आपकी तस्वीर देखूँ यही एहसान मेरे ऊपर कीजिये।

स्वामी जी कहते हैं कि मैं अपने मन में सत्गुरू महाराज जी को याद करना चाहता हूँ । और हर पल आपका दर्शन करना चाहता हूँ । यही दान आप मुझे दीजिये।

सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी का इतना प्रेम देख कर उन्हें उठाकर अपने गले में लगा लिया। उन्हें कहा कि बेटे, गुरू करना आसान बात नही है। यह मार्ग बहुत कठिन और कांटों से भरा हुआ है। तुम इसे सरल मत समझो।

इस राह पर चलते चलते बड़ी बड़ी मुसीबतें सामने आयेंगी। तुम्हें बहुत सी परीक्षाए देनी होगी। प्रीत रखकर अन्त तक निभाना होगा। पैर पीछे नही हटाना है। यदि अंगद के समान पांव मजबूत रखा तो रचकर लाल हो जाओगे। तुम्हें मंजिल मिलेगी। ऐसे समझाते हुए उनहें यह भजन सुनाया।

भजन

नाहि सुखियों मुहबत मार्ग, परिझी पेर तूँ पाई प्रीतम।

1. वाट कठिन थई प्रेम पंथ जी, नाहे कांइर जी जाई प्रीतम,

   नींहु लगहणु तोड़ निभाइणु, मखण शीख पचाइ प्रीतम।

2. कई नेही बणी स्नेही, रहिया पोइ पछिताइ प्रीतम।

   जीअरे मरिणो, मरी जीअणो, करिणो सीस फिदाइ प्रीतम।

3. राह अनहीअ ते रत जूँ नंदियू, नींहं जो नेजो लगाई प्रीतम,

   सूरह घिरंदा मूर न मुडन्दा, माधव हियें हंडाई......

अर्थ:- सत्गुरू महाराजी ने इस भजन में स्वामी जी से कहा है कि यह परमात्मा से प्रेम करने का मार्ग सुगम नहीं है इसलिये तुम सोच समझ कर इस राह पर पाँव रखना। यह प्रेम का पंथ बहुत कठिन है। इस पर निर्बल का कोई स्थान नही है। प्रेम करके और अन्त तक निभाना मक्खन की सलाखों को पकाने के बराबर है।

इस प्रेम की राह पर कई प्रेमी बनकर आए परन्तु बाद में वे पछताए। इस राह पर जीते जी मरना है और मर कर जीना है। इस राह पर सीस कुर्बान करना है।

इस राह पर रक्त की नदियाँ है। तुम अपने अन्दर स्नेह का तीर लगाओ। इस राह पर बहादुर और हिम्मत वाले ही चल सकते हैं, वे कभी नही रुकेंगे। माधव यह बात तुम अपने दिल में बिठा लो।

स्वामी जी ने हाथ जोड़ कर सत्गुरू महाराज से विनती की कि मैं दीन आपके शरण आया हूँ । दुर्गम से सुगम बनाने वाले भी आप ही है। यह राह भली कठिन है किन्तु इस कठिन राह पर चलने की शक्ति भी आप ही देंगे। आपकी कृपा से इस राह के शूल भी मेरे लिए फूल बन जायेंगे। मेरे सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखिये तो मैं इन सब परीक्षाओं को पार कर जाऊँ। दुख दर्द सहूँ पर न कहूँ । मैं आज सब कुछ आपके चरणों में अर्पण करता हूँ । आज के पश्चात मेरा कुछ भी नहीं है। सब कुछ आपका है। यह जीवन रूपी नौका है आज आपके सुपुर्द करता हूँ । आप ही संसार रूपी सागर से पार लगायेंगे। इस संसार रूपी सागर में भयानक लहरें है, अनेक गहरे भंवर है, इसलिये वही नौका पार पहुँचेगी। जिसका मल्लाह चतुर होगा। मुझे अब कोई भी खतरा नहीं है। आप ही मेरे अन्दर जोत लगाकर अन्दर और बाहर के अंधकार को दूर करेंगे। सत्गुरू के द्वारा ही परमात्मा के दर्शन हो सकते हैं।

मेरी आपको बार बार यही विनती है कि इस दास पर सदैव अपनी कृपा दृष्टि रखेंगे। यह आसीस कीजिये कि आठों पहर दिल में अपना ही ध्यान रहे। यह कहकर सत्गुरू महाराज के चरणों में सीस झुका कर इस शब्द द्वारा विनती की।

भजन (स्वर तलंग)

सतगुरू तोखे सीस निमायां,

चरण कंवल तुंहिजा चित में धिआयां।

1. सतगुरू तुंहिजे दर ते सुवाली,

    दीन दयाली आहीं तूँ वाली,

पांद गिचीअ गलि पायां,

    सतगुर तोखे सीस निमायां।

2. सतगुरू तुंहिजो भरियलु भण्डारो,

    आहीं बाझारो खुलियलु दुवारो,

कणो कृपा जो चाहियां,

    सतगुरू तोखे सीस निमायां।

3. सतगुरू मूँ ते प्रेम प्यार जो,

    रहे दया जो हथ मया जो,

कर्ममनि कोट कटियां,

    सतगुरू तोखे सीस निमायां।

4. सतगुरू तोखे कयां सौ बार प्रणाम,

    जोड़ें हथ सीस निमायां।

अर्थ:- स्वामी जी इस भजन में कहते हैं कि सतगुरू महाराज मै तेरे चरणों में सीस झुकाता हूँ और चित्त में सदा तेरे कमल का ध्यान करता हूँ । सतगुरू महाराज में द्‌वार पर सवाली बन

कर आया हूँ । आप दीन दयाल है और मेरे मालिक है। मैं विनीत भाव से आपको सीस झुकाता हूँ ।

सतगुरू महाराज आपके भण्डार सदा भरे हुए हैं आप दयालू हैं और आपके द्वार सबके लिये सदा खुले हुये हैं। मैं आपकी कृपा का एक कण आपसे सीस झुकाकर मांगता हूँ ।

सतगुरू महाराज आप मेरे सर पर प्यार का व अपनी दया का हाथ रखेंगे तो मेरे जन्म जन्म के कर्म कट जायेंगें।

सतगुरू महाराज मैं आपको सौ बार प्रणाम करता हूँ हाथ जोड़कर विनती करता हूँ कि मुझे सुमति दीजिये ताकि मैं अन्त तक इस नाते को निभाऊं।

माधव के स्नेह व श्रद्धा के वचन सत्गुरू महाराज ने खुश होकर उनके सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखा। उन्हें कहा कि माधव! हम तुम्हारी विनम्रता और विनीत भाव पर अति प्रसन्न है और तुम्हें एक रहस्य की बात बताते हैं जिसे सदा याद रखना। सच्चे ज्ञान प्राप्त करने की चाबी है श्रद्धा और गुरू का आदर। महा भारत में एकलव्य की अगाध गुरू भक्ति का प्रसंग है। उसकी गुरूभक्ति संसार के अद्वितीय है जिसका और कोई मिसाल नही है। गुरू से दूर रहकर केवल गुरू की मूर्ति की स्थापना कर उसने धनुर विद्या में वह पद प्राप्त किया जिसका संसार में और कोई सानी नही है। हम तुम्हे वह पौराणिक कथा विस्तार से सुनाते हैं:-

दृष्टान्त:- गुरू द्रोणाचार्य कौरवों और पाण्डवों के राजगुरू थे। शस्त्र विद्या में उनका कोई सानी नहीं था। एक दिन जब वे उनको शस्त्र विद्या दे रहे थे तो एक भील बालक उनके पास आया। उसे राजकुमारों को विद्या पाते हुये देखकर शौक पैदा हुआ और उसने अर्ज की कि उसे भी तीरअंदाजी सिखाई जाये। गुरू द्रोणाचार्य ने कहा, ''कहा ये शहजादे और कहां तू एक गरीब कंगाल का लड़का! मैं तुम्हे शस्त्र विद्या प्रदान नहीं कर सकता।'' उसे लड़के ने गुरू के पांव पकड़ कर बहुत विनती की किन्तु गुरू द्रोणाचार्य ने विवशता प्रकट करते हुए उसे लौटा

दिया। अब प्रेम प्रेम ही होता है। उसने क्या किया? गुरू द्रोणाचार्य के स्वरूप का ध्यान करना शुरू कर दिया। ध्यान कर कर उनको अपने अन्दर प्रकट कर लिया। उनके नाम का श्रद्धा से स्मरण कर प्रतिदिन तीरअंदाजी का अभ्यास करता रहता। अब उस (द्रोणाचार्य की मूर्ति) ने उसको तीर अंदाजी सिखा दी।

गुरू द्रोणाचार्य एक दिन सब राजकुमारों की परीक्षा ले रहे थे। उन्होंने आज्ञा दी कि यह कुत्ता भौंक रहा है उसके मुँह में इस प्रकार तीर मारो कि उसका भौंकना बंद हो जाये। सबने बारी-बारी से तीर चलाये परन्तु सब बेकार गये। उस भील के लड़के ने जब आकर तीर मारा तो कुत्ते का भौंकना बन्द हो गया। अब गुरू द्रोणाचार्य आश्यचर्य चकित थे कि यह एक भील का लड़का राजकुमारों से आगे कैसे बढ़ गया। उसे बुलाकर पूछा कि तेरा गुरू कौन है? तूने यह तीरअंदाजी की शिक्षा किससे ली है? उस बालक ने कहा कि यह विद्या मैने आपसे ही सीखी है, आपके इंकार करने पर आपकी सूरत को अन्दर प्रकट करके श्रद्धा और भक्ति के द्वारा मैने यह सब प्राप्त किया है।

दृष्टान्त बताकर सत्गुरू महाराज कहने लगे कि ज्ञान रूपी खज़ाने को पाने की चाबी है श्रद्धा और विश्वास। गुरू से वही शिष्य ज्ञान प्राप्त कर सकेगा जिसके दिल में गुरू के लिये गहरी श्रद्धा होगी। बिना श्रद्धा ज्ञान की कल्पना भी नहीं कर सकते। गुरू कितना भी महान ज्ञानी क्यों न हो, परन्तु यदि शिष्य के दिल में गुरू के लिये गहरी श्रद्धा नहीं होगी तो वह गुरू से कुछ नहीं प्राप्त कर सकेगा। परन्तु यदि शिष्य के दिल में गुरू के लिये श्रद्धा है तो वह ज्ञान का अखुट खज़ाना प्राप्त कर सकेगा। तुमने देखा कि एकलव्य गुरू के प्रति गहरी श्रद्धा और अटूट विश्वास के द्वारा गुरू की अनुपस्थिति में भी वह कुछ प्राप्त कर सका जिससे वह सदा के लिए अमर हो गया।

यह सब सुनकर स्वामी जी गहरे सोच में पड़ गये। अब सत्गुरू महाराज ने पूछा कि माधव तुम यह व्रत निभा सकोगे? यह सुनकर स्वामी जी सत्गुरू महाराज के चरणों में गिर पड़े और इस दोहे द्वारा अपनी श्रद्धा के फूल सत्गुरू महाराज जी के चरणों में अर्पित किये-

वे नर अंध है, जो गुरू को कहते और,

हरि रठै गुरू ठौड़ है, गुरू रूठै नांहि ठौड़।

दोहा पूरा कर निवेदन किया कि सत्गुरू महाराज! मैंने भगवान तो नहीं देखा है, परन्तु भगवान रूपी गुरू का दर्शन अवश्य किया है, और मेरा विश्वास है कि यदि इस जन्म में भगवान का दर्शन हुआ तो वह आपकी कृपा से आपके द्वारा ही होगा। मेरी बस एक ही तमन्ना है कि आपके चरणों का वास मिले। आपकी कृपा प्राप्ति ही मेरे जीवन का ध्येय है और उसे प्राप्त करने के लिये मैं जीवन भर तपस्या करता रहूँ गा। स्वय सिद्ध होते हुए भी सत्गुरू के प्रति कितनी विनम्रता और समर्पण था उनके हृदय में। सत्गुरू महाराज उनकी प्रति श्रद्धा और स्नेह देखकर बहुत प्रसन्न हुये और इस भजन द्वारा उन्हें ज्ञान दिया।

भजन (स्वर टोरी)

आहीं आत्म रूप तूँ पंहिजो पाण,

सत चित्त अखण्ड पंहिजो रूप सुञाण।

1. देह स्थूल तूँ कारण नांही,

सूक्षम देह न साधारण आहीं,

सभ खां नियारो तूँ नारायण आहीं,

कढु भ्रमनि जो तूँ दिल मां भाण....

2. पंज कोश खां न्यारो आहीं,

परमातम रूप तूँ प्यारों आहीं,

सभ जग जो तूँ सदारो आही,

खोल अखियूँ पंहिजो पाण पछाण....

3. जाग्रत सपनो शशोपत नाहि,

विश्व न तेजस प्राग्य आहीं,

साखी रूप तूँ सभ जो साई,

जाणु अन्दर में हीउ अहिञाण....

4. तूँ ई विश्व जो कर्ता आहीं,

पोषण वारो भरता आहीं,

प्रलय रूप पिणि हरता आहीं,

माधव ही सभ तुंहिजो माण।

अर्थः- सत्गुरू महाराज इस भजन में गहरे रहस्य की बात कहते हैं। स्वामी जी कहते हैं कि तुम स्वयं परमात्मा के अंश आत्म स्वरूप हो, तुम अपना सत्य स्वरूप अखण्ड रूप पहचानो। तुम देह स्थूल नहीं हो देह कारण नहीं हो, न ही सूक्ष्म देह और न साधारण देह हो तुम सब से न्यारे स्वयं नारायण हो इसलिये तुम्हारे मन में जो भ्रम है उन्हें निकालो।

तुम उन पांच कोषों से न्यारे हो। तुम उस प्यारे परमात्मा के रूप हो। सारे जग के तुम सहारे हो इसलिये अपनी आखें खोलो और अपने आप को पहचानो।

जो तुम जागृत में हो, वह तुम नहीं, तुम स्वप्न में जो देखते हो वह भी तुम नहीं हो, तुम सुशोपत भी नही हो न तुम विश्व हो न तेजस हो न ही पराग्य हो। तुम तो केवल सबके साक्षी रूप हो। यह बात तुम अपने अन्दर जानो।

तुम ही विश्व के कर्ता हो और तुम ही उसका पोषण करने वाले हो। प्रलय करने वाले मालिक भी तुम ही हो। हे माधव यह शक्ति सब तुम्हारी है।

सतगुरू महाराज ज्ञान के सागर थे। अब अपने शिष्य पर अति प्रसन्न थे और खुश होकर उन्हें ज्ञान रूपी गंगा में खूब डुबकिया खिला रहे थे। कहने लगे हे पुत्र! तुम चौदह त्रपटी, तीन देहों, तीन जीवों और पाँच कोषों से न्यारे दृष्टा रूप उन सबके जाने वाले तुम्हारे अन्दर है। हम तो तुम्हे केवल तुम्हारा सच्चा स्वरूप दिखायेंगे ताकि तुम अपने आप को पहचान सको और अपने आप को पहचानने से ही मुक्ति मिलेगी। इसे ही आत्म ज्ञान कहते है। पूर्ण सत्गुरू अपने शिष्य को केवल आत्म ज्ञान प्राप्त करने का रास्ते बताते हैं। स्वामी जी सत्गुरू महाराज से पूछने लगे कि सत्गुरू अपने शिष्य को वह रास्ता पहचानना कैसे दिखाते हैं। तब सत्गुरू महाराज ने यह समझाने के लिए एक दृष्टान्त बताया।

दृष्टान्तः- एक बार एक शेरनी बच्चा पैदा करके आप शिकार को चली गयी। पीछे से भेड़े चराने वाला पाली आ गया। उसने बच्चे को उठा लिया और भेड़ का दूध पिलाकर उसे पाल लिया। अब वह शेर का बच्चा बड़ा हो गया। इत्तिफाक से एक शेर वहाँ आ गया, उसने देखा कि एक शेर का बच्चा भेड़ों के साथ घूम रहा है। वह उस शेर के बच्चे के पास गया और कहा तू तो शेर है। बच्चे ने कहा ‘‘नहीं मैं तो भेड़ हूँ ’’ शेर ने फिर कहा, शेर ने फिर कहा, ‘‘नहीं तू शेर है।’’ शेर के बच्चे ने फिर वही बात दोहराई कि नही, मैं भेड़ हूँ । उस शेर ने कहा मेरे साथ नदी पर चल। जब नदी के किनारे पर पहुँचे तो शेर ने कहा कि पानी में देख तेरी और मेरी शक्ल एक है। शेरनी का बच्चा कहता है, हाँ! फिर शेर ने कहा, मैं गरजता हूँ , तू भी गरज। शेर गरजा, साथ ही शेर का बच्चा भी गरजा। नतीजा यह हुआ कि भेड़ें भाग गई और पाली भी

भाग गया। अब उस शेर के बच्चे को ज्ञान आया कि मैं भी इस बड़े शेर के समान ही हूँ । यह देख कर बड़े शेर को बहुत प्रसन्नता हुई कि आज मैंने एक भूले हुए आपने निज स्वरूप से वंचित शेर को अपना वास्तविक स्वरूप दिखाया है।

इसी प्रकार पूर्ण सत्गुरू सच्चे आत्म ज्ञान द्वारा अपने शिष्य को अपना सच्चा आत्म स्वरूप दिखाते हैं। और यह समझाते हैं कि वह उस मालिक का अंश है। इन्द्रियाँ भेड़े है, पाली या चरवाहा मन है। जब कभी जिज्ञासु को पूर्ण गुरू मिलता है तब वह उसे कहता है तू आत्मा है और परमात्मा का अंश है। तू अन्दर जाकर अपने आप को पहचान और परख। जब पूर्ण सत्गुरू के मार्ग दर्शन में आत्मा अपने आप को पहचान लेती है। तो मन और इन्द्रियों से छुटकारा पाल लेती है। यह कह कर फिर एक शब्द द्वारा आत्म ज्ञान का रहस्य समझाने लगे।

भजन (स्वर टोरी)

आह सत चित्त आनन्द रूप तुंहिजों,

ही अखण्ड रूप अनूप तुंहिंजो।

1. ही फिरणी जींअ संसार अथई,

बाणियों जग में जेकी जिसार अथई

सभ कुल्पति जो वहिंवार अथई

आहे सत रूप स्वरूप तुहिंजो।

2. ब्रह्म में ओम उच्चार थियो

तहि मां कर्ता रूप कर्तार थियो

सभ माया जो त पसार थियो

तंहिं में अणु रूप अरूण तुहिंजो

3. हिन माया मां मह तत्व बणिया

तिनि तत्वनि मां ई गुण थियो

तिनि गुणनि पंहिजा अंश रचिया

4. आह माधव सभ में सार सच्चो

आहे ब्रह्म रूप निर्धार सच्चो

आहे कख पन में कार्तर सच्चो

सो भूपनि जो न भूप तुंहिंजो।

(अर्थ):- इस शब्द में सत्गुरू महाराज जी ने समझाया है कि तुम सत चित् आनन्द रूप हो। तुम्हारा अखण्ड और अनूप रूप है। यह संसार चक्री के समान है। संसार के अन्दर जो कुछ तुम देखते हो यह सब झूठी माया है। तुम्हारा जो सच्चा आत्मा रूप है वही सत्य स्वरूप है।

सबसे पहले ॐ का उच्चारण हुआ। उससे कर्ता रूप कर्तार बना। उसके बाद माया का निर्माण हुआ। उसमें तुम्हारा अणुरूप है। इस माया से यहां तत्व बने। उन्हीं तत्वों में से गुण बने। उन गुणों ने अपने अंशों की रचना की उन अंशों में अणु रूप तुम्हारा है।

इन सब में सच्चा सार वह ब्रह्म रूप परमात्मा ही है। वह परमात्मा सब का आधार है। इस पत्ते पत्ते में सच्चे कर्तार है। वही परमात्मा तुम्हारी आत्मा का स्वामी है।

सत्गुरू महाराज जी ने उन्हें सूक्षम ज्ञान बता कर गुरू मंत्र का दान दिया। मंत्र देकर सत्गुरू महाराज जी कहने लगे माधव! यहा रहकर तुम्हें कुछ नियमों का पालन करना होगा। उन नियमों का पालन करने से तुम्हे पूर्ण पद की प्राप्ति होगी। मुझे प्रसन्नता हुई है कि तुम्हारे अन्दर पूर्ण शिष्य के सभी गुण उत्पन्न हो गए है। बस अब उन नियमों का पालन

करते करते तुम संसार के बन्धनों से मुक्त होकर विदेह मुक्त बन कर एक दिन परम पद को अवश्य प्राप्त करोगे। परन्तु यह सब सच्ची करनी से ही सम्भव होगा। यदि करनी सच्ची नहीं है तो कथनी बेकार है। फिर उस नाम लेने से कमाई सफल नही होगी। ऐसा कह कर सत्गुरू महाराज जी ने उनको एक दृष्टान्त सच्ची करनी का बताया:-

दृष्टान्त:- एक गाँव में एक पहुँचे हुए सन्त पधारे। उनकी कीर्ति चारों दिशाओं में फैल गई। दूर दूर से दुखी प्राणी उनके दर्शन और आशीर्वाद के लिये आने लगे। कोई भी सवाली उनके द्वार से खाली नही लौटा। यह सुनकर एक माँ अपने बीमार बेटे को लेकर उनके शरण में आई। उस दुर्बल बालक को देखकर संत जी ने दिल में दया आ गई। उस माँ को बुलाकर पूछा कि इस बालक को कौनसा कष्ट है। वह रूआंसी होकर बोली महाराज सब वैद्य हकीमों को दिखाया परन्तु कोई भी दवा असर नही करती। बीमारी का किसी को पता ही नही चलता। बस बालक दिनों दिन कमजोर होता जा रहा है।

सन्तों ने माँ से पूछा कि यह बालक क्या क्या खाता है। महिला ने उत्तर दिया ''महाराज! जो घर में बनता है वह सब खाता है परन्तु सारा दिन गुड़ पर मार है गुड़ का पीछा ही नही छोड़ता'' सन्तों ने महिला की बात सुनकर उसे सात रोज बाद आने के लिये कहा। महिला 'सत्य वचना' कह कर जाती रही। महिला ने एक एक दिन गिन कर काटे। आखिर वह शुभ दिन आया। उसने प्रभात को उठकर स्नान किया और बालक को लेकर संतों की ओर चल पड़ी और आखिर मंजिल पर पहुँच गई। सबके चले जाने पर संत जी ने मां को बच्चे सहित बुलाया। बालक को अपने पास बिठाकर उसके सर पर हाथ फेरा और कहा कि बेटे! आज के पश्चात गुड़ बिल्कुल नही खाना। बालक ने सन्तों के चरणों में झुक कर यह प्रण किया कि आज के बाद गुड़ को हाथ नही लगाऊंगा। यह सब देख कर महिला के मन में एक शंका उत्पन्न हुई। सोचने लेगी कि संत जी ने बालक को न कोई दवाई दी न कोई फंकी केवल बालक को कहा कि गुड़ मत खाना। यह बात तो संत जी पिछली बार भी कह सकते थे बेकार में मुझ वृद्धा को दस कोस का चक्कर कटवाया। महिला के चेहरे पर शंका के भाव देखकर संत

जी उसके मन के भाव समझ गये, कहा कि माँ! तुम्हें कोई शंका हो तो पूछो। हम उसका समाधान करेंगे। उस पर महिला बोली, मैं यहाँ से दस कोस दूर रहती हूँ । पिछले सप्ताह जब में आपके पास आई थी तो आपने मुझे सात रोज प्रश्चात आने के लिए कहा था। मैंने सोचा शायद आप बालक के लिये कोई औषधि तैयार करना चाहते है। किन्तु आपने तो इसे कुछ भी नही दिया। केवल कहा कि आज के बाद गुड़ मत खाना। सो यह नसीहत तो आप इसे पिछले सप्ताह भी दे सकते थे। फिर आपने मुझ वृद्धा को दस कोस का चक्कर क्यों कटवाया। इस पर संत जी ने उत्तर दिया कि माताजी! जब आप पहली बार इस बालक को लेकर मेरे पास आई थी तब मैने इसकी बीमारी का कारण समझा था। बीमारी का कारण गुड़ था और गुड़ छोड़ने के बिना वह ठीक नहीं हो सकता था। हमने यह नसीहत उसे देनी चाही, परन्तु उस दिन भोजन में हमने गुड़ खाया था ऐसी स्थिति में हम उसे गुड़ नही खाने की नसीहत करते तो उसका असर बिल्कुल नही होता, क्योंकि बिना करनी के कथनी बेकार है। हमने पूरा सप्ताह गुड़ खाने से परहेज की है। और उसके बाद ही बालक को गुड़ खाने से मना किया है। इसलिये हमारी करनी का कथनी पर प्रभाव होगा और बालक अब गुड़ बिल्कुल नही खायेगा और ईश्वर की दया से अवश्य ठीक होगा। यह बात सुन कर महिला के दिल में संत के लिये पहले से ज्यादा श्रद्धा और आदर पैदा हुये।

यह दृष्टान्त बता कर सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी से कहा कि बेटे इस राह में सच्ची करनी से ही मंजिल पर पहुँच सकेंगे। इस बात को भली प्रकार समझाने के लिये भजन सुनाया

भजन (स्वर हसीनी)

रहिणी सां योगी सिद्धीअ खे खा पाईन,

फिरणां सब मिटाए ब्रह्म में समाईन।

1. धरे ध्यान दिल में ओम जे अखर जो,

    प्राणनि खे रोके टिक में टिकाईन।

2. विहनि से वेरागी पदम सिद्ध आसन ते,

    वृत्तीअ खे त द्वारे दसवे लगाईन।

3. सुणी साज़ सुहिण्णो अनहद जे आवाज़ जो,

    शब्द साण सुरती मोड़े त मिलाईन।

4. सिद्धीअ साण साधे माधव मुद्राऊँ

    अखण्ड जोत अनुभव अन्दर में जगाईन।

(अर्थ):- सत्गुरू महाराज जी इस भजन में कहते है कि शुद्ध आचरण से योगी जन सिद्धि को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार रहनी से भ्रम भुलाकर वे ब्रह्म से समा जाते है। दिल में ॐ का ध्यान कर प्राणों को रोक कर ध्यान तीसरे नेत्र में लगाते है।

वे सिद्ध पुरूष पद्मासन या सिद्ध आसन में बैठ कर अपनी वृत्ति दसवें द्वार में लगाते हैं। वे अन्तरमुख होकर अन्तरात्मा के सुन्दर साजु अनहद को सुनकर अपनी सुरत को मोड़कर शब्द के साथ जोड़ते हैं।

वे सिद्धि के साथ मुद्राओं को साध कर अपनी अन्तरात्मा के अनुभव की अखण्ड जोत जगाते हैं। स्वामी जी हाथ जोड़र कर नम्रतापूर्वक सामने बैठै थे और उनके द्वारा दिया गया ज्ञान प्रेम पूर्वक ग्रहण कर रहे थे। सत्गुरू महाराज उनका स्नेह एवं श्रद्धा देकर उन्हें ज्ञान रूपी गंगा में गहरी डुबकियां दिला रहे थे। सत्गुरू महाराज फरमाने लगे कि इंसान में दो प्रकार की शक्ति है। एक शारीरिक दूसरी मानसिक। जो कार्य इंद्रियों द्वारा किया जाता है उसे शरीरिक

शक्ति कहा जाता है। जो कार्य मन और ज्ञान इन्द्रियों से किया जाता है उसे मानसिक शक्ति कहा जाता है। उस शारीरिक शक्ति को प्राप्त करने के लिये ये आसन्न करने चाहिये।

सिहासन्न, पद्मासन्न, अर्द्वपद्मासन्न, मस्तेन्द्रासन्न, अर्द्वमस्तेन्द्रासन्न, सर्वाग आसन्न, शीर्षासन्न, पश्चमोतान आसन्न, अर्द्व पश्चमोतान आसन। इन आसन्नों को नियमपूर्वक करने से शरीर निरोग एवं स्वस्थ रहेगा और स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। इस शरीर को ईश्वर की दी हुई अमानत समझ कर उसे स्वस्थ रखना चाहिये। इस शरीर रूपी मन्दिर में ईश्वर रूपी आत्मा निवास करती है। इसलिये शरीर की शुद्धि और शक्ति के लिये प्रयत्न करना आवश्यक है।

शारीरिक शक्ति के साथ साथ मानसिक शक्ति के विकास के लिये इन नियमों का पालन करना चाहिये।

(१) पूर्ण ब्रह्मचर्य अर्थात् मन, कर्म और वचन शुद्धता (२) चौबीस घण्टों में केवल एक बार भोजन करना। (३) शुद्ध भोजन करना अर्थात् सादा और पवित्र भोजन करना। (४) नशीली वस्तुऐं जैसे कि तम्बाकू, शराब आदि भूल से भी प्रयोग में न लाना। (५) अपने शरीर और वस्त्रों को स्वच्छ रखना (६) जबान को सदा पवित्र रखना, कभी भी अप्रिय शब्द नही बोलना (७) अपने मन के विचारों को सदा पवित्र रखना। कभी भी खराब विचारों को अन्दर आने की इजाजत नही देना (८) यथा सम्भव शुभ एवं सत्कर्म करना (९) सांसारिक पदार्थों की चाहत नहीं करना। (१०) मन को अविश्वसनीय समझकर सावधान रहना और अपने बस में रखना (११) प्रात:काल चार बजे उठ कर ध्यान एवं स्मरण करना।

उपरोक्त उपाय बताने के पश्चात सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी को एक नौ इंच लम्बा व चार इंच चौड़ा कागज लाने के लिये कहा और उस पर निम्नलिखित मंत्र काली स्याही से लिखने की आज्ञा दी।

''मेरी इच्छा शक्ति प्रबल है,

मैं इस शक्ति के बल से

समस्त कार्य पूर्ण कर सकता हूँ ।''

प्रति दिन एक मिनट के लिए इस कागज को खोल कर देखते रहना और आंखे बंद कर जितना हो सके मन को एकाग्र कर उपरोक्त मंत्र कहते रहना। उसके बाद कागज लपेट कर अपने पास रख लेना ओर दिन रात जब तक जागते रहो तब तक एक एक घण्टे के बाद इस कागज पर लिखे मंत्र पर एकटक ध्यान लगा कर उस मंत्र को कहते रहना। सोते समय चार मिनट ध्यान लगाकर चालीस बार यह मंत्र कहकर फिर सो जाना। इसके साथ चन्द्रमा और सूर्य पर भी ध्यान लगाना। सूर्य के उदय और अस्त होते समय जब सूर्य गोल दिखता है उस समय उस पर दो मिनट ध्यान लगाना परन्तु पलक नही झपकना। प्रारम्भ में थोड़ा थोड़ा ध्यान लगाना फिर बढ़ाना। उसी प्रकार चन्द्रमा पर भी ध्यान लगाना। परन्तु चन्द्रमा पर केवल शुक्ल पक्ष में ही ध्यान लगाना। ध्यान लगाने के आधे घण्टे तक आंखों पर पानी मत लगाना।

इस मंत्र की महिमा बहुत बड़ी है। जिस समय यह मंत्र सिद्ध हो जायेगा तब तुम्हारे अन्दर अपार शक्ति उत्पन्न हो जायेगी और उस शक्ति से तुम हर कार्य को सम्पूर्ण कर सकोंगे। इस मंत्र से तुम्हारी संकल्प शक्ति मजबूत हो जायेगी और उस संकल्प शक्ति द्वारा तुम अपनी मंजिल तक पहुँच सकोगे। जो तुम चाहोगे उसे प्राप्त कर सकोगे और जो तुम बनना चाहेगे वैसे ही बन जाओगे। उसके बाद अपने मन को ब्रह्म स्वरूप बनाने के लिये इन योग मुद्राओं का अभ्यास करते रहना।

मुद्रांए भी पांच प्रकार की होती है।

(१) खेचरी (२) भूचरी (३) चाचरी (४) अगोचरी (५) अनमनी। उन्हें निम्नलिखित विधि से साधा जा सकता है।

(१) रसना को ऊपर तालू से लगाकर ध्यान लगाने से खेचरी मुद्रा को साध कर बस में किया जा सकता है।

(२) इड़ा और पिंगला नारी से प्राण उपान वायु द्वारा प्राणायाम कर भोजरी मुद्रा को साधा जा सकता है।

(३) नेत्रों द्वारा त्रिकुटी से ध्यान लगाकर चाचरी मुद्रा को साधा जा सकता है।

(४) अपने कानों को बंद कर अनहद शब्द द्वारा अगोचरी मुद्रा को साधा जा सकता है।

(५) दसवे द्वार में ध्यान लगाकर अनमनी मुद्रा को साधा जा सकता है।

मुद्राओं का ज्ञान देने के पश्चात सत्गुरू महाराज जी कहने लगे कि मंत्र योग का ध्यान इस तरह करना। पहले सिद्ध आसन्न में बैठकर आत्म स्वरूप में ध्यान लगाकर गुरू मंत्र ढाई घण्टे युक्ति और विधि से स्वच्छ स्थान पर बैठकर स्मरण करते हुए इन दस अनहद अवाजों को सुनना।

(१) शं्ाख (२) सारंगी (३) बीन (४) चंग (५) सितार (६) मृदंग (७) भैरव

(८) पायल (९) सिंह गरजना (१०) बादल।

इन आवाजों को सुनने के लिये पहले सिद्ध आसन्न बांधकर बैठना ताकि सारा शरीर सीधा और गर्दन भी सीधी रहे। निगाह नाक के अग्र भाग पर लगाकर प्राणायाम करना। नाक की एक तरफ की नासिका से प्राण धीरे धीरे ऊपर चढ़ाकर थोड़ी देर शक्ति अनुसार रोककर दूसरी और की नासिका से धीरे धीरे उतारना। यह ध्यान रखना कि जितना समय सास ऊपर चढ़ाने में लगे उतना ही समय सांस नीचे उतारने में भी लगना चाहिये। इस प्रकार प्राणायाम कर अपनी सुरत उसमें लगाकर अन्दर में महामंत्र के अर्थ का विचार करना। इस योग को करने से मन आत्म स्वरूप में लीन हो जायेगा।

सत्गुरू महाराज कहने लगे कि हम तुम्हें राजयोग के बारे में बताते हैं। राजयोग इस तरह करना । इस योग के आठ अंग हैं-

(1)यम (2)नियम (3)आसन्न (4)प्राणायाम (5)प्रतिहार (6)धारणा (7)ध्यान (8)समाधि ।

यम के फिर दस लक्ष्ण हैं-

(1)अहिंसा (2)सत्य बोलना (3)चोरी या झूठ कपट न करना (4)ब्रह्मचर्य का पालन करना (5)क्षमा (6)धीरज (7)दया (8)आरज्य (9)कम खाना (10)शौच।

नियम के निम्नलिखित दस लक्ष्ण हैं।

(1)तप (2)संतोष (3)सत्गुरू सत् शास्त्रों व ईश्वर में श्रद्धा (4)दान (5)ईश्वर का स्मरण (6)ध्यान (7)धैर्य (8)द्दढ़ता (9)श्रवण, जाप।

लय योग के लिये दो मुख्य आसन्न हैं-

(1)सिद्ध आसन्न (2)पद्म आसन्न

सिद्ध आसन्न इस प्रकार किया जायेगा-

सबसे पहले पाल्कथी मार कर जमीन पर बैठना चाहिये। उसके बाद बायें पांव की एड़ी को खींच कर अन्दर रखना चाहिये, उसके बाद दायें पांव की एड़ी को ऊपर रखना चाहिए और मेरूदण्ड को सीधा रखकर बैठना चाहिये।

पद्म आसन्न में इस प्रकार बैठना चाहिये-

सबसे पहले जमीन पर मृघमछाला कम्बल या आसन बिछाकर उस पर पाल्कथी मार कर बैठना चाहिये। अब बायां पांव दायी जांघ पर रख कर दायां पांव उठा कर बायीं जांध पर

रखकर बैठना चाहिये। अब दोनों हाथ पीछे कर बांये हाथ से दाये पांव के अंगूठे को और दायें हाथ से बायें पांव के अंगूठे को पकड़ना। इस को पद्म आसन्न कहते हैं।

इस प्रकार योगाभ्यासन का ज्ञान देकर सत्गुरू महाराज कहने लगे कि योग का नियम से नित्य प्रति अभ्यास करने पर हमारा मन ब्रह्म स्वरूप बन जायेगा और हम अपनी ही अन्तर आत्मा में गहरा अन्दर जाकर परमात्मा के दर्शन कर मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। यही मनुष्य देह धारण करने का उद्देश्य है। परमात्मा ने हमें यह श्रेष्ठ मनुष्य जामा, जिसे अश्रफे मखलूकात कहते हैं, इसलिये दी है कि हम नाम का स्मरण कर परमात्मा को प्राप्त कर सकें। यह सब केवल इसी मनुष्य जीवन में सम्भव है। यदि हमने इस जन्म को माया जाल में फंसाकर मूर्खता से व्यर्थ गंवा दिया तो फिर हम पछतायेंगे और फिर पछताने से कुछ भी हाथ नहीं आयेगा। इस बात को अच्छी तरह समझाने के लिये सत्गुरू महाराज ने एक दृष्टान्त बताया।

दृष्टान्त : एक बड़ा गरीब दुकानदार था। उसका गुजारा नहीं होता था। इत्तिफाक से एक महाराज उसके पास आये। उस दुकानदार ने बड़े प्रेम से उनकी सेवा की। जब महात्मा प्रसन्न हुए तो अर्ज की मैं गरीब हूँ । मेरा गुजारा नही होता, आप मुझ पर कृपा करो। महात्मा मेहरबान हो गये। और कहने लगे कि मेरे पास पारस है, मैं तुम्हें तीन महिने के लिये देता हूँ । इतने समय में चाहे जितना सोना बना लेना। महात्मा तो कृपा करके चले गये, लेकिन जीव के अपने भाग्य भी कुछ होते हैं। यह दुकानदार बाजार गया। पूछा कि लोहे का क्या भाव है? लोहे वालों ने कहा पहले तो पांच रूपये मन था अब नौ रूपये मन है। कहता है "मुझे यह घाटे का सौदा नहीं करना।" मूर्ख को इतना पता नही कि एक मन सोने का कितना रूपया होता है। कहता है "जब पांच रूपये मन होगा तब खरीदूँ गा।" घर लौट आया। दूसरे महीन फिर बाजार गया और पूछा लोहे का क्या भाव है? दुकानदार ने कहा,"लालाजी, अब तो अठारह रूपये मन है।" कहता है, "जब पांच रूपये मन होगा तब खरीदूँ गा "तीसरे महीने

फिर बाजार गया और पूछा कि लोहे का क्या भाव है? लोहे का भाव पहले से भी बढ़ गया था खाली हाथ वापस आ गया।

इतने में तीन महीने गुजर गये। उधर महात्मा ने सोचा कि चलो चलें और जाकर अपना पारस ले आयें। उस दुकानदार ने तो आलीशान मकान बनवा लिये होंगे। लेकिन जब आया तो देखकर हैरान रह गया। वही टूटी हुई दुकान, वही पुरासा सा मकान। महात्मा अपना पारस लेकर चले गये। यही मिसाल हम पर घटती है। मनुष्य जन्म पारस है। महात्मा परमात्मा है, जिसने हम पर कृपा करके हमें मनुष्य जन्म दिया है। हमारे अन्दर परमात्मा अकाल पुरूष है। अगर हम मनुष्य जन्म में आकर अन्दर न गये और परमात्मा का साक्षात्कार नही किया तो हमसे अधिक खोटे भाग्य वाला कौन है दृष्टान्त बताने के पश्चात सत्गुरू महाराज स्वाजी जी को इन्द्रियों का ज्ञान कराने लगे।

1. स्थूल देह पांच तत्वों एवं पच्चीस प्रकृतियों की बनी हुई है।

2. सूक्ष्म देह पाँच तत्वों की बनी हुई है। पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ पाँच कर्म इन्द्रियां, पांच प्राण, सोलवां मन और सतरवीं बुद्धि।

पाँच ज्ञान इन्द्रियां है। 1. कान, 2. आंखे, 3. नाक, 4. जुबान, 5 त्वचा

पांच कर्म इन्द्रिया है। 1. मुँह, 2. हाथ, 3. पांव, 4. मलमूत्र त्यागने वाली दो इन्द्रिया।

पाँच प्राण है। 1. प्राण 2. अपान 3. समान 4. उदान 5. व्यान।

1. प्राण वायु हृदय में रहती है, रात दिन में इक्कीस हजार छः सौ श्वांस लेने का काम करते हैं।

2. अपान वायु मूल में रहती है मलमूत्र एवं गन्दी वायु को बाहर निकालती है।

3. समान वायु नाभि में रहकर भोजन में रस निकाल कर नाड़ियों द्वारा सारे शरीर में पहुँचाती है।

4. उदान वायु कण्ठ में रहकर जो हम भोजन खाते हैं जल पीते हैं उनको अलग अलग नलियों में भेजने का काम करती है।

5. व्यान वायु सम्पूर्ण शरीर के जोड़ो में रहकर जाड़ों को हिलाने डुलाने का कार्य करती है।

कुछ महात्मा उप प्राणों का जिक्र करते है वे इस प्रकार है।

1. कोरम 2. क्रीकट 3. नागट 4. देवदेत्त 5. धंनज

1. कोरम- आँखों के पलकों में रहकर पलकों को हिलाने डुलाने व खोलने-बंद करने का कार्य करता है।

2. क्रीकट नाक में रहकर छींक देने का कार्य करता है।

3. नागट- मुख में रहकर डकार देने का कार्य करता है।

4. देवदत्त-कण्ठ में रहकर उबासी देने का कार्य करता है।

5. धंनज्य- सम्पूर्ण शरीर में रहकर चोट लगने का या फोड़ा फुंसी होने पर अंग को फुलाने का कार्य करता है और मृत्यु के पश्चात भी शरीर को फलाने का कार्य करता है।

इस प्रकार पूर्ण सत्गुरू से पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर पूर्ण शिष्य बिल्कुल झूमने लगा और खुश होकर अपने सत्गुरू की स्तुति करने लगा।

भजन (स्वरा तलंग)

सद् वार वत्रा बुलिहारी

मां त सत्गुरू तां सौ वारी

1. सत्गुरू पूरे ज्ञान बतायो

सभ हंधि पूर्ण ज्ञान लखायो

खोले बेहद जी चौबारी

2. सत्गुरू पूरे जोत जगाई,

सम हंधि सागी सूरत लखाई,

टोड़े अविधा मोह जी जारी

3. सत्गुरू पूरे पाती सराई,

जन्म जन्म जी मेटे ऊँदाही,

हणी ज्ञान सन्दी त कटारी....

4. तन मन माधव पल में ठारियों,

लाए अनभई जी त खुमारी,

सद वार वञा बलिहारी

मां त सत्गुरू तां सौ वारी....

(अर्थ):- इस भजन में स्वामी जी कहते है कि मैं अपने सत्गुरू पर सौ बार बलिहारी जाऊँ। पूर्ण सत्गुरू ने अन्दर के पट खोलकर पूर्ण ज्ञान प्रदान किया है। सत्गुरू ने अन्दर में ज्ञान की जोत जगाकर सब जगह परमात्मा के दर्शन करवा कर अविद्या और मोह की जाल को तोड़ दिया है। सत्गुरू महाराज ने ज्ञान की सलाई लगाकर अज्ञान के अन्धकार को मिटाकर

अन्दर में ज्ञान की कटार लगा दी है। स्वामी जी कहते हैं सतगुरू महाराज ने ज्ञान रूपी प्याला पिला कर तन मन को शीतल कर अनभइ की खुमारी चढ़ा दी है।

स्तुति करते-करते जैसे उनका मन ही नहीं भर रहा था। भला भरता भी कैसे? बड़ी मुश्किल से जाकर विनती स्वीकार हुई और मिल गई कृपा की कणी। पूरे सात वर्ष चलते चलते निकल गए। आना जाना बराबर जारी था। सेवा में किसी प्रकार की कमी नही रखी थी। मन मजबूत कर पांव पीछे नही हटाया था। फिर ऐसे लाल ही तो इतनी मस्ती और हस्ती रखने के हकदार है। परन्तु इस सफलता में भी नम्रता थी।

स्वामी जी गुरू ज्ञान प्राप्त कर सत्गुरू महाराज को वारों वार प्रणाम कर कहने लगे कि मेरे बड़े भाग्य जागे हैं जो आपने कृपा कर अपने चरन कमलों में मुझे स्वीकार किया है और मेरे अन्दर ज्ञान रूपी जोत जगाकर अन्धकार रूपी अज्ञान मिटाया है। आप बड़े कृपालू है जो सहारा देकर ऊपर उठाया है।

इस पर सत्गुरू महाराज स्वामी की इतनी विनम्रता और विनीत भाव देखकर कहने लगे कि माधव हम तुम पर अति प्रसन्न है और तुम्हारा स्नेह और श्रद्धा देखकर हमने तुम्हें अपना बनाया है। संत और भगवान तो भोले है। भक्त की सच्ची भावना देखकर वे सब कुछ लुटा देते हैं। इस सच्ची भावना से भगवान को प्राप्त करने का एक दृष्टांत बताते हैं।

दृष्टांत:- एक गांव में एक मन्दिर था उस मन्दिर में भगवान राम व सीता जी की मूर्ति स्थापित की हुई थी। उस मन्दिर की सेवा एक सुशील व ज्ञानी ब्राह्मण विधि विधान एवं शुद्धता से करता था। उस पूजा पाठ में उसका शिष्य उसकी सहायता करता था। कुछ दिनों बाद किसी कार्य वश उस ब्राह्मण को गाँव के बाहर जाना पड़ा। जाने से पूर्व उसने अपने शिष्य को बुला कर भगवान की पूजा, आरती व भोग लगाने की विधि बताते हुए कहा कि बेटा! एक बात का खास ध्यान रखना कि स्नान ध्यान कर सबसे पहले भगवान को भोग लगाना और भगवान के भोजन करने के पश्चात ही तुम भोजन करना।

ब्राह्मण देवता के जाने के पश्चात वह भोलाभक्त रात भर यही सोचता रहा कि गुरू महाराज ने यह तो बताया ही नहीं कि भगवान को क्या क्या पंसद है। आखिर दिल में सोच कर निश्चित किया कि सुबह हलवा, पुरी, रात्रि में खीर बनाऐंगे। ये पकवान मुझे भी पसन्द है और भगवान भी अवश्य खुशी से खाएंगे। सुबह होती ही सफाई से स्नान कर बड़े चाव से भगवान के लिए भोजन तैयार किया और आरती सजाकर भगवान पर भोग लगाकर अरदास की कि हे भगवान! यह भोजन मैंने आप के लिये बड़े स्नेह और श्रद्धा से बनाया है, आप कृपा कर इसे स्वीकार कीजिए। कुछ समय बाद पर्दा हटा कर देखा तो भोजन वैसे का वैसा पड़ा था। दिल में बड़ा डर लगा कि न जाने कौन सी गलती हुई है कि भगवान भोजन ही नहीं करते हैं। भगवान को बारों बार प्रार्थना कर भोजन करने की विनती करने लगे। उसे भी भूख सताने लगी परन्तु गुरू की आज्ञा आ उल्लंघन कैसे करें? गुरू महाराज ने आज्ञा की थी कि पहले भगवान को भोजन कराके फिर उसके बाद तुम भोजन करना। ऐसे करते करते रात हो गई। सोचा कि यह भोजन तो ठंडा हो गया है अब फिर गरम गरम खीर बनाकर भगवान का भोग लगाऊं। यह खीर तो पिस्ता, बादाम और केसरवाली बनाऊँ भगवान अवश्य ही लेंगे।

खीर बनाकर भगवान पर भोग लगाकर बड़े प्रेम से उन्हें भोग लगाने के लिये निवेदन करने लगा। थोड़े देर बाद बाद झांक कर देखा तो खीर वैसी की वैसी पड़ी थी। अब उसे यह चिंता सताने लगी कि गुरू महाराज बहुत नाराज होगे कि मैंने भगवान को भूखा रखा, इस चिन्ता में वह अपनी भूख ही भूल गया। सारा दिन अन्न जल ग्रहण न करने के कारण उसका शरीर कमजोर हो गया, परन्तु फिर भी जैसे-तैसे नये सिरे से भोजन तैयार कर भगवान को भोजन करने के लिये विनती करने लगा। ऐसा करते करते तीन दिन बीत गए अब गुरू के लौटने का समय आ गया। सो दीन मन होकर भगवान से विनती करने लगा कि यदि आप भोजन ग्रहण नही करेंगे तो गुरूजी नाराज़ होकर पता नही कौनसी सजा देंगे। सो यदि आप राज़ी होकर भोजन ग्रहण नही करेंगे तो मैं आप के चौखट पर सिर फोड़कर जान दे दूँगा।

अब भगवान से रहा नहीं गया, भक्त का ऐसा सच्चा और निष्कपट भाव देकर आकर साक्षात प्रकट हुए भक्त भगवान के दर्शन कर गद् गद् हो गया। उसके आंखों से खुशी के आ सूं बहने लगे जिन से पवित्र चरण धुल गए। भरे हुए गले से उन्हें उलहना देते हुए कहा कि आप ने इस भोले भक्त को इतना क्यों सताया? मेरे से यदि कोई गलती हो गई हो तो मुझे क्षमा करें। परन्तु पहले आप भोजन ग्रहण करें नहीं तो गुरूजी मुझ पर सख्त नाराज होंगे। क्षमा मांगकर कहने लगा कि आज आप को यह ठंडा भोजन ही करना पड़ेगा क्योंकि तीन दिन तक अन्न जल ग्रहण न करने के कारण मेरे अन्दर उठने का सामर्थ्य भी नहीं रहा है। भगवान ने उसे तसल्ली देते हुए कहा कि अब तुम कोई भी चिन्ता मत करो हम आ गये हैं अपने आप सब कुछ सम्भालेंगे। यह कहकर भगवान ने सीताजी को रसोई तैयार करने के लिए कहा, और प्रिय लक्ष्मण से जंगल से पानी और लकड़ी लाने के लिये कहा। थोड़े से समय में स्वादिष्ट भोजन तैयार हो गया। सब ने मिलकर प्रेम से खाया। इस प्रकार भगवान भक्त की सेवा में लग गए। थोड़े दिनों के पश्चात उसके गुरूजी काम-काज कर लौट आये और उससे हाल-चाल पूछने लगे कि बेटे भगवान पर भोग तो नियम से लगाते थे। इस भोले भक्त ने बताया कि आपके भगवान ने पहले तीन दिन खूब तंग किया, परन्तु मैं भी ज़िद्दी हूं, उन्हें निवेदन किया कि यदि भोजन नहीं करेंगे तो आपके चौखट पर सिर तोड़कर जान दे दूंगा और यह पाप आप पर पड़ेगा। बस भगवान इस धमकी से डर गये और दर्शन दिया व मेरी खूब सेवा करी। माता सीता स्वादिष्ट भोजन तैयार करती है। श्री लक्ष्मण जी जंगल में से लकड़ियां लाते हैं, भगवान राम स्वयं पानी भर कर लाते हैं और हम सब मिलकर भोजन करते हैं अब भी सब अपना-अपना काम कर रहें हैं। आप स्वयं चलकर देख लो। गुरू जी यह सुनकर विस्मय में पड़ गये। सोचने लगे कि शायद मेरे शिष्य को कुछ हो गया है जो ऐसी बहकी-बहकी बातें कर रहा है। भला भगवान की मूर्ति यह सब कार्य कैसे करेगी? सो अपने शिष्य को कहा कि चलकर यह सब मुझे दिखाओ। यह भोला भक्त उत्साह से अपने गुरू जी को रसोई में ले गये जहां सीता माता भोजन बनाती थी। परन्तु वहां तो सब नदार्द था। बेचारा यह देखकर विस्मय में पड़ गया। अपने गुरू को विश्वास दिलाने लगा कि यह सब सत्य है

इसमें कोई भी अतिश्योक्ति नहीं है। तब गुरू जी ने कहा कि यदि तुम सच्चे हो तो एक बार मुझे अपने भगवान के दर्शन करवाओ। सो यह भोला भक्त भगवान की मूर्ति के आगे खड़ा होकर दर्शन के लिये गिड़गिड़ाने लगा। भगवान ने अपने भोले भक्त की लाज रखने के लिये प्रकट होकर उसके गुरू को भी दर्शन दिया। यह देखकर गुरू गद्-गद् होकर कहने लगा कि आज इस भोले भक्त के भाग्य से मेरा भाग्य खुल गया जो साक्षात् भगवान के दर्शन हुए हैं। पूज़ा पाठ करते-करते उमर गुज़र गई परन्तु कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। अब मैंने समझा है कि भगवान भाव के भूखे हैं। जिस समय यह आत्मा मछली की तरह बिना जल के भगवान के लिये तड़पती है उस समय ही भगवान के दर्शन होते हैं।

यह दृष्टांत बताकर सतगुरू महाराज जी स्वामी जी से कहने लगे कि हमने जो ज्ञान तुम्हें बताया है वह तब सफल होगा जब दिन में गहरा भाव पैदा होगा। अन्दर में परमात्मा के पाने के लिये तड़प पैदा होगी। सत्गुरू महाराज जी के अमृत वचन सुनकर स्वामी जी कहने लगे कि ऐसा गहरा भाव भी आप की कृपा से उत्पन्न होगा। मैने आज अपना सब कुछ आप के चरणों में अर्पित किया है। मेरे बड़े भाग्य है जो आप जैसे कामिल सतगुरू को पाया है। यह कह कर खुशी में यह भजन गाने लगे।

भजन (स्वर तलंग)

वाह वाह अजु दर्शन थियों श्री महाराज जो

भाग जागिया कर्म फलिया, मुख दिठो सरताज जो

1. ताप ऐ संताप सा

हीअ जान सारी थी जले

थी वेई सीतल ऐ सुन्दर

पाए ज्ञान गुणु राज जो।

2. आश हुई मुहिजे अन्दर में

शल मिलां हिक बार मां

अजु उमेंदूँ सबि पुनियूँ

दर्शन पाए देव राज जो।

3. हथ बधी हाणे नमी

माधव कयां प्रणाम थो

शल रहे मंहिजे मथां

हथड़ो गुरूअ जे बाझ जो।

(अर्थ):- स्वामी जी इस भजन में कहते है कि मेरे भाग्य जागे हैं और किये हुए कर्मों का फल मिला है जो सत्गुरू महाराज जी के दर्शन हुए है। ताप और संताप से यह जान जल रही है। सतगुरू महाराज से ज्ञान प्राप्त कर यह पल में शीतल और सुन्दर हो गई, मेरे मन में यह अभिलाषा थी कि एक बार मैं अपने सत्गुरू से अवश्य मिलूं । आज देवराज सत्गुरू महाराज के दर्शन कर सभी आशाएं पूर्ण हो गई। स्वामी जी सत्गुरू महाराज से हाथ जोड़ कर यह विनती करते है कि मेरे सर पर सदा आप की कृपा का हाथ बना रहे।

बस इस प्रकार स्तुति कर हाथ जोड़ कर सत्गुरू महाराज जी के चरणों पर गिर पड़े और कहने लगे कि यह आशीर्वाद का हाथ सदा सर पर रखने की कृपा कीजिये ताकि मैं आप के बताए नियमों का पूरी तरह से पालन कर शिष्य के कर्त्तव्य का पालन कर सकूं । अब इस दास को मन्दिर की किसी सेवा करने की आज्ञा दीजिये। जिस से उस सेवा को करते करते जीवन सफल हो सके। सत्गुरू महाराज जी मुस्करा कर कहने लगे कि माधव तुम्हें कौनसी सेवा बताये? इस पर स्वामी जी ने बड़ी विनम्रता से उन्हें अर्ज की कि मैं इस पवित्र यज्ञ में

सेवा करने वाले संतों के बीच में अपने आप को श्री रामचन्द्र भगवान के कृपा पात्र गिलहरी के समान समझता हूँ यह कह कर सत्गुरू महाराज जी की सेवा में यह दृष्टान्त प्रस्तुत किया।

दृष्टांतः- जब समुद्र पार करने के लिये नल, नील, जामवन्त और अन्य महावीर श्रीराम का नाम लिखकर बड़े-बड़े पत्थर समुद्र में डाल कर पुल बना रहे थे उस समय भगवान श्री राम उनके पास खड़े रहकर दिल ही दिल में उनके परिश्रम एवं लगन को सराह रहे थे। तब उनकी दृष्टि अचानक एक गिलहरी पर पड़ी जो बार बार समुद्र में डुबकी लगाकर और आकर रेत पर लेटती रेत पर लौट पोट होकर समुद्र में डुबकी लगती। गिलहरी सुबह से शाम यही कार्य करती रही। आखिर भगवान राम से रहा नहीं गया सो गिलहरी के पास पहुँचकर उसे प्यार से अपने हाथ पर रखकर पूछने लगे कि भाई? तुम सुबह से शाम तक रेत में से समुद्र में समुद्र में से रेत में लेट कर क्या कर रही हो? उस पर गिलहरी ने विनम्रता से हाथ जोड़कर भगवान श्री राम को निवेदन किया कि हे भगवान आज सभी प्राणी, आप के सेवक माता सीता तक पहुँचने के लिये पुल बनाने का पवित्र कार्य अपनी यथा शक्ति कर रहे हैं। मैं आपका नन्हा सा जीव हूँ मेरे दिल में भी आप के लिए अपार श्रद्धा है सो सोचा कि मैं भी इस पुनीत कार्य में आप की यथा शक्ति सेवा करूँ। सो मैं हर बार समुद्र से डुबक लगाकर अपने आप को गीला कर आकर रेत में लेटती हूँ । गीला होने के कारण रेत के जो कण मेरे बालों मे चिपकते है, वे इस बार समुद्र में कूद कर डाल आती हूँ । सोचती हूँ कि कहीं थोड़ा पानी ऐसा करने से नीचे उतरे और मेरी सेवा स्वीकार हो जाये। भगवान श्री राम गिलहरी की भक्ति भाव देखकर बहुत खुश हुए और उसके ऊपर आशीर्वाद का हाथ रखकर अपने शरण में ले लिया।

यह कह कर स्वामी जी ने हाथ जोड़कर उन्हें निवेदन किया कि जो भी सेवा मिलेगी वह पवित्र भावना से दिल व जान से करूंगा। सत्गुरू महाराज ने फरमाया कि माधव! जो सेवा दूसरे संत आश्रम में रहकर कर रहे है, वही सेवा तुम्हें भी करनी होगी। उसके साथ भण्डारे की देख रेख का कार्य, तुम्हारी श्रद्धा और स्नेह देखकर तुम्हारे ऊपर रख रहे हैं। बस केवल सत्गुरू

महाराज के आज्ञा करने की देरी थी। स्वामी जी आश्रम की सेवा में दिल व जान से लग गए। दिन रात दिल में यही चिन्ता लगी रहती थी कि सेवा स्वीकार हो और उनके प्यार और रहमत की नजर सदा बनी रहे।

अब स्वामी जी आश्रय में रहकर आश्रम के समस्त कामो में भाग लेने लेगे। सुबह योग वशिष्ट निर्वाण प्रकरण की कथा होती थी, जो बड़े ध्यान से सुनते थे। उसके पश्चात सभी संत आश्रम की सेवा में लग जाते थे। स्वामी जी सर पर तगारी उठाकर आश्रम के निर्माण कार्य में खूब दिल से सेवा करते थे। यह सेवा करने के बाद सीधा भण्डारे की सेवा में लग जाते थे। भण्डारे की नजरदारी का कार्य बहुत सावधानी से करते थे। भोजन के पश्चात कण्डी (केर) के पेड़ के नीचे बैठकर तपस्या करते थे। सायंकाल आश्रम में नियम से सत्संग होता था। सत्गुरू महाराज जी बारी बारी से सभी सन्तों से सतसंग करवाते थे। जब स्वामी जी की बारी आती थी तब वे बड़े प्रेम से सुन्दर सत्संग करते थे। उनके गले में सरस्वती का वास था सो अब भजन गाते थे तो अब मुग्ध हो जाते थे। स्वयं भी भजन गाते हुए ऐसे खो जाते थे कि उन्हें सुद्ध बुद्ध ही नहीं रहती थी। उस समय उनके चेहरे से एक अलौकिक तेज दमकता था। दिनों दिन उनके राग में रस पैदा होने लगा। गले में मिठास के साथ साथ जबरदस्त बुलंदी भी थी। जिस समय वे भजन गाते थे उस समय दूर दूर से प्रेमी आकर्षित होकर उनके पास आते। धीरे धीरे स्वामी जी अपनी संत मण्डली में दूसरों से न्यारे ध्रुव तारे की तरह भिन्न दिखने लगे। जैसे आकाश में अनेक तारे हैं, परन्तु उन तारों में धुरव तारे की चमक व महत्व बिल्कुल न्यारा है उसी प्रकार आश्रम में सब के साथ रहते हुए भी उनका स्थान बिल्कुल अलग थलग बनता जा रहा था। सत्गुरू महाराज की कृपा दृष्टि भी दिनों दिन बढ़ती जा रही थी।

जब रात्रि को सब लोग जाकर विश्राम करते थे तब स्वामी जी मालिक को रिझाने के लिये झाड़ियों में जाकर नाम का स्मरण करते थे और योगाभ्यास में उनकी प्रारम्भ से ही रूचि थी। यहां सत्गुरू महाराज जी के योग्य मार्ग दर्शन में इस दिशा में तेजी से कदम बढ़ाने

लगे। योगाभ्यास करते करते उन्हें अजीब अनुभव होने लगे। धीरे धीरे उन्हें कुछ सिद्धियां प्राप्त होने लगी। आने वाली घटना की उन्हें पहले ही जानकारी हो जाती थी। जिस व्यक्ति को वे याद करते थे वह खिंचकर अपने आप उनके पास आ जाता था। उनके ज़बान में सरस्वती वास करने लगी। जो कुछ ज़बान में से निकलते वही हो जाता था। उस विचित्र घटनाओं का ज़िक्र जब सत्गुरू महाराज से करते थे तब वे कहा करते थे कि बेटे! मालिक के द्वार पर तेरी विनती स्वीकार हुई है। परन्तु मंजिल अभी बहुत दूर है। यह सब तो उस रंगी के रंग है। तुम देखते चलो परन्तु उन में अपने को नहीं भुलाना है और इन सिद्धियों का ज़िक्र किसी से मत करना। यह तुम्हारी जमा पूंजी है। किसी से ज़िक्र करने से कमाई घट जाती है और उन सिद्धियों का प्रयोग करने से हम मंजिल से दूर चले जाते है। जब कोई इन सिद्धियों का प्रयोग कर करामात दिखाता है तब उसमें अहंकार भर जाता है और जैसे एक मयान में दो तलवारें नही समा सकती है वैसे ही खुदी और खुदा कभी साथ नही रह सकते। खुदी बन्दे को खुदा से जुदा करती है। इसलिये बेटे यदि उस मालिक को पाने की अन्दर में अभिलाषा है तो इन सबसे किनारा करना। जब सच्ची कमाई कर मंजिल पर पहुँचोंगे और परमात्मा से साक्षात्कार होगा तब ये सब सिद्धियां तुम्हें झूठे कंचों के समान मालूम होंगी और वे तुम्हारे पीछे अपने आप आयेगी। यह रिद्धियां सिद्धियां तो मालिक के तरफ से भेजी हुई परीक्षाऐं है। जो साधक लालच से दूर रहकर परीक्षा में पास होगा वही मंजिल पर पहुँचकर सच्चे मालिक का सच्चा प्यार पायेगा। इस बात को हम इस दृष्टांत द्वारा खोलकर समझाते है।

यह कहकर सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी को निम्न दृष्टांत बताया।

दृष्टांत:- यह बात गुरूओं के छठी पातशाही की है। उस समय गुरू हर गोविन्द राइ गद्दी पर विराजमान थे। उनका साहब ज़ादा बाबा अटल उनको बहुत प्रिय था। बाबा अटल गुरू महाराज पिता साहब के आज्ञाकारी सुपुत्र थी। गुरू कृपा से नाम की कमाई कर मंजिल पर आगे बढ़ रहे थे। गुरू साहब हरगोविन्द राय प्रतिदिन शाही दरबार में बाबा अटल से रहरास का पाठ सुनते थे।

बाबा अटल की अभी बाल्यावस्था, वे फुरसत के समय अपने मित्रों से गिली डंडा खेलते थे, उन मित्रों में मोहन उनका घनिष्ठ मित्र था। एक दिन सायंकाल खेलते खेलते संध्या हो गई। बाबा अटली बारी ले रहे थे और मोहन बारी दे रहा था। परन्तु अन्धेरा होने के कारण खेल बन्द करना पड़ा। और यह निर्णय किया गया कि कल खेल जारी रहेगा। बाबा अटल बारी लेगे और मोहन बारी देगा।

दूसरे दिन खले के समय बाबा अटल मोहन के घर मोहन को बारी देने के लिये बुलाने गये। वहां उनके सगे और पड़ौसी इकट्ठे होकर रो रहे थे। बाबा अटल ने जब मोहन के लिये पूछा तो उन्होंने कहा कि रात्रि को सांप के डसने के कारण मोहन की मृत्यु हो गई। बाबा अटल ने कहा कि ऐसा हो नहीं सकता। बिना बारी दिये मोहन नहीं जा सकता। इतना कह कर वे जमीन पर सोये हुए मोहन के पास पहुँचे और उसका हाथ पकड़ कर कहने लगे "उठ भाई मोहन! उठकर मुझे बारी दो, यह क्या स्वांग रचाया है। बाबा अटल को इतना कहना था और मोहन ऐसे उठकर खड़ा हुआ जैसे किसी ने गहरी नींद से जगाया हो। यह करिश्मा देख कर सबकी दांतों तले उगंलियां आ गई। मरा हुआ आदमी भी कभी जीवित हुआ है? बाबा अटल मोहन को ऐसे खेल पर ले गऐ जैसे कुछ हुआ ही नहीं था। सब लोग आश्चर्य से देखते रह गए। मृत मोहन के बाबा अटल द्वारा जीवित करने की खबर सारे शहर में बिजली के समान फैल गई। यह समाचार फैलता -फैलता गुरू हर गोविन्दराय जी के कान तक पहुँच गया। उन्हें बहुत अफसोस हुआ कि बाबा अटल यह करामात दिखाकर मालिक के हुक्म के आगे आये है।

गुरू महाराज जी नियम अनुसार सायंकाल रहरास के समय शाही दरबार में पहुँच गये और वहां बाबा अटल के आने की प्रतीक्षा करने लगे। थोड़ी देर बाद बाबा अटल हाथ मुँह धो कर जैसे दरबार में प्रवेश करने लगे वैसे ही गुरू महाराज जी ने उन्हें वही खड़े होने की आज्ञा दी और कहने लगे कि तुम शाही दरबार में आने के अधिकारी नहीं हो। तुमने आज मोहन को जीवित कर जो करामात दिखाई है वह मालिक के हुक्म की अवाज्ञा है। इस करामात को दिखाने से तुम मालिक के हुक्म के आड़े आये हो। ऐसा करने से हमारी कमाई खत्म हो

जायेगी। अब दोष करने की सजा हमें भुगतनी होगी। इस दोष का हर्जाना भरने के लिये तुम्हे या मुझे यह चोला त्यागना होगा। अब यह फैसला हम तुम पर छोड़ते है कि चोला कौन छोड़े। बाबा अटल यह फतवा गर्दन झुका कर सुना रहे थे। थोड़ा सोचकर गुरू महाराज जी को निवेदन किया कि दोष करने वाले को सज़ा भोगनी चाहिये। मैने दोष किया है, मालिक के रहस्य में हस्तक्षेप किया है। बस एक बार चरण स्पर्श करने की आज्ञा दीजिये। गुरू महाराज ने खुशी से उसे विदा किया।

बाबा अटल आज्ञा लेकर सीधे नदी के किनारे पहुँचे। वहां नदी मे स्नान कर कुशों की सेजा बिछा कर सो गए और मालिक से विनती स्वीकार की। ज्योति जोत समा गई। वहा गुरू महाराज के घर में बाबा अटल के न आने के कारण तलाश शुरू हो गई। गुरू महाराज ने यह सहस्य किसीसे नही खोला था। सो आखिर बाबा अटल को नदी के किनारे आकर ढूंढ निकाला, परन्तु बाबा तो मालिक से मिल चुके थे। उनका अन्तिम संस्कार किया गया। यह कुर्बानी करने पर उनकी कमाई बनी रही। उनकी याद में सुन्दर दरबार बनवाई गयी और बाबा जी को वरदान दिया गया कि:-

''बाबा अटल पक्की पकाई घल''

उनके दरबार पर चूल्हा बिल्कुल नही जलता है, सब मालिक की कृपा से तैयार होकर ट्रकों में आता रहता है और सदा भण्डारे होते रहते है।

सत्गुरू महाराज यह दृष्टान्त बताकर समझाने लगे कि माधव! तुम मेरे अन्य शिष्यों से बिल्कुल न्यारे हो। तुम्हारी सच्ची भक्ति, श्रद्धा और लग्न के कारण तुम्हे ये सिद्धियां प्राप्त हुई है। परन्तु मंज़िल पर पहुँचने से पहले अपने आपको इन रिद्धियों सिद्धियों में बिल्कुल मत उलझाना मंज़िल पर पहुँचने के बाद तुम खुद कहोंगे:-

तू भी श्याम, मैं भी श्याम

श्याम, श्याम में लीन,

सरित सागर में विलीन।

जब यह आत्मा परमात्मा के चरणों में लीन हो जायेगी तब कोई भी भेद नही रहेगा। तुम्हारी इच्छा उसकी इच्छा होगी और उसकी इच्छा तेरी इच्छा होगी। फिर तेरी हर इच्छा करामात होगी, परन्तु उसके लिये:-

खुद को कर बुलन्द इतना

कि हर रज़ा से पहले

खुद खुद बन्दे से पूछे

कि मेरी रज़ा क्या है।

इस प्रकार धीरे धीरे कामिल गुरू के मार्ग दर्शन में ध्यान और स्मरण करने लगे। उस दिशा में अधिक से अधिक तेजी से कदम उठाते गये। अब उन्हें नाम के स्मरण और मंत्र जाप में मिठास महसूस होने लगी। अब न केवल सुबह शाम स्मरण करते थे, परन्तु चौबीसों घंटे उनके रोम रोम में राम रमने लगा। उठते बैठते, खाते पीते, सोते जागते एक नाम की धुन लगी हुई थी। फुर्सत के समय यह भजन गाते थे।

भजन

परणु चांही जे पभूअ खे, त करि वैराग वैरागी।

छदे सभि दौर दुनियां जा, माणिज मागु वैरागी।

1. कथइ पापनि सां कारो, अदा तो हिन अच्छी दिल खे

त मेटे छदि मन्दाईअ जो, दिल तां दागु वैरागी।

2. माया जे मोह में फासी, कयो तो पाण खे काबू,

त माया जे मोह खे दे तूँ, बिरह जी आगि वैरागी।

3. विषय जी वासना वसि थी, बधो तो पाा ु करिमनि में

त कोटे छदि कबूलियत मों, विषय जो रागु वैरागी।

4. वैराग जे विरूह में वेही, कारे कढु कल्पना जीअ मां

त माधव तूँ माणी मन में, सचो सुहागु वैरागी।

(अर्थ):- स्वामी जी इस भजन में कहते हैं कि यदि तुम परमात्मा के दर्शन करना चाहते हो तो तुम इस संसार से वैराग्य लेकर वैरागी बन जाओ। फिर तुम अपनी मंजिल पर पहुँच कर आनन्द प्राप्त करोगे। तुमने पापों से अपनी इस स्वच्छ दिल को काला बना दिया है। तुम अपने दिल से बुराई का दा$ग मिटा दो। माया जाल और मोह में तुमने अपने आप को फांस लिया है। माया जाल और मोह में तुमने अपने आप को फांस लिया है। तुम अपने मन में विरह की आग जला कर माया मोह को जमा दो। विषय वासना के वश में आकर तुमने अपने आपको कर्मों के चक्कर में बांध लिया है। अब भली प्रकार समझकर तुम इन कर्मों के कोट को काट डालो। स्वामी जी कहते है कि वैराग्य की राह पर चल कर तुम अपने मन में से सब संशय निकाल दो तो तुम अपने अन्दर ही परमात्मा के दर्शन कर सच्चा आनन्द प्राप्त कर सको।

अब सुजागी में भी समाधि थी। हाथ कार्य में और मन महबूब से जुड़ा हुआ था। सेवा करते समय भी मन मंत्र से जुड़ा हुआ था। कभी दिल की धड़कन से उसका राग सुनते थे। तो कभी सांस के आरोह और अवरोह से मंत्र जाप करते थे। तन को तपा कर तपस्या कर रहे थे। शरीर की उनको सुद्ध बुद्ध ही नहीं रहती थी। उनको यह अनुभव होने लगा कि यह आत्मा

परमात्मा की प्यासी है और परमात्माक से मिलने के लिये तड़प रही है। यह प्यास घटने के बजाय बढ़ रही थी। जब यह प्यास सहन करने से बहार हो जाती तो यह अनुभव होने लगता था कि यह आत्मा और शरीर बिल्कुल अलग है। यह बन्धन तो शरीर से जुड़े हुए हैं। दु:ख सुख का सम्बन्ध भी शरीर से जुड़ा हुआ है। आत्मा और शरीर दूध और पानी के तरह मिले हुए है। उनको अलग अलग करने के लिये हंस वाली तरकीब चाहिये। जब यह तरकीब हाथ आ जायेगी तो इस संसार के बन्धन अपने आप टूट जायेंगे। यह रहस्योद्‌घाटन गुरू कृपा से ही सम्भव है। इसीलिये तो स्वामी जी ने संसार के माया जाल को त्याग कर सतगुरू महाराज जी की शरण ली।

छदे जग जंजाल आशिक चढ़नि अछ ते

होरी खेलीन पीउ सा लाए ज्ञान गुलाल

बधनि बियाई धरे, स्वामी सब्ध साल

कहिं खे चवनि न हालु अज़गइबी इसरार जो

चलणी उल्टी चालि आहे हिन संसार खूं

लंघे पारि समुन्द्र खूं छिन में मारे छाल

मेटे विहनि मन मां, सामी सभि खयाल

रहनि लाल गुलाल संदा पहिंजे हाल में।

अर्थ:- परमात्मा के प्यारे भक्त इस संसार के माया जाल को छोड़कर अपनी मंजिल की और बढ़ते हैं और ज्ञान प्राप्त कर परमात्मा के रंग में रंग जाते हैं। वे अन्दर में गहरे जा कर उस अनहद शब्द को सुनकर सच्चे आनन्द को प्राप्त करते हैं। परन्तु इस गहरे राज को वे किसी को भी नही बताते हैं। वे इस संसार के चलन से बिल्कुल विपरीत चल कर छलांग लगाकर

इस संसार रूपी सागर को पार कर जाते है। वे अपने मन में से सभी विचार हटाकर उसके साथ अपनी सुरत जोड़कर अपनी धुन में मस्त रहते हैं।

इस प्रकार स्वामी जी सारे संसार को छोड़कर सत्गुरू महाराज के चरणों में आनन्दमय जीवन बिताने लगे। उधर उनके पिताजी को यह चिन्ता होने लगी कि साध जैसे अपनी बहन की शादी करके निकले हैं तो वापस लौटकर झांका तक नही है। कैसे निरमोही है? बहिन की शादी पर भी चाचाजी जाकर समझा बुझाकर ले आये थे और एक रात रह कर प्रभात को निकल पड़े। एक ही इकलौता बेटा है उसके विछोह में मन उदास हो रहा है। सैकड़ों मन्नतें मांगकर पीर फकीर पूजकर मैने यह लाल पाया। सो क्षण में मुझ से बिछुड़ कर अलग हो गए। कल को यदि मर जाऊँ तो क्रियाक्रम कौन करेगा?

पिताजी कहने लगे कि सुना है कि जाकर संत टेऊँराम जी का शिष्य बना है और वहाँ बैठकर दिनरात संतों की सेवा कर रहा है। जाकर मनाऊँ, शायद मेरी हीन दशा देख कर तरस खाकर लौट आवे। इस प्रकार विचार करते करते निकल गये टण्डे आदम की ओर। पुत्र के प्रेम के सताये हुए राह चलते चलते आकर पँहुचे टण्डे आदम दरबार पर। दरबार में पहँुचते ही उनकी निगाह सीधी माधव पर पड़ी। उन्हें रेत की तगारियों को ढोते हुए देखकर उनका दिल भर आया और आंखों में पानी आ गया। सोचने लगे कि यह सचमुच फकीर बन गया है। फकीर माने सच्चा दरवेश। फकीर शब्द में चार अक्षर है। फ का अर्थ फकर, गरीबी, विनम्रता। क है किनायत, शुक्र वाह वाह, ऐसे भी मालिक वाह वाह वैसे भी मालिक वाह वाह। य है यकीन और विश्वास। 'र' है रियाज़त और बन्दगी। यह राह पीड़ा वाली है। इस राह पर ऐसे बहादुर और सच्चे दरवेश ही चल सकते है। पर पिता होने के नाते प्यार और मोह वश वे सहन नही कर पा रहे थे। सो सीधे आकर पहँुचे सत्गुरू टेऊँराम जी महाराज के पास। सत्गुरू टेऊँराम जी महाराज को हाथ जोड़कर विनती कर कहा कि बेटे का हाथ वापस दे दो। एक पुत्र परमात्मा ने बक्शा वह भी बिछोह देकर आकर शरण में बैठा है। मेरे मरने पर क्रियाक्रम कौन करेगा, दीपक कौन जलाएगा और पित्रों को पानी कौन देगा?

सत्गुरू महाराज जी ने कहा कि बाबा! यह बाहर का दीपक एक दिन जलाओ तो दूसरे दिन बुझ जाये। यह तेरा माधव वह ज्ञान रूपी दीपक जलाएगा जो युग युगातंर जलता रहेगा।

सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी को बुलवाकर पिता जी से मिलवाया और कहा भाई मूलचन्द! आप बड़े किस्मत वाले है जो ऐसा भक्त सुपुत्र ईश्वर ने बक्शा है। यह केवल अपना ही नहीं, परन्तु इनके पीछे अनेक कुल तैर जायेंगे। यह हिन्दी सिन्ध का मार्ग दर्शक बन हजारों की राह रोशन करेगा। आप को ऐसे सुपुत्र पर गर्व होना चाहिये, जिसके ह्रदय में हरि नाम के सिवाय और कोई बात ही नही है। यह कह कर उन्हें इस शब्द द्वारा समझाने लगे।

भजन (स्वर विहाग)

जहिं कुल में पैदा थियो

भगत सच्चो भगवान जो

सो कुल सदा आबाद आ,

सुपात्र सन्दे सन्तान जो।

1. जहिं में वसे सतनाम जी,

भक्ति सदा भरपूर थी,

सो कुल पहिंजे ऐ गाम ते,

झंडो झुलाए शान जो।

2. अमर प्यालो प्रेम जो,

पीतो भरे जंहि प्रेम सां

सो प्रेम सा हिरदो,

थधो कन्दो हर इंसान जो।

3. जंहि में वसे थी सच्ची

जोती सन्दे जगदीश जी

तंहिं लाल जे त ललाट में

चमिको रहे नीशान जो।

4. माधव मणिया जंहि में सच्ची,

सो लाल विरलो लखनि में

तंहिं जे मथां सभिको करे

कुर्बान पंहि जी जान जो।

(अर्थ):- जिस कुल में भगवान का सच्चा भक्त पैदा होता है उस सुपात्र का कुल सदा आबाद रहेगा। जिस कुल में भगवान का भक्त पैदा होता है और जिस भक्त के मन में भगवान की भक्ति भरपूर है उस भक्त के न केवल कुल का परन्तु संपूर्ण गांव के शान का झंडा सदा ऊंचा रहेगा। जिसने प्रेम का अमर प्याला प्रेम से भर कर पिया है वह हर इंसान का प्रेम से हृदय शीतल कर देगा। जिस भक्त के अन्दर जगदीश की जोत जगती रहती है उसका ललाट सदा उस अलोकिक प्रकाश से चमकता रहता है। सत्गुरू महाराज जी कहते हैं कि जिसमें सच्ची महिमा होती है वह लाखों में एक होता है। ऐसे सच्चे भक्त के ऊपर सब अपनी जान भी कुर्बान कर देते हैं।

भजन कहने के पश्चात् सत्गुरू महाराज जी उनके पिताजी से कहने लगे कि भाई! हमने तम्हारे सामने हकीकत रखी है अब आप मालिक है। यह माधव आप के सामने खड़ा है यदि ये आपके साथ जाने के लिये राज़ी हो हो तो हम इसे आज्ञा देने के लिये तैयार हैं। अब

पिताजी स्वामी जी को अपनी वृद्धावस्था का वास्ता देकर घर चलने के लिये राज़ी करने लगे। परन्तु माधव उनको समझाकर तसल्ली देने लगे। वे कहने लगे कि बाबा! मेरे भाग्य खुले है जो सत्गुरू महाराज जी जैसे दुर्लभ गुरू जी मिले है। ये औतारी पुरूष भाग्य से जगत के कल्याण हेतु युगों के पश्चात पृथ्वी पर जन्म लेते है। ये महापुरूषों तो पास के समान है। जिनका जिसके सर पर आशीर्वाद का हाथ लग गया वह सोना बन गया। मैं यह सुनहरी अवसर अपने हाथ से जाने नही देना चाहता। आप मुझे आज्ञा दीजिये कि इन चरणों में बैठकर अपना जीवन सफल बनाऊ। बाबा! यह राम कृष्ण परमहंस जैसे पवित्र चरण है, जिन चरणों में बैठकर नरेन्द्र विवेकानन्द बनकर देश विदेश में सनातन धर्म का झण्डा फहराकर सदा सदा के लिये अमर हो गया। ये स्वामी वृजानन्द जैसे चरण है जिन चरणों की रज के प्रताप से मूल शंकर ने स्वामी दयानन्द सरस्वती बनकर विश्व में सत्य का प्रकाश फैलाया। ये पवित्र चरण संत रविदास जैसे ही करामाती है जिसके स्पर्श से मेरा ने प्रेम दीवानी बनकर सारे संसार को प्रेम सागर में डिबो दिया। ये अलोकिक चरण गुरू संदीपन जैसे ही चमत्कारी है जिनके आशीर्वाद से भगवान कृष्ण ने सारे संसार को गीता का वह अलोकिक ज्ञान करवाया जिसकी बराबरी आज संसार की कोई भी वस्तु नही कर सकती है। अब पूज्य पिता साहब! आप ही फैसला कीजिये कि ऐसे अलोकिक चरण त्याग कर मैं अपने आप को झूठा माया जाल में कैसे फसाऊंगा?

सतगुरू महाराज जी बालक माधव की ऐसी अगाध गुरू भक्ति व अटूट श्रद्धा देख कर दिल ही दिल में गद् गद् होकर सोचने लगे कि बालक अपने गुरू का नाम अवश्य रोशन करेगा। हमने जो हंडियां चढ़ाई है उसका ढकन बेशक ये उतारेगा। अब सत्गुरू महाराज पिताजी को समझाकर कहने लगे कि भाई! तुम ज़िद छोड़ दो। जिस कार्य को सम्पन्न करने के लिये ईश्वर ने तुम्हें यह लाल बख्शा है, उसको छोड़ दो मालिक की उस राह में, तो कल्याण करें करोड़ों का और शान बढ़ावे माता पिता, कुल व गुरू का। इतना कहकर सत्गुरू महाराज

जी ने पिता साहब को समझाने और सान्तवना देने के लिये जगत गुरू शंकराचार्य का दृष्टांत दिया।

दृष्टांत:- सत्गुरू महाराज जी कहने लगे कि आज माधव का त्याग और दृढ़ निश्चय देखकर हमें जगत् गुरू शंकराचार्य का दृष्टांत याद आ रहा है। उस अलौकिक बालक ने भी बचपन में अपनी माता अम्बीका से जिद करके सन्यास लिया था। बालक शंकराचार्य का मन भी बिल्कुल माधव के समान संसार में लगता ही नही था। वे हमेशा कहते थे कि माँ! मैं सन्यासी बन कर ईश्वर को पाना चाहता हूँ । उनकी मां यह सुनकर, दु:खी होकर कहती थी कि बेटा! तेरी यह उमर तो खाने और खेलने की है। यह वैराग्य और सन्यास की बातें तुम्हें इस कच्ची उमर में शोभा नही देती है। इसके सिवाय तुम यदि घर छोड़ कर सन्यासी बन जाओगे तो मेरा क्या होगा? इस जहां में तेरे सिवाय मेरा और कौन सा सहारा है? बालक ने उत्तर दिया कि माँ! हम सबका सच्चा सहारा परमात्मा है। वे मेरे परम् पिता तुम्हारे रखवाले बनेंगे, परन्तु उनकी माताजी को यह सब बातें समझ में नहीं आती थी। एक दिन दोनों, मां बेटे नदी पर स्नान करने गये। स्नान करते करते बालक जोर-जोर से चिलाने लगा, मगरमच्छ! मगरमच्छ! मां ने घबरा कर पूछा कि बेटे ! मगरमच्छ कहां है? बालक ने उत्तर दिया कि मरगमच्छ मेरा पांव पकड़ कर मुझे अन्दर घसीट रहा है। उनकी मां जोर-जोर से रोने लगी और भगवान से प्रार्थना करने लगी कि मालिक! जैसे आपने मुसीबत में गज की ग्राह से रक्षा की थी वैसे आज मेरे बालक की मगरमच्छ के मुँह से रक्षा करो। इस पर बालक कहने लगा कि माँ! यदि तुम मुझे सन्यासी बनने की इजाज़त दे दोगी तो मुझे मगर छोड़ देगा। मां गेहरे सोच में पड़ गई। आखिर सोचकर दिल में कहा- कि भगवान इसे बड़ी उमर देवे फिर भले मेरे पास रहे या दूर। सो दिल पर पत्थर रखकर बेटे को सन्यासी बनने की इज़ाजत दे दी। यह सुनकर बालक शंकराचार्य हंसता कूदता नदी से बाहर दौड़ता हुआ आया। और आकर माँ के चरण पकड़े और मां के चरणों पर सर टेककर उनसे आशीर्वाद मांगने लगा। वचन के अनुसार मां ने दु:खी होकर आशीर्वाद दिया कि बेटा! जिस में तेरी खुशी उसमें मेरी

भी खुशी। ईश्वर तुम्हारा रखवाला होगा। मां ने आज्ञा लेकर बालक निकल पड़ा कामिल गुरू की तलाश में क्यों कि इस राह में बिना कामिल गुरू के इंसान पतवार नाव के समान है जो संसार रूपी सागर में थफेड़े खाएगी परन्तु मंजिल पर कदाचित नही पहँुचेगी। आखिर ‘‘जिन खोजिया तिन पाइया।‘‘ उसे कामिल गुरू मिल गया और सत्गुरू की कृपा से उसने वह पद पाया जो आज संसार उसे जगत् गुरू शंकराचार्य के नाम से पुकारता है। उसने भगवान की ऐसी भक्ति की कि सदा के लिये अमर हो गए। उसने भारत के चारों दिशाओं में चार मठ स्थापित किये जहां से आज भी सनातन धर्म का प्रकाश सारे भारत में फैल रहा है।

अब भाई मूलचन्द! तुम्ही बताओ कि उनकी माता झूठी माया मोह में फंसकर बालक को सन्यासी बनने की इज़ाजत नही देती तो क्या वह इस अमरत्व के पद को प्राप्त कर सकते थे? क्या जगत उन्हें जगदगुरू के नाम से याद करता? सन्यासी बन कर जो उन्होंने पाया उसकी कोई बराबरी नहीं है। आज करोड़ों बालक पैदा होते हैं और जीवन की सभी अवस्थाऐं पार कर इस दुनियां से कूच कर जाते हैं। आज उनका नामों निशान भी नहीं है। कौन याद करता है? कोई बिरला ईश्वर की असीम कृपा से संसार के बन्धनों से मुक्त होकर मुक्ति पद की प्राप्त कर सदा के लिये अमर हो जाता है।

सत्गुरू महाराज के वे वचन सुन कर पिता को अपने पुत्र के लिये मन में नाज़ होने लगा, परन्तु मन में माया और मोह के कारण निराशा भी हुई, परन्तु जैसे तैसे दिल पर पत्थर रख कर घर लौट आये। आज्ञा लेने से पूर्व स्वामी जी ने पिताजी से आशीर्वाद ली और फिर से सेवा के कार्य में जुट गए। उनके परिश्रम मृदुवाणी और पुरूषार्थ ने सब को प्रसन्न कर लिया था। सत्गुरू महाराज के चरणों में रह कर दिनों दिन रच कर लाल होते जा रहे थे। एक तो पहले जन्म के सिंचित शुभ कर्म, दूसरा इस जन्म में बचपन से की हुई तपस्या एवं साधनाएँ, तीसरी सत्गुरू महाराज की असीम कृपा ने उन में अपार शक्ति पैदा कर ली थी। जो मुख से निकालते वही घट जाता।

यह घटना सन् 1936 की है। टण्डे आदम की डिब पर चैत्र का मेला लग रहा था। मंघन रसोइया किसी कार्य से बाहर निकला। डिब के बाहर एक केर का पेड़ था। वह उलझ कर जाकर उस पेड़ से टकराया। उसका पांव कांटों से जख्मी हो गया। वह बेचारा लंगड़ता लंगड़ाता भण्डारे की ओर जा रहा था। उस समय स्वामी जी भण्डारे के पास खड़े थे। उनसे पूछा 'भाई मेंघा! तुम लंगड़ाकर क्यों चल रहे हो? ''आखिर तुम्हें क्या हुआ है?'' दुःखी होकर मेंघा बोला स्वामी जी इस कंटीली झाड़ी के कांटों ने बुरी तरह जख्मी कर दिया है। अब आप कृपा कर सत्गुरू महाराज से कह कर यह कंटीली झाड़ी कटवा देवें ताकि जान छूट जाये। उस पर स्वामी जी ने कहा 'भाई मेंघा यह केर (कण्डी) को पेड़ कैसे कटाएंगे। इस पेड़ के नीचे बैठ कर हमने तपस्या की है। इस पेड़ ने हमें सत्गुरू महाराज से मिलने में मदद की है, परन्तु तुम्हारी तकलीफ दूर करने के लिये सत्गुरू महाराज जी का मंत्र बोल कर हम इसे कांटों से मुक्त करते है। सत्गुरू महाराज जी की कृपा से इस में छाया तो रहेगी परन्तु काँटे सदा के लिये गायब हो जायेगे। उसी समय कन्डी (केर) के पास जाकर सत्नाम साक्षी कह कर यह भजन कहा।

भजन

अजु खां वठी ए कण्डी,

तो में कण्डा न थीन्दा

साधनि जा शेवा धारी

मूरऊं मण्डा न थीन्दा

1. थीन्दा भन्डारा भारी,

रहन्दा भी शेवाधारी

हलंदे चलंदे टिलंदे,

कदहि टुण्डा न थीन्दा।

2. लगन्दा रहन्दा मेला,

ईन्दा सवें श्रद्धालु

चढ़न्दि यूँ रहन्द यूँ देगि यूँ ,

गम भी हण्डा न थीन्दा।

3. रहन्दी तो में बि छाया

पुजन्दियूँ मुराद मन जूँ

फलन्दा रहन्दा फुलड़ा,

टेड़ा टुण्डा न थीन्दा।

4. सतगुरू दिनी समुझाणी,

माधव समझ वारी

सिदिकी सदाईं सावा,

निमंदड़ नन्ढा न थीन्दा

अजु खां वठी ए कण्डी,

तो में कण्डा न थीन्दा।

अर्थ:- इस भजन में स्वामी जी कहते है कि ऐ कण्डी! (कांटों वाली झाड़ी) आज से तेरे अन्दर ये चुभने वाले कांटे नही होंगे और सन्तों के सेवाधारी कभी भी लंगड़े नही होंगे। इस स्थान पर सदा भण्डारे होते रहेंगे और सेवाधारी भी सदा सेवा करते रहेंगे। परन्तु चलते, फिरते घूमते वे

कभी भी लंगड़े नही होंगे। इसलिये आज के बाद तेरे अन्दर ये चुभने वाले कांटे नहीं रहेंगे। इस स्थान पर मेले लगते रहेंगे और सैंकड़ों श्रद्धालु सदा आते रहेंगे। यहां भण्डारे की देग सदा चढ़ती रहेगी परन्तु किसी को कोई तकलीफ नही होगी। ऐ कुण्डी आज से तेरे अन्दर कांटे बिल्कुल नहीं होंगे। तेरे अन्दर कांटे तो नहीं होंगे, परन्तु तेरे अन्दर छाया अवश्य रहेगी और सब के मन की मुरादें पूरी होती रहेगी। सब फूल के समान फूलते फूलते रहेंगे, परन्तु कोई भी लूला लंगड़ा नहीं होगा। आज से तेरे अन्दर कांटे तो नहीं रहेंगे। स्वामी जी कहते हैं कि सत्गुरू महाराज जी ने ये समझाया है कि विश्वास रखने वाले सदा हरे भरे व सम्पन्न रहेंगे और झुकने वाले कभी छोटे नहीं होंगे। कण्डी! आज से तेरे अन्दर कांटे नहीं रहेंगे।

उस दिन के पश्चात उस कन्टीले झाड़ में से कांटे ही सूख गये और वह बिल्कुल हरी भरी व साफ हो गई। प्रेमियों ने आकर यह वार्ता सत्गुरू महाराज जी को सुनाई कि साध माधव ने सत्नाम साक्षी का मंत्र पढ़ कर उस कण्डी (कंटीली झाड़) को ऐसा वरदान दिया है जो उस में से कांटे ही गायब हो गये हैं। सत्गुरू महाराज ने उनकी इतनी भक्ति देखकर विचार किया कि साध माधव अब अच्छी मंज़िल पर पहुँच गया है। ऐसी तो साधना की है कि उस में सिद्धि आ गई है। अब उन्हें योग्य समझ कर सदा अपने साथ सत्संग के समय रखते थे ताकि उन में सत्संग करने की योग्यता और भी बड़े और आगे चलकर उन में निखार आये ताकि ये सब के मार्गदर्शक बन सकें।

धन शेवा ऐं धन तो शेवक, शेवा जंहिजी पवे कबूल,

हर दिल खे सो जाणे सुजाणे, पूरनपरिखु सो सभ जो मूल।

अब सत्गुरू महाराज भ्रमण पर भी स्वामी जी को ले जाते थे। उन्हें हरिद्वार, ऋषिकेश और उत्तरा खण्ड के सभी तीर्थ भी करवा कर आये। वहां पर उनकी बहुत से सन्तों और योगियों से भेंट हुई और उस मंजिल के अनेक अनुभव हुए। इस प्रकार अभ्यास करते करते स्वामी जी कामिल पुरूष बन गये। परन्तु महाराज जी के आगे तो वही विनम्रता और

अनुनय विनय थी। कभी भी अहिंकार उत्पन्न नही हुआ। विनीत भाव से मन में यह कहते रहते थे:-

साधु न सदाइजि, हीअ तिरिकणि तिखी अथेई,

हिन भ्रम भुलाया केतिरा, इहा पिड सिर तां लाहिजि

समुझी तूँ सामी चवे मुँह मढीअ पाइजि

लोक न लखाइजि, त वाकुफु थियें विरूह जो।

इएं चर्खो चोरि, जीअं भूंइ भुणिकी नाथिए

अठई पहिर अजीबनि खे, अदब सां ई ओरि

बाहिरि तकि म तोरि, कति त मिली कान्ध सा।

अर्थ:- स्वामी जी अपने मन को समझाते हुए कहते है कि तुम अपने आप को साधु मत कहलाना, क्योंकि यह फिसलन बहुत तेज़ है, पता नही इस राह पर कब किसी का पांव फिसल जाये। इस भ्रम ने पता नही कितनों को भुलाया है। इसलिये तुम इस बात को अपने दिमाग में से निकाल देना। स्वामी जी कहते है कि इस भक्त की राह पर सोच समझकर पांव रखना और तुम जो तुम भगवान का स्मरण करो उसको तुम लोगों को मत दिखाना ताकि तुम्हें उस आनन्द का पता लग सके ऐसे भक्ति रूपी चर्खा छिपकर धीरे चलाओ कि उसकी चूं चूं तक आवाज़ न हो अर्थात जो तुम भगवान का स्मरण, ध्यान व भक्ति करो वह गुप्त हो जिसका किसी को भी आभास न हो। आठों पहर श्रद्धा और अदब से उस परमात्मा का निरन्तर स्मरण करते रहो परन्तु इस में लोग दिखावा नहीं होना चाहिये। इस प्रकार यदि स्मरण करोगे व परमात्मा का ध्यान करोंगे तो तुम परमात्मा से अवश्य मिलोंगे।

इस प्रकार अपने आपको पकाते-पकाते स्वामी जी की करनी जैसे सिद्ध पुरूषों जैसी बनती जा रही थी। वे सतगुरू महाराज के मन को भा गये। सतगुरू महाराज के कृपा की जैसे उन पर वर्षा होने लगी। सतगुरू महाराज अब उनसे प्रति दिन सत्संग की सेवा लेने लगे। उनके भजनों में सतगुरू महाराज की सीख समायी हुई थी और हर भजन में से त्याग और वैराग्य झलकता था।

भजन (राग भेरवी)

छो थियूँ मूँखे झलियो,

मां थीन्दियसि जोगियाणी

विरह जो पाणी भरीन्दियसि भेनरि

छोथियूँ मूँ खे झालियो...........

1. लिखियो लेखु पूरब जनम जो,

अखर सुञाणी पढ़न्हिदसि बाणी

अजु रातरी विहाणी,

छो थियूँ मूँखे झलियो.........

2. आयसि आस करे देहि अबाणी,

पखर अबाणी हुई सा दादाणी

साई मुंहिजे साह खे त सीबाणी,

छो थियूँ मूँखे झलियो.........

3. ताना लोकनि जा ताम थी भायां

दींह दिहाड़ी कीन सा कूमाणी

वञा भव सागर मां त उदाणी,

छो थियूँ मूँखे झलियो........

4. कहे टेऊं अजु रतु थी रूआं मां,

ऐबनि हाणी, नींह कगी निमाणी,

दरि त गुरूअ जे आहे विकाणी

छो थियूँ मूँखे झलियो.........

(अर्थ स्वामी जी इस भजन में अपनी आत्मा को स्त्री रूप और परमात्मा को पुरूष रूप मानकर उसे प्राप्त करने के लिये कहते हैं कि मैं जोगिन बनकर विरह का पानी भरूंगी। अपनी सहेलियों से कहते हैं कि आप मुझे इस राह पर चलने के लिये क्यों रोकती हैं? यह तो मेरे पूर्व जन्म के पुण्य है जो मुझे आत्मा का ज्ञान हुआ है बहुत समय गुजर गया है अब मैं समरण के द्वारा उनहें अन्तर आत्मा में ढूँढ लूंगी। मैं सतगुरू महाराज के देश में परमात्मा को पाने की आस लेकर आयी हूँ। यह जो सतगुरू महारात की असीम कृपा मुझ पर हुई है जिससे मैं परमात्मा को पा सकूँगी यह मुझे अतिप्रिय है और मेरे श्वास श्वास में भर गई है। परमार्थ की राह पर चलने वालों पर लोग ताने कसते हैं वे मुझे बढ़िया भोजन समान लगते हैं। इन से परमात्मा की प्रीत घटने के बजाय खूब बढ़ गयी है और मेरा दिल करता है कि इस संसार सागर से उड़ कर जाकर उस परमात्मा से मिलूं। परमात्मा के विरह में रक्त के आंसूँ बहा रही हूं। मेरे अन्दर अनेक बुराइयां हैं, परन्तु मैं केवल उस परमात्मा को चाहती हूं। परमात्मा मेरी सच्ची प्रीत देखकर मेरी बुराइयां माफ करेंगे। मैंने अपने आप को सतगुरू

महाराज के दर पर पूर्ण समर्पित कर दिया है। मुझे आप क्यों रोकती है मैं तो जोगिन बनकर विरह का पानी भरूंगी।)

सत्संगी भी प्रतिदिन उनके शिक्षा प्रद वचन एवं भजन सुनकर उनकी ओर आसक्त होते चले गये। बहुत से प्रेमी तो इतने प्रभावित हो गये जो उन्हें अपने यहां सत्संग करने के लिये निवेदन करने लगे। परन्तु सतगुरू महाराज जी की आज्ञा बिना कोई भी कदम उठाना कठिन ही नहीं किन्तु असम्भव था। स्वामी जी की ऐसी गुरू भक्ति और मर्यादा देखकर सत्गुरू महाराज अब सोचने लगे कि माधव अब काफी योग्य हो गया है और उनकी योग्यता ने काफी प्रेमियों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है और अब यह प्रेमियों को अकेले ही नाम रस पिला सकता है।

सन् 1938 में हरिद्वार में कुम्भ का मेला लग रहा था। सत्गुरू महाराज जी उस मेले पर स्वामी जी को अपने साथ ले गये। इस अवसर को उचित जानकर वैसाखी के दिवस 13 अप्रेल सन् 1938 को सतगुरू महाराज स्वामी जी को हर की पौड़ी पर ले गये। वहां पर श्वेत वस्त्र त्याग कर लाकर उन्हें लाहूति लिबास (गेडू वस्त्र) पहना कर दीक्षा देकर आशीर्वाद दिया कि माधव! तुम इस राह पर अकेले चलकर लाखों का मार्ग दर्शन करने के योग्य बन चुके हो। तुम्हारा ईश्वर में अटूट विश्वास ओर बेमिसाल गुरू भक्ति हमेशा तुम्हारी राह रोशन करती रहेगी। तुम्हें अब परमात्मा के सिवाय और किसी भी सहारे की आवश्यकता नही है।

हरिद्वार से गेडू वस्त्र पहनाकर सत्गुरू महाराज उन्हें सीधा हैदाराबाद वाली दरबार पर ले आये और उन्हें कहा कि साध! अब तुम यहाँ रहकर दरबार भी सम्भालों और पिलाओं प्रेमियों को सत्नाम साक्षी का अमृत। तुम अब बहुत प्रेमियों के लाडले बन चुके हो और कई प्रेमी तुम्हारे मार्ग दर्शन की राह ताक रहे है। अब यहां रहकर सत्गुरू द्वारा दिये गये ज्ञान का प्रचार करो।

हैदराबाद वाली दरबार पर रहकर स्वामी जी प्रेमियों को सत्संग रूपी अमृत पिलाने लगे। दिन प्रति दिन उनके श्रद्धालुओं की संख्या बढ़ती चली जा रही थी। स्नेह व श्रद्धा वश वे उनके लिये फूलों की मालाएं, फल फ्रूट और मिठाइयां लाने लगे। एक दिन श्रद्धालुओं की एक टोली उनके लिये फ्रूट के टोकरे और मिठाईयों की पेट्टियां लेकर आये। यह सारी भेंट आकर उनके चरणों में रखी, परन्तु उन्होंने यह सारी भेंट सत्गुरू महाराज जी के चरणों में रखने की आज्ञा दी। प्रेमियों ने उनकी आज्ञानुसार सारा प्रसाद जाकर सत्गुरू महाराज के चरणों में रखा। महा मण्डलेश्वर जी ने अपने शिष्य का शान बढ़ाने के लिये कहा कि बेटे तुम तो साध माधव के प्रेमी हो। यह प्रसाद चल कर उनको अर्पित करो। इतने में स्वामी जी वहां पहुँच गये। हाथ जोड़ कर उन्हें निवेदन किया कि सत्गुरू महाराज ये सब आप के प्रेमी है। आप कृपा कर इनकी भेंट स्वीकार करें। सब सत्गुरू महाराज के चरणों पर गिर पड़े। सत्गुरू महाराज जी ने खुश होकर उन्हें खूब आशीर्वाद दिया। कहने लगे कि साध माधव! कहने लगे कि साध माधव! तुम ने गुरू की इतनी इज्जत ओर मान रखवाया है सो तुम्हारे प्रेमी भी सदा हरे भरे रहेंगे। नमन से कितनी आशीर्वाद मिल गई!

''नन्दी निवाज़े, खावन्द हज़मा नौकरी

कयाईं पंहिजे कुरब सा ऐबनि खा आजी

कंहिजी रही कान का मिन्थ मुहताजी

न जाणा राजी थियड़ो कहिड़ो गालिहि ते ''

अर्थ:- परमात्मा ने अपनी रहमत से इस नाचीज़ को अपने चरणों में शरण देकर अपने प्रेम से सभी बुराईयों से मुक्त कर लिया। अब किसी भी गजर् नही रही। मैं नहीं जानता कि परमात्मा किस बात पर राजी हो गए, क्योंकि मेरे अन्दर तो कुछ भी नहीं है। यह उनकी असीम कृपा है।

कृछ दिन हैदराबाद में रहने के पश्चात सत्गुरू महाराज जी जब टण्डों आदम जाने लगे तब स्वामी जी हाथ जोड़कर कहने लगे कि महाराज! आपके सिवाय मेरा कौन है, यह अकेला रहना बहुत कठिन है। यदि आप यहां रहेंगे तो यह दास भी यहा रहेगा। सत्गुरू महाराज जी ने उन्हें तसल्ली देते हुए कहा कि हम तो यहां आते जाते रहेंगे, तुम किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करो। सत्गुरू महाराज की आज्ञा सत्य वचन जानकर उनकी अनुपस्थिति में स्वामी जी दरबार को अच्छी तरह सम्भालते रहे। प्रेमियों को प्रेम बढ़ने लगा। स्वामी जी की महिमा देख कर कई प्रेमी उनसे नाम लेकर उनके शिष्य बन गये। इस प्रकार सत्संग रूपी दीपक निरन्तर जलता रहा। कभी कभी सत्गुरू महाराज जी मण्डली सहित आकर संगत को प्रेम रूपी वचनों को वरखा से निहाल कर देते थे।

वहां से सत्गुरू महाराज जी स्वामी जी को अपने प्रेमियों की निवेदन पर कभी कराची, कभी नोशहरे और कभी दूसरे स्थान पर भी अपने साथ ले जाते थे। 1940 में मैजस्ट्रेट श्री भगत साहब ने जो उस समय वकील थे अपना बंगला बनवाया। भगत साहब की माताजी सत्गुरू महाराज जी की शिष्या थी सो मकान के महूरत पर उन्होंने सत्गुरू महाराज जी के साथ स्वामी जी को निमंत्रण दिया। स्वामी जी ने उस शुभ अवसर पर सत्संग किया और गुरू भक्ति के भजन गाये। सारा परिवार स्वामी जी के सत्संग और भजनों पर झूमने लगा और खूब मौज मच गई। उनके सत्संग का कराची के प्रेमियों पर इतना प्रभाव पड़ा कि अनेक प्रमी उनको नाम देने के लिये निवेदन करने लगे। इस पर एक दिन सत्संग करते हुए प्रेमियों को समझाया कि नाम लेने से पहले सत्गुरू की सेवा कर अपने हृदय को निर्मल बनाओं क्योंकि नाम रूपी बीज केवल निर्मल हृदय में ही फल सकता है। जब जिज्ञासू का हृदय निर्मल हो जाता है और वह पूर्ण समर्पित हो जाता है, तब सत्गुरू उसके सर पर अपनी कृपा का हाथ रखकर नाम दान कर निहाल कर देता है। इस बात को समझाने के लिये उन्होंने यह दृष्टान्त दिया।

दृष्टान्तः- बुखारा के शहजादे को परमार्थ का शौक हुआ। वह फकीरों की तलाश में रहने लगा। उसकी सेज सवामन फूलों से सजती थी। एक दिन उसने अपने महल की दूसरी मंजिल के ऊपर से देखा कि दो आदमी घूम रहे हैं। पूछा भाई! कौन हो? उन्होंने कहा, हम मुसाफिर है। कैसे आये? कहने लगे कि हमारा ऊँट खो गया है। तब शहजादे ने कहा, कभी ऊँट महलों में आते है? जवाब मिला कभी परमात्मा भी सवा मन फलों की सेज पर मिलता है? इतना सुनते ही वैराग्य आ गया। अपने मुल्क के फकीरों के पीछे परमात्मा की तलाश मे फिरने लगा। लेकिन तसल्ली न हुई। हिन्दुस्तान में आया, बहुत ढूँढा, लेकिन तसल्ली न हुई। आखिर वह काशी में कबीर साहिब के पास पहुँचा। कबीर साहिब के आगे अजर् की कि मुझे शिष्य बना लो। कबीर साहिब ने कहा कि तू बादशाह है! मैं एक गरीब जुलाहा। तेरा मेरा गुजारा कैसे? अजर् की कि बादशाह बन कर तेरे द्वार पर नहीं आया हूँ। एक गरीब मंगता बनकर आया हूँ। परमात्मा के लिये मुझे शरण में ले लो। खैर! औरतें नर्म दिल की होती है, माता लोई ने, जो कि कबीर साहिब की पत्नी थी, शिफारिश की तो उसे रख लिया।

अब जुलाहों के घर क्या काम होता है? नालियां बटना और ताना तानना। छः साल गुजर गये। माई लोई ने एक दिन कबीर साहिब से अजर् की कि यह बादशाह और हम जुलाहे जो हम खाते है वही यह खाकर चुप रहता है। इसको कुछ दो। कबीर साहिब ने कहा कि अभी हृदय निर्मल नहीं हुआ। माई लोई न कहा, जी! इसकी क्या परख है? रूखी सूखी खा कर यह हमारी सेवा करता है। हुक्म से इंकार नही करता। इसका हृदय कैसे निर्मल नही? करीब साहिब कहने लगे, अच्छा ऐसा करो। घर का कूड़ा करकट लेकर दत पर चढ़ जाओ। मैं इसको बाहर भेजता हूँ। जब यह जाने लगे तो सिर पर डाल देना और पीछे हट जाना और कान लगाकर सुनना कि क्या कहता है? जब माई लोई ऊपर गई तो कबीर साहिब ने कहा, बेटा मै कुछ बाहर भूल आया हूँ उसे अन्दर ले आओ। जब वह बाहर जाने लगा तो माई ने कूड़े करकट का टोकरा सिर पर डाल दिया, और पीछे हट के सुनने लगी। वह बोला, 'सख्त अफसोस, अगर बुखारा होता तो जो करता सो करता। माई लोई ने आकर कबीर साहिब को

बताया कि जी! ऐसा कहता था। कबीर साहब ने कहा कि मैने जो तुमसे कहा था कि अभी हृदय साफ नही हुआ, नाम देने से काबिल नहीं हुआ।

छः साल और बीत गये। एक दिन कबीर साहिब ने कहा कि अब बर्तन तैयार है। माई लोई ने कहा कि जी, मै तो कुछ फर्क नही देखती। जैसे आगे था, वैसा ही अब है। कबीर साहिब के घर साधु महात्मा आते रहते थे। कई बार ऐसा मौका आता था कि खाने पीने को कुछ नही होता था तो चने खाकर सो रहना पड़ता था। माई लोई ने कहा कि जिस तरह वह पहले हमारे हुक्म से इंकार नहीं करता था, अब भी उसी तरह है। जो कुछ हम देते है खाकर सो रहता है। कबीर साहिब ने कहा कि अगर तू फर्क देखना चाहती है तो पहले तू घर का कूड़ा-करकट ले गई थी अब जा और गन्दगी, बदबू वाली गली सड़ी चीजे इकट्ठी करके ले जा। अब गली से निकले तो सिर पर डाल देना। माई ने ऐसा ही किया। जब शाहजादा बाहर निकला तो माई ने वह जो इकट्ठी की हुई गन्दगी थी उसके सिर पर डाल दी। शाहजादा हंसा खुश हुआ, उसका मुंह लाल हो गया। वह कहने लगा, ''शाबाश डालने वाले। तेरा भला हो। यह मन अहंकारी था। इस का यही इलाज था।'' माई लोई ने आकर कबीर साहब को बताया कि जी! अब तो वह ऐसे कहता है। कबीर साहिब ने कहा मैं जो तुमसे कहता था अब कोई कसर बाकी नहीं है।

कबीर साहिब जैसा संत सत्त-सत्गुरू शाहज़ादे जैसा शिष्य, ज्यों ज्यों नाम देते गये, आत्मा साथ साथ ऊपर चढ़ती गई। फिर कबीर साहिब ने कहा, ''जा! अब जहां मरजी हो जाकर बैठ जा, तेरी भक्ति पूरी हो गई है।''

शाहज़ादा एक दिन नदी के किनारे बैठा गुड्डी सी रहा था। उसका वज़ीर शिकार खेलता खेलता उधर जा निकला। बारह साल में शक्ल बदल जाती है। कहां बादशाही पोशाक कहां फकीरी बाना। तो भी उसने शाहजादे को पहचान लिया। पूछा ''तुम बादशाह इब्राहीम अधम हो? जवाब दिया ''हाँ।'' वज़ीर बोला कि देखों मैं तुम्हारा वज़ीर हूँ । तुम्हारे जाने के बाद मैने तुम्हारे बच्चों को तालीम दी। शस्त्र विद्या सिखाई, पर कितना अच्छा हो कि तू

मेरा बादशाह हो और मै तेरा वज़ीर रहं ू। यह सुन कर इब्राहीम ने जिस सूई से वह गुड्डी सो रहा था, वह सूई नदी में फैंक दी। कहने लगा कि पहले मेरी सूई ला दो, फिर मैं तुम्हें जवाब दँ ूगा। वज़ीर कहने लगा मुझे आधे घण्टे की मोहलत दो मैं तुम्हें लाख सूईंया ला दूंगा। कहने लगा कि नही। मुझे तो वहीं सूई चाहिये। वज़ीर ने कहा, 'यह तो असम्भव है। इतना गहरा पानी बह रहा है, वह सूई नही मिल सकती। यह सुन कर शहज़ादे ने वहीं बैठे हुए परमात्मा में ध्यान लगाया, एक मछली सूई मुँह में लेकर ऊपर आई। शाहज़ादे ने कहा कि मुझे तुम्हारी उस बादशाही को लेकर क्या करना है? मैं अब उस बादशाह का नौकर हो गया हूँ जिस के अधीन सारे खण्ड ब्रहमाण्ड है। जा! लड़के जाने या तू जान।''

नाम बहुत बड़ी दौलत है, जिसको पाकर फंकीर सात बादशाहियों को लात मार देता है। नाम की कमाई कोई मज़ाक है? गुरू नानक साहिब ने ग्यारह साल रोड़ो का बिछोना किया। गुरू अमरदास जी ने बारह साल पानी ढोया। हृदय जितना पवित्र होता, नाम उतना ही जल्दी असर करता है।

स्वामी जी ने सत्संग का भगत साहिब के कुटम्ब पर इतना प्रभाव पड़ा कि श्री गोधूमल के भाईयों श्री पोहूमल, श्री फेरूमल और श्री छोडोमल ने अपने मकान के शुभ मर्हूत पर सत्गुरू महाराज जी के साथ साथ स्वामी जी को भी अलग से निमंत्रण देकर बुलवाया तथा उनको बहुत सम्मान दिया। सत्गुरू महाराज जी के ज्योति जोत समाने के पश्चात भगत साहिब का सम्पूर्ण परिवार स्वामी जी को श्रद्धा और भक्ति से पूजते रहे।

एक वर्ष बीतने के पश्चात सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी से कहा कि साध! तुम अब चलकर फुलेली पर अलग आश्रम बनवाओ। यह आश्रम अब स्वामी ग्वालालाल जी संभालेंगें। यह सुनकर स्वामी जी की तो जैसे पांव तले जमीन ही खसक गई। सुनते ही जैसे चक्कर आने लगे। सत्गुरू महाराज से विनती कर कहने लगे कि आप यह क्या फरमाते हैं। अमरापुर दरबार से अलग किया तो मैंने इसको सहन किया। अब तो आप बिल्कुल अपने से

ही अलग कर रहे हैं। यह जुदाई बरदास्त करने से बाहर है। मैं इस प्रकार से अलग नही होऊँगा। मुझे आपके सिवाय कोई और राह नज़र नहीं आती। इस पर एकदम उन्हें गले लगा कर तसल्ली देते हुए कहा कि बेटे! तुम ऐसे अपने आप को हम से जुदा मत समझो। तुम दिल से जुदा हो ही नहीं सकते। तुम सदा हमारे मन में बसते रहोगे। हम जहां तहां सदा तुम्हारे संग है और हम जैसे हैदराबाद वाले आश्रम पर आते जाते रहते थे वैसे ही यहां पर भी आते जाते रहेंगे। यह हम तुम्हें वचन देते हैं। बल्कि हम अपने जीवन की अन्तिम घड़ियां तुम्हारे पास ही बिताने आयेंगे और तुम उस समय हमारी खूब सेवा कर गुरू ऋण से मुक्त हो जाना। इतनी तसल्ली मिलने के पश्चात भी स्वामी जी के मन की उदासी नहीं मिटी। जीवन में इतने कष्ट देखने पर भी इतने हताश और निराश नही हुए थे परन्तु इस आदेश ने उनके मन को बहुत मायूस कर दिया।

सत्गुरू महाराज जी अन्तरयामी थे सो उनके मन की पीड़ा समझ गये। उन्हें तसल्ली देकर कहने लगे कि माधव! तुम घबराओ नही, तुम्हारे अन्दर हमने कोई विशेष आभा देखी है। वह शक्ति देखी है जिसके द्वारा तुम वह कार्य कर सकते हो जो दुनियां देखती रह जायेगी। इसी कारण हमने तुम्हें यह आदेश दिया है। तुम्हें शायद अपने इस बल का महाबली हनुमान की तरह आभास नहीं है। इतना कह कर सत्गुरू महाराज जी ने महाबली हनुमान के बल याद दिलाने वाले दृष्टांत को स्वामी जी को बताया।

दृष्टांतः- महाबली हनुमान पवन पुत्र था और उनमें पवन देव के समान अथाह शक्ति थी। एक दिन जैसे ही वह मां के गोद में दूध पी रहा था तो उनकी नज़र तेज चमकते हुए सूर्य पर पड़ी और वह सूर्य को देखकर मां के गोद में कूदने लगा और आखिर एक जारदार छलांग लगा कर जाकर सूर्य तक पहँुचा और सूर्य को दोनो हाथों में बंद कर दिया। बस क्षण पल में चारों ओर अधंकार फैल गया। इस पर गुस्से होकर इन्द्र देव ने उस पर ब्रह्मास्त्र फेंका। जिसके लगने से हनुमान जी मूर्छित हो गये। अपने पुत्र को इस प्रकार मूर्छित होते देख कर पवन देव को बहुत गुस्सा आ गया और उसने सारे ब्रह्माण्ड में हवा रोक दी। जिस कारण

चारों और त्राही त्राही मच गई। सब देवता घबरा गए और आकर पवन देवता के सामने हाथ जोड़ कर हाज़िर हो गये। उन्हें वारों वार विनती कर कहने लगे कि वायु बिना प्राण पखेरू उड़ जायेगा। इसलिये प्राणी मात्र के कल्याण हेतु आप वायु को आज़ाद कीजिये। हम सब पवन पुत्र हनुमान को वरदान देकर खड़ा करते है, देवताओं के यह मधुर वचन सुनकर पवन देव राज़ी हो गया और देवताओं से हाथ जोड़कर कहा कि मेरे पुत्र को अमर अजीत, शक्ति का सागर और चतुर होने का वरदान दो और यह भी वरदान दो कि मेरे पुत्र राम भक्त और उनके सदा पास रहने वाला बलवान बने। इस पर सभी देवताओं ने तथाअस्तु कह कर हनुमान को यह सभी वरदान देकर आशीर्वाद दिया। उसके बाद पवन देव ने वायु को आज़ाद कर दिया। अब हनुमान ये सब वरदान प्राप्त कर महाबली बन गए और अपने बल पर इतना कर ऋषियों में जाकर उनके करमण्डल तोड़ कर पानी बहा देता था। पहाड़ों की चोटियां तोड़ देता था। इस उत्पात के कारण ऋषियों को बहुत क्रोध आया। सो उसे शाप दिया कि हे पवन पुत्र हनुमान! तुमने ताकत के मद में आकर हमें परेशान किया है इसलिये तुम अपने बल को भूल जाओंगे परन्तु जब कभी कोई आपको अपने बल का स्मरण करवायेंगा तब आप को अपने बल का आभास होगा और तुम उस बल के सहारे आश्चर्य में डालने वाले कार्य कर सकोंगे।

जिस समय श्री रामचन्द्र भगवान नल, नील, सुग्रीव हनुमान और महायोगी जामवन्त के साथ माता सीता की खोज में समुद्र तट पर पहँुचे तब यह प्रश्न उठा कि यह अथाह सागर कौन पार करेगा? इस पशो पेश में खड़े थे कि जामवन्त ने श्री हनुमान से कहा कि ''हे महाबली! इस विशाल सागर को पार करने की शक्ति केवल आप में ही है। केवल ऋषियों के शाप के कारण अपनी अपार शक्ति को भूल गये है। और मैं तुम्हें उस बल का स्मरण करवा रहा हूँ जो आप में प्रारम्भ से है। अब तुम उस शक्ति से सात समुद्र पार कर सकते हो।''

बस महावीर हनुमान को तो केवल उस बल के स्मरण करवाने की देरी थी वह सिंह गरजना कर पहाड़ की चोटी पर चढ़ गया। और वहां से ऐसी छलांग लगाई कि दबाव से वह

पहाड़ ही पाताल में धंस गया और महावीर हनुमान श्री राम का स्मरण करता हुआ ऐसे समुद्र पार गया जैसे वह समुद्र नहीं था कोई नाला था।

इस प्रकार दृष्टांत बताकर सत्गुरू महाराज जी स्वामी जी से कहने लगे कि हे माधव! तेरे अन्दर भी महावीर हनुमान के समान वह शक्ति है जिस के बल से तुम एक छलांग लगाकर सभी बन्धनों से मुक्त होकर इस संसार रूपी भव सागर को पार कर जाओगे। हमने तुझ से उस अलौकिक शक्ति, आत्म प्रकाश के दर्शन किये है जिस से तुम अज्ञान रूपी अंधकार को हटाकर, ज्ञान रूपी प्रकाश को फैलाकर लाखों दु:खी प्राणियों को राह दिखाकर, धर्म का झंडा फेराओंगे। उस शक्ति और प्रकाश के फैलाने के लिये तुम जाकर अपने आप अपने योग्य विशाल आश्रम की स्थापना करो। यह सुनकर स्वामी जी सत्गुरू महाराज जी के चरण स्पर्श कर, उनसे आज्ञा लेकर, उनके आदेश का पालन करने हेतु भारी मन से निकल पड़े पैदल ही पैदल फुलेली की ओर। चलते चलते यह भजन भी कहते रहे।

भजन (स्वर भेरवी)

औखी सुझे थी आगे राह,

दाढी जारी ज़ारी।

1. घाटों आ झंगलु बेलो,

उतां आ हलिणों अकेलो।

कान्हे वञण जी बी वाह,

दाढी जारी जारी।

2. गोड़ि सिघनि जी आ,

राड़ि रिछन् जी आ,

सुणी सुकी थो वञे साहु

दाढी ज़ारी जा ़री।

3. वाअ ते वेरी बिया,

विढ़नि घणेई पिया,

पीड़े से कनि था पाह,

दाढी ज़ारी जारी।

4. माधव मौत जी चाढ़ी,

दाढ़ी आ मुश्किल भारी

नाथ तूँ करि पंहिजी निगाह,

दाढी ज़ारी ज़ारी।

अथ:- स्वामी जी ने इस भजन में कहते हैं कि आगे की राह बहुत कठिन लगती है। आगे बहुत घना जंगल है और वहां से अकेले ही जाना है, क्योंकि जाने के लिये दूसरी कोई राह नहीं है। इस जंगल में शेरों की गर्जना व रीछों की चिंघाड़ हो रही है जिसे सुनकर सांस सूख रहा है। राह में और भी बहुत से बैरी है जो लड़ रहे हैं, जो पेलकर प्राण निकाल रहे हैं। स्वामी जी कहते है कि यह मौत की चढ़ाई बहुत भारी है इस लिये मेरे नाथ! आप अपनी कृपा दृष्टि करो मेरी आपसे आगे यही विनती है।

भजन भी गा रहे थे और सत्गुरू महाराज का स्मरण भी कर रहे थे कि कैसे मेरे मालिक से दूर चले गये। सत्गुरू महाराज जी तो एक पल के लिये भी मेरे से नहीं भुलाये जाते और कहने लगे।

मूँखे कहिड़ी खबर इएं थीन्दो आ

सजो साह सजण में हंूदो आ

गम ईंदो आ लही वेन्दो आ

पर हिते त रूगो पेई बाहि बरे

मुहिंजो महबूब मूँख थियो आ परे

मूँसा रूह   जूँ रिहाणियूँ अजु केरू करे।

अर्थः- मुझे क्या पता था कि विरह में ऐसे होता है? सारे प्राण प्रीतम में होते हैं, गम आता है और चला जाता है। परन्तु यहां तो केवल विरह की आग लग रही है, मेरे महबूब मेरे से दूर चले गये हैं अब मेरे वह आत्मा की चर्चा कौन करें।

यह वह विरह की आग जगी थी जो भक्त शिरोमणी मीरां के दिल में कृष्ण के लिये जगी थी, राधा के दिल में प्रिय काना के लिये जगी थी, जो सूर के दिल में श्याम के लिये जगी थी। यह, वह विरह की अग्नि है जो भक्त को सोने के समान तपा कर ऐसे चमका देती है कि वह अपने आप को भूल कर अपनी खुदी को मार कर अपने महबूब से आत्म साक्षात्कार कराती है। संत कबीर ने इस रूहानी राह पर चलने वालों की चार मंजिलें बताई है। कबीर के मतानुसार यह आत्मा स्त्री रूप है और परमात्मा उसका पति है। जब तक इस जीव को परमात्मा का ज्ञान नही होता है तब तक यह आत्मा कँुवारी है, कारी है। यह उसकी पहली मंजिल है। जब जिज्ञासू को परमात्मा का ज्ञान होता है और उसे सत्गुरू द्वारा नाम दान प्राप्त होता है और उसका नाता परमात्मा से जुड़ता है तब उसकी कँुवारी आत्मा सुहागिन बनती है। उस के पश्चात जिज्ञासू के दिल में परमात्मा को पाने की प्यास जागती है, वह परमात्मा को पाने के लिये तड़पता है और परमात्मा को पाने के लिये इस संसार को त्यगा

कर सैकड़ों कष्ट झेलता है। तपस्या करता है, योग साधता है, यह विरहणी आत्मा की तीसरी मंजिल है। जब विरह की आग में काम क्रोध, लोभी मोह, अहंकार जल कर स्वाह हो जाते है और जिज्ञासू अपने आपको भुलाकर सब कुछ परमात्मा के चरणों में अर्पण कर देता है उसके अन्दर में जोत जागती हे और वह अपने अन्दर ही उस प्रकाश के द्वारा परमात्मा के दर्शन करता है। फिर सब भेद समाप्त हो जाते है और आत्मा परमात्मा एक हो जाते हैं, और यह आत्मा सती हो जाती है। यह चौथी मंजिल है।

सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी को अपने से जुदा कर अपने ह्दय में विरह की आग लगाई थी। उन से यह बिछुड़ना बर्दाश्त नही हो रहा था। इस प्रकार सत्गुरू महाराज जी को याद करते करते आकर फुलेली पर पहँुचे। मन में एक बेचैनी थी कि गांठ में एक पाई भी नहीं है अब यह आश्रम बनेगा कैसे? मन में कहने लगे कि अब सत्गुरू महाराज जी इस संकट में सुधामे के ऊपर कृष्ण के समान आकर सहाय हो। भक्त सुधामा भी मेरी तरह असहाय बनकर सत्तू की सौगात ले कर भगवान श्री कृष्ण के पास सहायता के लिये गया था, तब भी भगवान श्री कृष्ण ने ज़ाहरी तो कोई सहायता नही की, न पैसा दिया, न ही तसल्ली दी, परन्तु अन्दर ही अन्दर ऐसी रहमत की कि सुधामें के पहँुचने से पहले ही महल चौबारे बन गये, नौकर चाकर आ गये। जो जमीन पर गिरे हुए थे वे उसकी कृपा से चढ़ कर आकाश पर पहँुच गये। अब भी अस दास पर ऐसी दया करें ताकि लाज रह जाये। ऐसे मन को ढाढ़स बन्धा कर कहने लगे कि माधव! घबराओं नही जिन सत्गुरू महाराज जी ने जुदा किया है, सहायता भी वे ही करेंगे। और आकर इस सफर को सफल बनाएंगे। इस प्रकार दिल में प्रार्थना करने लगे।

भजन (राग पहाड़ी)

सुहेलो, सुहेलो सुहेलो कजाइं,

प्रभू अंत वेलो सुहेलो कजाइं।

1. दुखियां दीहं स्वामी अचनि जे दुखनि जा

दुखनि में न दातर दुहेलो कजाइं।

2. हमेशा हरी शल रहे ध्यान ही,

विरूहं वारो प्रभू न वेलो कजाइं।

3. सही सूर सखितियूँ जपियां मां सदा,

न गारे गणितीअ में गहेलो कजाईं।

4. अचे मौत माधव जे मुहिंजे मथां।

प्रभू अन्त वेले तूँ मोले कजाइँ।

अर्थः- इस भजन में स्वामी जी भगवान से प्रार्थना कर कहते है कि हे प्रभू! मेरा अंत सुहेला करना। यदि मेरे ऊपर कष्ट आवे तो मुझे अकेले मत छोड़ देना, पर आकर उस कष्ट की घड़ी में मेरी सहायता करना। हे प्रभु, सदा मन में तेरा ध्यान रहे, एक पल के लिये भी आप की याद दिल से नही जाये। मैं दुनियां के सब दर्द और कठिनाईयां सह कर भी आपका स्मरण करता रहूँ । आपके बिना मैं चिन्ता में चूर हो जाऊँगा। मेरे ऊपर जब मौत आए तब भी मेरी दिल में केवल आपका ही ध्यान और स्मरण हो ताकि मैं आप से सदा के लिये मिलकर एक हो जाऊँ।

सत्गुरू महाराज जी का स्मरण करते करते दीन मन में आकर मंजिल पर पहुँचे। मंजिल भी दुर्गम थी। न दरो दीवार थी न छत न था छप्पर, न ही छाया थी। नीचे जमीन थी और ऊपर खुला आसमान था पर-

आशुकनि धरिणो धरियो, दर दोसनि जे,

समुझियाऊँ सामी चवे अगे पोइ मरिणो

ही काया जो करिणो मेटे वेठा मन मूँ।

अर्थ:- परमात्मा के चाहने वाले ने अपने प्रीतम के घर पर धारण दिया यह समझकर कि आगे पीछे मरना तो है ही सो इस शरीर का मोह मन से निकाल कर सब कुछ उसके चरणों में समर्पित कर दिया।

स्वामी जी के लिये यह घड़ी परीक्षा की घड़ी थी। सत्गुरू महाराज के अतिरिक्त उन्हें और कोई भी सहारा नहीं दिखता था। उस वक्त उन्हें प्रहलाद भक्त की परीक्षा की घड़ी याद आ रही थी। जिस समय हरणाकष्यप ने लोहे का स्तम्भ गरम कर प्रहलाद भक्त को उस गरम जलते हुए स्तम्भ को अलिंगन करने का हुक्म दिया, उस समय आग जैसे लाल लोहे को देखकर उसका दिल दहल गया। परमात्मा ने चींटी का रूप धारण कर उस आग जैसे स्तम्भ पर चलकर कमजोर परन्तु सच्चे भक्त को तसल्ली देकर हिम्मत बंधवा कर अभय दान दिया था। इसी तरह सत्गुरू महाराज जी भी कोई दया दृष्टि करें ताकि इस कष्ट से पार हो जाऊँ।

जेकी मंझि जहान, सो तारीअ तगे तुंहिजे

लुतऽफ जी लतीफ चवे सो वटि कमी कान

अदुल छुटाँ न आउं, को फेरो कजि फजुल ॒ जो

सुतर कजि सतार, आऊँ ऐबनि उघाड़ी आहियाँ

ढकीं ढकण हार, देई पादु पनाह जो।

अर्थ:- हे परमात्मा! जो भी इस संसार में है वह सब तुम्हारे सहारे चल रहा है। आपके पास दया की कमी नहीं है। मैं यदि इंसाफ मांगू तो छूट नहीं सकता इसलिये मैं तुम से दया की

भीख मांगता हूँ । हे दयालू तुम मुझ पर दया करना क्योंकि मैं तो बुराईयों से भरा हुआ हूँ । आप उन बुराईयों को दया की महर डाल कर ढकना।

ऐसे अपने प्रीतम को कही रहे थे। अब कुछ प्रेमियों को पता चला कि स्वामी जाी ने यहा आकर अलग आश्रम बनाने के लिये अलख जगाया है सो सब आकर स्वामी जी के शरण में पहँुचे। उन उस ने स्वामी जी का खूब स्वागत किया और कहने लगे कि यह हमारे धन्य भाग्य है जो आप हमारी बस्ती में आश्रम बनाने के लिये पधारे है। आप का आश्रम बनने से हमारा लोक परलोक दोनों सफल होंगे। आप कृपा कर हम पर दया दृष्टि रखिये और हमें अपनी सेवा का अवसर प्रदान कीजिये। आपकी सेवा कर हम अपने आपको धन्य समझेंगे। हमारे पास जो कुछ है वह सब आपका है। आप तो केवल हुक्म करिये। इन प्रेमियों में श्री केशवदास जो पुलिस में कर्मचारी थे वो भी अपनी धर्म पत्नी के साथ आये हुए थे। लगातार स्वामी जी की ओर श्रद्धा से देख रहे थे। धीरे धीरे एक एक करके सब प्रेमी स्वामी जी की आज्ञा लेकर अपने घर जाने लगे परनतु यह श्रद्धालु भक्त जोड़ा बैठा रहा। जब देखा कि सब प्रेमियों के जाने के बाद स्वामी जी अकेले है, तब आगे बढ़ कर उनके चरणों में पाँच हजार रूपये रखे। यह भेंट रख कर उन्हें निवेदन किया कि स्वामी जी आप यह तुच्छ भेंट स्वीकार करें और आश्रम का कार्य आरम्भ करें। बाकि मालिक आकर सहाय होंगे।

भक्त केशवदास की यह भेंट स्वीकार कर स्वामी जी गद्गद् हो गये। भक्त केशवदास को आशीर्वाद देकर कहने लगे कि भाई! तुमने इतनी बड़ी भेंट हमें कैसी दी! इस पर भक्त केशवदास ने निवेदन की कि स्वामी जी मैं तो अपना पुराना ऋण चुका कर उरिण हो रहा हूँ । इस पर स्वामी जी ने आश्चर्य से पूछा भाई! कैसा ऋण! हमें खोलकर बताओ। इस पर केशवदास जी बोले कुछ समय पहले हम दोनो सब तरफ से निराश होकर सत्गुरू महाराज स्वामी टेऊँराम जी के पास गये और निवेदन किया कि हमारी सूनी गोद भर दो। हम आप के चरणों में पाँच हजार रूपये की भेंट चढ़ायेंगे। सत्गुरू महाराज जी ने आशीर्वाद देकर कहा कि

जब तुम्हारी गोद भर जाये तो हमारी अमानत, जब हमारे प्रतिनिधि आपसे अपने आप लेने आये तो उन्हें दे देना। वह भेंट हमें देने की आवश्यकता नहीं है।

उनके आशीर्वाद से हमें पुत्र रत्न प्राप्त हुआ है। हमारी आस पूरी हो गई। जब आप के पधारपण का सुना तो हमने समझा कि सत्गुरू महाराज ने अपनी भेंट स्वीकार करने के लिये अपना प्रतिनिधि भेज दिया है और हम अपना वह पुराना कर्ज़ उतारने के लये आप की सेवा में उपस्थित हो गये।

स्वामी जी मन में सोचने लगे कि सत्गुरू महाराज अन्तर्यामी है और उन्होंने यह गुप्त कृपा, कृष्ण भगवान के समान इस सुदामें रूपी भक्त पर की है। यह सोचकर सत्गुरू महाराज जी को दिल ही दिल में प्रणाम करने लगे। सत्गुरू महाराज की कृपा की थाह ही नही है। अन्दर ही अन्दर सब कार्य रास कर देते हैं।

इस भक्त की भेंट स्वीकार करने के पश्चात स्वामी जी ने आश्रम के निर्माण कार्य को आरम्भ कर दिया। आश्रम के लिये भूमि तो स्वामी जी ने पहले से ले ली थी। बाकि निर्माण कार्य के लिये पाँच हजार रूपये उस ज़माने में पर्याप्त थे क्योंकि उस समय पाँच हजार का मूल्य बहुत था। आरम्भ में तीन कमरों वाले आश्रम की योजना बनाई गयी। धीरे धीरे कार्य करते हुए 1941 में आखिर यह आश्रम बन कर तैयार हो गया। दिल में निश्चय किया कि आश्रम का शुभारम्भ सत्गुरू महाराज के कर कमलों द्वारा करवाया जाये। क्योंकि उनकी असीम कृपा से ही यह आश्रम बन कर तैयार हुआ था। सत्गुरू महाराज उस समय कुम्भ के मेले पर प्रयाग राज गये हुए थे। जब वहां से लौट कर सीधे हैदराबाद आये, तब स्वामी जी ने उन्हें विनती की कि आपकी ही आशीर्वाद से आश्रम बन कर तैयार हुआ अब चलकर अपने पवित्र कर कमलों से उसका उद्घाटन करने की कृपा करें। उसके बाद ही मैं प्रवेश करूंगा। सत्गुरू महाराज जी ने बड़े उत्साह और हर्ष के साथ बढ़ी धूम धाम से आश्रम का उद्घाटन किया। उस शुभ अवसर पर सभी गुरू भाईयों को निमंत्रण देकर बुलवाया गया। विधि विधान

से हवन करने के पश्चात आश्रम पर झण्डा चढ़ाया गया। भव्य ब्रह्म भोज की व्यवस्था की गई। संत समागम हुआ संतों के प्रवचन हुए जैसे कि मेला लग गया।

आश्रम की व्यवस्था सभी को बहुत अच्छी लगी। सभी को बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने थोड़े समय में साध माधव ने यह अलोकिक आश्रम अकेले ही बिना किसी सहारे कैसे खड़ा कर दिया। बीच वाले हाल में गुरू ग्रंथ साहब रखा गया। उसके साथ सत्गुरू महाराज जी की तस्वीर रखी गयी थी। हाल के बांये ओर उन्होंने पूज्य पिता साहब को रखा था जो वे जगत गुरू शंकराचार्य के समान अपने पित्र ऋण में उरिण होना चाहते थे। जगत् गुरू शंकराचार्य ने संन्यासियों के लिये एक आदर्श उपस्थित किया था कि सन्यासी को अपने पित्र ऋण में उरिण होने में कोई बन्धन नही है। पित्र ऋण में उरिण होना तो पुण्य का काम है। सो स्वामी जी सन्यास ग्रहण करने के पश्चात भी अपने कर्त्तव्य का पालन करने से पीछे नहीं हटे थे। हाल के दायीं ओर स्वामी जी ने अपने विश्राम के लिये कुटिया बनवाई थी।

अब प्रतिदिन नियम से आश्रम में सत्संग होने लगा। स्वामी जी के भजनों में वही गुरू भक्ति की पुकार भरी हुई थी। हर भजन में सत्गुरू महाराज जी को याद करते रहते थे।

भजन (राग मांझ)

मुहिंजा सत्गुरू दिल मां,

शल नाउं न तुंहिंजो विसरे।

1. तख्त मिले बादशाही

या दरि दरि करियां गदाई

भली मिले न हिकड़ी पाई,

शल नाउं न तुहिंजो विसिरे।

2. सदा रहां मां झंगलनि में,

या मोहीन्दड़ महिलनि में,

भली वन्द रहां मां जेलनि में,

शल नाउं न तुंहिंजो विसिरे।

3. देव थियां मां माणिहुनि में

मूर्ख थियां मां सियणनि में,

भलि वञा मां कहिड़ियुनि खाणियुनि में,

शल नाउं न तुंहिजो विसिरे।

अर्थ:- इस भजन में स्वामी जी कहते है कि मेरे सत्गुरू स्वामी! आप का नाम मेरे दिल में से एक पल के लिये भी नही निकले आठों पहर मैं आपको याद करता रहूँ । मुझे चाहे बादशाही तख्त और ताज मिले या मैं फकीर बनकर दर दर जाऊँ और मुझे एक पाई भी न मिले फिर भी आप का नाम दिल से न बिसरे। मैं सदा जंगलों में रहूँ या दिल को लुभाने वाले महलों में रहूँ या जेलों में बंद रहूँ परन्तु आप का नाम मेरे दिल से नही बिसरे। मैं मनुष्यों में भली देवता बनू या बुद्विमानों में मूर्ख बनूं या भली कैसी भी खानों में चला जाऊँ परन्तु आप का नाम एक पल के लिये भी नहीं भूलूं ।

स्वामी जी के दिल में यह कामना थी कि सत्गुरू महाराज जी के चरणों में रहकर साधना करूं ताकि उनका आशीर्वाद का हाथ सिर पर रहने से मंजिल पर जल्दी पहुँच सकूं । परन्तु सत्गुरू महाराज जी की लीला तो अजीब थी। वे चाहते थे कि थोड़ा समय उनके पास रहकर फिर दूर चले जायें ताकि स्वामी जी जल्दी अपने पांव पर खड़े हो जाये। उनका तरीका तो उस चिड़िया के समान था जो अपने बच्चे को थोड़ा सा दाना देकर दूर चली जाती है ताकि

वह बच्चा दाना लेने के लिये उड़कर उसके पास पहुँचे। इस प्रकार वह अपने बच्चे को उड़ने की शिक्षा देती है। इसी प्रकार सत्गुरू महाराज जी ने भी स्वामी जी की आध्यात्मक क्षेत्र में उड़ान की शिक्षा देने के लिये यह तरीका अपनाया था। स्वामी जी भी एकलव्य के समान सत्गुरू महाराज जी की मूर्ति की स्थापना कर स्नेह से साधना करने लगे। सत्गुरू महाराज जी की मूर्ति को तिलक लगाकर, फूलों से खूब सजाकर सुबह शाम सत्गुरू महाराज जी का दिल में ध्यान और स्मरण करते थे। अपने सत्गुरू महाराज जी को भगवान का स्वरूप जान कर उनकी पूजा और अर्चना करते थे और उनकी महिमा के भजन गाते थे।

भजन

सत्गुरू जो धरि ध्यान तूँ,

जाणी सच्चो भगवान तूँ।

1. केसर कुंगूअ जा तिलक बणाए,

   करि आरतीअ सा अजियां तूँ

2. गुलनि फुलनि जा हार बणाए,

   सिक सां कर सनमान तूँ

3. सरिगुण रूप सत्गुरू जाणी,

   करि प्रेम सा प्रणाम तूँ।

4. माधव महिल जा मोती अथेई,

   करि पहिंजो कल्याणु तूँ।

अर्थ:- स्वामी जी ने इस भजन में सत्गुरू महाराज जी की महिमा बताते हुए कहा कि सत्गुरू को तुम भगवान मान कर उनका मन में ध्यान एवं स्मरण करो। सत्गुरू महाराज जी को केसर और कुमकुम का तिलक लगाकर उनका स्वागत आरती से करो। प्रेम से फूलों क हार बनाकर तुम उनका सम्मान करो। सत्गुरू महाराज जी को परमात्मा का सगुण रूप जानकर तुम उनको उसी भाव से प्रणाम करो। स्वामी जी कहते है कि यह सब समय की बलिहारी है इसलिये इस शुभ अवसर का लाभ उठाकर तुम अपना कल्याण करो।

आश्रम के सभी कार्य और सेवा पूजा नियम से करने लगे। सुबह को आसादी वार होती थी। गुरू ग्रंथ साहब का पाठ कर वचन लेते थे ओर उस वचन को भगवान की इच्छा मानकर उनका मनन करते थे। सायंकाल सत्संग और गुरू चर्चा करते थे। उनके सत्संग में बड़ा आकर्षण था। दिनों दिन श्रद्धातुओं की संख्या बढ़ती जा रही थी। आश्रम में सारा दिन आनन्द छाया रहता था। सायंकाल सत्संग के पश्चात प्रेमियों में ढोढा चटनी अपने हाथ से बांटते थे। सभी प्रेमी अमृत रूपी ढोढा चटनी खाकर उंगलियां चाटते हुए कहते थे कि इस ढोढे चटनी में ऐसा स्वाद है जो छत्तीस पकवानों से भी नही मिल सकता। बाहर से आने वाले प्रेमियों के लिये भण्डारा सदा खुला रहता था। पहले अपने प्रेमियों को खिलाकर बाद में स्वयं भोजन ग्रहण करते थे। जो प्रसाद प्रेमी लाते थे वह सब उपस्थित प्रेमियों में बांट देते थे। एक बार रात्रि के समय कुछ अतिथि बाहर से आये। जो भोजन तैयार था वह उन्हें खिलाया। भोजन करते समय सेवाधारी को कहा बेटा! अन्दर देखो! यदि आम हो तो ले आओ। सेवाधारी से पूछा बेटा! सब आम ले आये हो? इस पर सेवाधारी ने उत्तर दिया कि स्वामी जी! चार बढ़िया आम छांट कर आपके लिये रखे हैं बाकि सब आम ले आया हूँ । भोले सेवाधारी ने समझा कि यह बात सुनकर स्वामी जी बहुत खुश होंगे और मुझे शाबाशी देकर कहेंगे कि तुमने बड़ा अच्छा काम किया है जो अपने गुरू के लिये बढ़िया आम छांट कर रख आये हो। परन्तु बात उल्टी हुई, स्वामी जी ने कहा कि बेटा! घर आया मेहमान भगवान का रूप होता है और भगवान को तो सबसे बढ़िया चीज़ अर्पण करते हैं। अब जाओ! जाकर वे बढ़िया आम काट

कर इन भगवान रूपी महमानों को खिलाओ तो हम तुम्हें शाबाशी देवें। ये वचन सुनकर बैठे हुए सभी प्रेमी स्वामी जी की महानता पर बलिहारी जाने लगे। स्वामी जी अपने प्रेमियों को बहुत प्यार करते थे। जो कुछ उन के पास होता था वह बार बार उन्हें देते रहते थे। प्रेमी एक बार उनके निकट आने के पश्चात सदा के लिये उनका हो जाता था। उनकी लीला भी भगवान श्री कृष्ण के समान अपरम्पार थी। जैसे हर एक गोपी कहती थी कि कृष्ण मेरा है वैसे ही हर एक प्रेमी यही कहता था कि स्वामी जी तो केवल मेरे ही है। स्वामी जी ने मुझे इतना प्रेम दिया है जितना सगे मां बाप ने भी नही दिया। प्रेम पाकर प्रेमी बढ़ते ही जा रहे थे। आश्रम में श्रद्धालुओं को सुबह से शाम तक तांता लगा रहता था। हर समय सत्संग का दीवान लगा रहता था। स्वामी जी सत्संग को बहुत महत्व देते थे। भजन द्वारा सत्संग के महत्व को समझा कर कहते थे-

भजन (राग टोरी)

अथई सतसंग पाइण लाइ

पंहिजे मन जी मैल मिलइण लाइ

1 सत्संग में सच्चो ज्ञान मिले

ऐ आतम जो पिणि ध्यान मिले

सच्चे नाम संदो त निशान मिले,

हीअ राह राम रीझाइण लाइ

2. सत्संग समुन्द्र में नाव अथेई,

सच्चे राम मिलण जी राह अथेई

जे प्रभू पसण जी चाह अथेई,

रखु अगिते विख वधाइण लाइ।

3. सत्संग में दुख दर्द मिटे,

ऐं कोट जन्म जो कजऱ् मिटे

हिन देहि दुखीअ जो मजऱ् मिटे,

हीअ दवा दर्द मिटाइण लाइ।

4. जे सत्संग में पेर पाईं दे,

कदहिं माधव दोखो न खाई दे।

सजो लोक सुखी करे भाईं दे।

रखु नातो तोड़ि निभाइण लाई।

अर्थः- स्वामी जी इस भजन में सत्संग का महत्व बताते हुए कहते है कि यह सत्संग अपने मन की मैल मिटाकर शांति पाने का अचूक साधन है। सत्संग से सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है और अपने आत्म स्वरूप में ध्यान लगाने का साधन मिलता है। इसी से सच्चे नाम का पता लगता है जिसमें हम अपने राम को रिझा सकते है। यह सत्संग संसार रूपी सागर में नाव के समान है जिसके द्‌वारा जिज्ञासू पार हो सकता है। यह सत्संग परमात्मा के मिलने का रास्ता है। यदि तुम्हारे अन्दर प्रभू से मिलने की चाह है तो फिर सत्संग में आकर उस राह पर अपना कदम बढ़ाओ। सत्संग में आने से सब दुःख दूर हो जाते हैं। कोटि जन्मों के कर्मों का हिसाब चुक जाता और हम उरिण हो जाते है। सत्संग से इस देह के सब रोग दूर हो जाते है। सत्संग सभी प्रकार के कष्टों को दूर करने की अचूक दवा है। स्वामी जी फरमाते हैं कि यदि तुम सत्संग में आओगे तो तुम कभी धोखा नही खाओगे। तुम्हें सारे संसार में चारों ओर सुख ही सुख प्रतीत होगा, इसलिये तुम इस सत्संग से नाता रख कर निभाओ।

भजन पूर्ण कर स्वामी जी कहने लगे कि यह मानख देह हमें बड़े भाग्य से मिली है। इस इंसानी जामे में ही हम परम पिता परमेश्वर को पा सकते हैं। संसार में जो दूसरे जीव हैं उनमें बुद्धि का अभाव है, जिस कारण वे ईश्वर को पाने में असमर्थ हैं। इसलिये हम पल पल परमात्मा का स्मरण कर और भजन कर उनको प्राप्त कर अपना जीवन सफल बनायें, नहीं तो हमें ऐसा सुनहरी अवसर हाथ नहीं आयेगा। सत्संग में हर रोज आकर हम उस राह पर चल सकते हैं। सत्संग में आने से मन की मैल धुल जायेगी और माया का पर्दा हट जायेगा। तब हम अपने अन्दर झांक कर, मन मन्दिर में अपने ठाकुर का दर्शन कर सकेंगे। उस से ही सच्चे आनन्द की प्राप्ति होगी। यदि हमने इस मानख देह की कदर नहीं की तो हमें पछताना पड़ेगा। इंसानी चोले के महत्व को समझाने के लिये स्वामी जी ने अपने प्रेमियों को यह दृष्टांत समझाया।

दृष्टान्त :- एक राजा था। राजा बहुत नेक और प्रजापालक था। उसके राज्य में प्रजा बहुत सुखी थी। सब तरफ शान्ति थी और भण्डार भरे हुए थे। यह सब होते हुए भी राजा के दिल में एक कांटा सदा चुभता रहता था। रात दिन उसे यह चिन्ता सताती रहती थी कि मेरे बाद इस विशाल राज्य का वारिस कौन होगा क्यों कि उसे कोई भी सन्तान नहीं थी। बहुत पीर फकीर पूजने के बाद किसी सन्त के आशीर्वाद से उनकी मनोकामना पूरी हुई। वर्षो की चिर प्रतीक्षा के पश्चात् उसे एक अति सुन्दर सुपुत्र उत्पन्न हुआ। सारे राज्य में खुशी की लहर दौड़ गई। खुश होकर राजा ने खज़ाने के द्वार खोल दिये। दिल खोल कर दान दिया। जब सब दान ले गये तब राजा की नज़र महल की सफाई करने वाले पर पड़ी। राजा ने मंत्री को आज्ञा की कि उसे हीरों-जवाहरों से जड़ा सोने का थाल इनाम में दिया जाये। राजा के हुक्म के अनुसार उसे रत्न जड़ित सोने का थाल दिया गया। वह सेवक यह सुन्दर थाल पा कर बहुत खुश हुआ। राजा ने समझा यह अमूल्य इनाम पाकर उसकी दरिद्रता दूर हो जायेगी और यह सुखी जीवन बिता सकेगा। परन्तु कुछ दिनों के पश्चात् राजा कर नज़र उस सफाई करने वाले पर पड़ी। राजा को देखकर आश्चर्य हुआ कि वह उस बहुमूल्य रत्न जड़ित थाल से मिट्टी

ढो रहा था। राजा ने उसे बुलाकर पूछा कि तुम इतने बहुमूल्य थाल में मिट्टी ढो कर उसकी बेकदरी क्यों कर रहे हो? तब उस अज्ञानी ने उत्तर दिया कि मेरा काम ही मिट्टी ढोना है और मैं इस इनाम में पाये हुए थाल में वही अपना काम कर रहा हूँ । राजा को उसकी बेवकुफी पर गुस्सा आया। राजा ने वज़ीर से कहा कि इसको इस बहुमूल्य थाल की कदर नही है इसलिये यह सोने का थाल छीनकर इसे लोहे का थाल दिया जाये। सफाई वाला सोने का थाल गवां कर लोहे के थाल में ही मिट्टी ढोने लगा।

स्वामी जी दृष्टान्त बताकर प्रेमियों को कहने लगे कि राजा रूपी मालिक ने हमें बहुमूल्य हीरे मोती जड़ित सोने के थाल समान यह मानख देह दी है। यदि हमने उसका कदर नही किया तो मालिक यह देह छीन कर कीड़े मकोड़ों की देह देंगे। और फिर चौरासी के चक्कर में फंस कर पश्चाताप करते रहेगे परन्तु सब कुछ जाने के बाद पश्चाताप से क्या लाभ? इसलिये जल्दी सुजाग होकर परमात्मा से साक्षात्कार करे।

ऐसे दृष्टान्त सुनकर प्रेमियों के दिल में परमात्मा के पाने की उत्कंठा पैदा होने लगी। वे उनसे जिज्ञासा वश पूछते थे कि स्वामी जी भगवान कहाँ है? भगवान को कैसे प्राप्त कर सकते हैं? स्वामी जी उनको भजन द्वारा यह राज़ खोल कर समझाते थे।

भजन

परे निहारी छो थो

पहिरी पंहिजो पाणु सुञाणु।

1. ही जो दम सा दम हले थो,

तंहिं में थेई अहिञाणु।

सूझे तंहि खे साफ सही करि

साहिबु तो ही साणु।

2. ही जो सुहिणो जगत दिसीं थो

सिजु चण्डु ऐ चाण्डाणि

सभजो साई तूँ ई आहीं

परझी पाणु सुञाणु।

3. ही जो आडम्बर दिसीं अखियुनि सां,

माया जो समि माणु

सभ में सागी जोति अथेई

हिक लालण जी लालाण

4. मन अन्दर में महिलु अथेई,

महिल में मोहनु जाणु

माधव मिली मोहन सां,

करि तूँ रूह रिहाणि।

अर्थ:- स्वामी जी इस भजन में कहते हैं कि ऐ इन्सान तुम दूर क्यों देखते हो सबसे पहले तुम अन्तरमुख होकर अपने आपको पहचानो। यह तो हमारे अन्दर सांस चल रहा है उसमें ही संकेत है तुम समझ कर उसे सही और साफ तरह पहचानो तो तुम्हें पता लगेगा कि परमात्मा कहीं बाहर नहीं परन्तु वह तो तेरे ही साथ है। यह जो तुम सुन्दर संसार देखते हो, सूर्य चान्द और सुन्दर चाँदनी देखते हो इस सब के मालिक तुम स्वयं हो। इसलिये तुम अपने आपको पहचानो। यह जो तुम आडम्बर और दिखावा देखते हो वह सब माया का भुलावा है। इन सब

में एक ही परमात्मा की जाते है और उस में उसी का रंग है। स्वामी जी एक बहुत बड़े रहस्य की बात कहते हैं कि हमारे मन में एक महल है उसी में परमात्मा निवास करते है तुम अन्दर में डुबकी लगाकर उससे मिल कर अपनी आत्मा को तृप्त करो।

स्वामी जी भजन पूरा कर प्रेमियों से कहने लगे कि परमात्मा का दर्शन अन्दर के नेत्रों से कर सकते हैं, और अन्दर की आँखें तब खुलेंगी जब हमारा हृदय निर्मल होगा और मन का निर्मल करने के लिये सत्संग की आवश्यकता है। हमारा मन माया से मिला हुआ है और हमें बाहर भटका रहा है। मन को समझाने और अन्दर को ओर मोड़ने के लिये संत महात्मा की संगति की आवश्यकता है, वे संत महात्मा ही हमें शक्ति प्रदान करेंगे जिसके द्वारा हम भव सागर पार कर सकेंगे। स्वामी जी कहने लगे कि जीव और माया की स्थिति सांप और नेवले के समान है। सांप और नेवले की जब लड़ाई होती है तब सांप के डसने से जब नेवले के ऊपर ज़हर चढ़ने लगता है, उस समय नेवला दौड़ कर झाड़ियों में छिप जाता है। वहाँ वह एक पौधे को सूँघने से उसका ज़हर उतर जाता है और उसमें फिर से सांप से लड़ने की शक्ति आ जाती है और नयी शक्ति प्राप्त कर वह सांप को मार कर उस युद्ध में सफलता प्राप्त करता है। नेवले के समान यह जीव भी संसार रूपी सांप से लड़ता है। यदि उसको सफलता प्राप्त करनी है तो सत्संग रूपी बूटी को हर रोज सूँघना होगा। यह बूटी हर रोज़ सूँघने से वह अपने मन को जीतकर अपने अन्दर झांक कर परमात्मा के दर्शन कर जीवन सफल बना सकेगा।

इस प्रकार स्वामी जी अपने प्रेमियों का सत्संग रूपी अमृत का आनन्द दिलाते रहते थे। परन्तु अनेक हृदय में अपने सत्गुरू महाराज के लिये स्नेह और लगाव भरा हुआ था सो उनसे रहा नहीं गया। एक दिन सायंकाल सत्संग समाप्त कर निकल पड़े सत्गुरू महाराज जी के दर्शनों के लिये। दरबार पर देखा कि सत्गुरू महाराज जी रटन कर वहां पहुंचे ही थे। सत्गुरू महाराज जी का दर्शन कर उनकी आंखे ठण्डी हो गई। सत्गुरू महाराज जी को कहा कि अब चल कर हमारी कुटिया को पवित्र कीजिये। सत्गुरू महाराज जी ने उन्हें तसल्ली देते हुए कहा कि हम तुम्हारे पास अवश्य ही आयेंगे। जैसे हमारा स्नेह तुम्हें यहां खींच कर लाया है वैसा ही

स्नेह हमारे अन्दर तुम्हारे लिये भी है। तुम सदा हमें याद हो। परन्तु हम तुम्हारी दरबार पर तब आयेंगे जब तुम मेला लगाओगे। स्वामी जी ने यह शर्त खुशी से कबूल की। उनसे आशीर्वाद लेकर दरबार पर आये। दोनों दिवस सत्संग के समय यह खुश खबरी बताई कि सत्गुरू महाराज जी ने बड़ी कृपा कर हमारी दरबार को पवित्र करना स्वीकारा है। परन्तु उन्होंने आज्ञा की है कि उस समय दरबार पर मेला लगाया जाये और मैं आप प्रेमियों की ओर से उन्हें मेले लगाने की तसल्ली देकर आया हूँ। अब उस मेले लगाने का भी आप सब प्रेमियों को अपने कंधों पर उठाना होगा। हर प्रेमी इस कार्य को पूर्ण करने का संकल्प लेगा तो बेड़ा पार हो जायेगा। हर एक प्रेमी अपनी शक्ति अनुसार यदि सहयोग करे तो यह कोई कठिन कार्य नहीं है। उस दिन सत्संग में प्रेमियों को एक दृष्टांत बताया।

दृष्टांत :- एक दिन संत महात्मा रटन पर निकले उनके साथ उनके प्रेमी भी थे। सन्त जी एक गांव से दूसरे गांव जाकर सत्संग करते थे। एक दिन जैसे एक गांव से दूसरे गांव जा रहे थे तो रास्ते में किसान खेतों से अनाज काट कर खलिहानों में डालकर बैलों द्वारा उसे निकलवा रहे थे। बेचारे बैल अनाज के ऊपर घूम रहे थे। यदि कोई बैल गर्दन नीचे कर अनाज खाने की कोशिश करता तो किसान उसे जोर से डण्डा मारता था। यह हाल देखकर किसी दयावान प्रेमी ने सन्त जी से पूछा कि स्वामी जी यह कैसा अन्याय है कि अनाज का ढेर होते हुए इन बेजुबान प्राणियों को एक मुट्ठी भर खाने की इजाज़त नहीं है। इस पर संतों ने उन्हें समझाते हुए कहा कि भाई! यह सब पिछले जन्मों का कर्म है। पिछले जन्म में यह बैल बड़े धनवान थे, परन्तु उन्होंने अपना सम्पूर्ण धन तिजोड़ियों में छिपा कर रखा था। समाज के किसी शुभ कार्य में उन्होंने वह धन नहीं लगाया। न खुद खाया और न दूसरे को खाने दिया। इस जन्म में बैल बने है, अनाज के अम्बार सामने होते हुए भी यह एक मुट्ठी भर खा नहीं सकते। ईश्वर ने कृपा कर जो धन हमें बख्शा है उस पर समाज का भी अधिकार है। इसलिये समाज के शुभ कार्यों पर धन लगायेंगे तो हमारे दोनों लोक सफल होंगे। इस लोक में नेकी और यश मिलेगा और दूसरे जन्म में हमें उससे भी अधिक मिलेगा।

यह दृष्टान्त बता कर प्रेमियों को सामाजिक कार्यों में सहयोग करने का महत्व समझाया। सत्संग समाप्त होने के पश्चात एक प्रेमी जोड़ा उनकी सेवा में उपस्थित हुआ और उन्हें निवेदन किया कि स्वामी जी! ईश्वर ने हमें सब कुछ दिया हे, सो ये सात हजार रूपये स्वीकार कीजिये और मेला बड़ी धूमधाम से लगवाईये और सत्गुरू महाराज जी को आज ही जाकर यहां पधारने का निमंत्रण देकर आईये। स्वामी जी इन सच्चे प्रेमियों की इतनी श्रद्धा और भक्ति देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्हें खूब आशीर्वाद देकर दूसरे दिन जाकर यह शुभ समाचार सत्गुरू महाराज जी को बताया। सत्गुरू महाराज जी से आज्ञा लेकर आश्रम पर एक विराट मेले का आयोजन किया। पूरे तीन दिन अखण्ड पाठ चलते रहे और भण्डारे चालू रहे। संतों की मण्डलियां सुबह शाम प्रेमियों को सत्संग रूपी अमृत पिलाती रही। स्वामी जी के दिल में सत्गुरू महाराज जी के लिये जो श्रद्धा और तड़प थी वह उनके भजनों में झलकने लगी।

भजन

1. दिल तड़फे थी जिन खे ऽखातिर

से सन्त सच्चा आइया,

महिर करे मिस्कीन मथां,

से दातार दिलावर आइया।

2. कहिड़ी महिमा तिनि जी गायां,

लख थोरा तिनि जा भायां मां

बाझ करे बालक ते पंहिजे,

से परम पियारा आइया।

3. अजु दिलि खे बहारी आई आ,

खुशी खूब मन में आई आ,

कहिड़ी भेंट धरियां तिनि जे अगियां,

पेर भरे जे हिति आइया।

4. चवे टेऊँ मंगल मनाया थो,

मिली गीत तींहिं सा गायां थो

करे दया दासनि ते दीन बन्धु,

से अन्दर उजियारा आइया।

अर्थ:- स्वामी जी इस भजन में कहते हैं कि जिन के लिये मेरा दिल तड़प रहा है, वे सच्चे संत आज मेरे द्वार पर आ गये हैं। वे मुझ गरीब पर कृपा कर स्वयं दातार, दिलावर मेरे द्वारा पर आये हैं। मैं उनकी कितनी महिमा गाऊँ, मुझ पर उनके लाखों अहसान हैं। वे इस बालक पर कृपा कर पधारे हैं। उनके पधारने से मेरा दिल बहुत खुश है। अब मैं उनके आगे कौनसी भेंट रखूं। स्वामी जी कहते हैं कि मैं मंगल मनाता हूँ , उनसे मिलकर गीत गाता हूँ , क्योंकि वे अन्तर आत्मा उज्ज्वल करने वाले दीन बन्धु इस दास पर दया कर पधारे हैं।

सत्गुरू महाराज जी की बढ़ाई के गीत सुनाकर प्रेमियों को सत्गुरू महाराज जी की महिमा समझा कर कहने लगे कि इनकी महिमा कही नहीं जा सकती, शब्दों में इतना सामर्थ्य नहीं है। यदि ये पर्वत के समान है तो हम एक गण के समान है। यदि ये सागर है तो हम एक बूंद के बराबर है। यदि ये सूर्य है तो हम उनके एक किरण के समान है।

आँखों की सफलता इस में है कि वे सत्गुरू महाराज के दर्शन कर कृतार्थ हो, जिव्हा की सफलता उसमें है कि वह सत्गुरू महाराज के महिमा के गीत गाये। इन आँखों में उनकी ज्योति समायी हुई है और दिल में उनका आनन्द समाया हुआ है।

अर्जुन का रथ जब श्री कृष्ण भगवान ने चलाया तब ही महाभारत के युद्ध में उसको सफलता मिली, उस प्रकार जब हम भी इस मन रूपी रथ को सत्गुरू महाराज जी को अर्पण करेंगे तभी इस संसार रूपी संग्राम में सफल होंगे।

सत्गुरू महाराज जी को निवेदन कर कहने लगे कि कृपा कर प्रेमियों को अमृत वचन पिलाकर उनकी प्यास बुझाओ। सत्गुरू महाराज जी उनकी निवेदन स्वीकार कर प्रेमियों को कहने लगे।

साध संगत की तीन लोक में,

जानों बड़ी बढ़ाई

श्रद्धा से जिन सत्संग किया

पूर्ण पदवी पाई।

सत्गुरू महाराज जी ने सत्संग समागम की महिमा समझाने के लिये वाल्मीकि ऋषि के जीवन से उदाहरण देकर संगत को भजन सुनाया।

1. वाल्मीकि मार्ग का डाकू,

राह मुसाफिर मारे,

इक दिन सप्त ऋषि वहां आये,

ताके निकट सिधारे,

किस लिये तुम पाप करत हो?

संत वचन उचारे।

2. सुन पाप में मात पिता पन,

साई पुत्र लुगाई,

पूछ कुटम्ब से आओ भैया,

अब तो ना हम घटना,

बाल्मीकि तब हंस कर बोला,

तुम तो चाहत छुटना,

बान्ध वृछ हम को जाओ,

पीछे आकर लुटना,

आप बन्धा कर करत भल तन,

सन्तन पर बलि जाई।

3. सन्तन को वहां बान्ध बृछ से

वाल्मीकि घर चलिया,

इसी पाप में मुझ से शामिल,

हो या ना तुम पलिया,

कि विधि भी तुम हम को पाली

पाप संगी नहीहं झलिया,

ऐसे सुन घर बार त्यागे,

आइ पड़ा शरणाई

कहे टेऊं भये सन्त दयालू,

अपने चरणे लाया,

राम राम दे मन्त्र उसी को,

एक जग बिठलाया,

मरा मरा रट तीन काल का,

ज्ञान उसी ने पाया,

सन्त समागम एक घड़ी भी,

वृथा कबहूं न जाई।

सत्गुरू महाराज जी भजन का अर्थ समझाकर प्रेमियों को कहने लगे कि जिस प्रकार वाल्मीकि ने एक घड़ी के सन्त समागम से कोटि-कोटि जन्मों के पापों को धोकर लोक परलोक सुधार लिया, उसी प्रकार आप भी इस सुनहरी अवसर को हाथों से मत गंवाओ। उस के पश्चात् सत्नाम साक्षी की धुनि लगाकर सत्संग समाप्त किया।

मेले की समाप्ति के पश्चात् स्वामी जी ने सत्गुरू महाराज जी को हाथ जोड़कर विनती की कि अब कृपा कर अपना दिया हुआ वचन पूरा कीजिये। आप यहां रह कर मुझ दास को सेवा का अवसर प्रदान करें, ताकि मैं आपकी सेवा कर अपना जीवन सफल बनाऊं। अब दिया हुआ वादा पूरा कीजिये और यहीं पर आसन्न जमाइये। सत्गुरू महाराज जी ने

उत्तर दिया कि तुम्हारी श्रद्धा और स्नेह तो हमें बहुत आकर्षित कर रहा है परन्तु यदि अलग कोई कुटिया होती तो हम अवश्य रह जाते। स्वास्थ्य कुछ अलील रहने लगा है। इच्छा है कि आखरी समय यहां एकान्त में व्यतीत करें तो अच्छा है। यह सुनकर स्वामी जी के चित्त में चैन आ गया। सोचने लगे कि अब यह जीवन सफल होगा। सत्गुरू महाराज जी यहां रहकर इस दास पर बड़ी कृपा करेंगे। दिल ही दिल में परमात्मा से प्रार्थना करने लगे कि जल्दी कहां से पैसों की व्यवस्था हो जाये तो सत्गुरू महाराज जी के लिये अलग कुटिया बनाऊं।

दूसरे दिन नियमानुसार सत्संग हुआ स्वामी जी ने भजन गाये और प्रेमियों को अमृत वचन सुनाये। इस समय उनका सम्पूर्ण ध्यान सत्गुरू महाराज जी के लिये कुटिया बनवाने में लगा हुआ था, ताकि कुटिया बनवाने के बाद सत्गुरू महाराज जी की दिल खोलकर सेवा कर यह जीवन सफल बना सकें। आज सत्संग करते समय यह दृष्टांत इस प्रकार है :-

दृष्टान्त :- एक बार सन्त महात्मा रटन करते हुए आकर एक गांव में पहुंचे। उनकी इच्छा थी कुछ दिन वहीं पर विश्राम कर फिर आगे बढें। सो गांव के चौपाल पर अपनी धूनी रमाई। कुछ समय कुछ श्रद्धालू प्रेमी उनकी सेवा में उपस्थित हुए और उन्हें भोजन करने के लिए विनती करने लगे। इस पर संतों ने उस से पूछा कि बेटा! यहा पर कोई मन्दिर या धर्मशाला है, जहां पर हम कुछ दिन विश्राम कर सकें? इस प्रश्न पर प्रेमी शान्त हो गए और बिना उत्तर दिए एक दूसरे की और देखने लगे। उनकी चुप्पी देखकर सन्त जी समझ गये कि दाल में कुछ काला है। यह सरल प्रश्न सुनकर ये सब सहम क्यों गए है। सो कहने लगे कि मन्दिर और धर्मशाला तो हर गाँव के सेठ और सम्पन्न लोग अपनी नेकनामी के लिए अवश्य बनवाते हैं। इस प्रकार यहां के सेठ साहूकारों ने भी इस शुभ कार्य में अपना पांव पीछे नही रखा होगा। इस पर एक बुद्विमान ने उन्हें उत्तर दिया कि यहाँ के नगर सेठ दुनियादार है और हर कदम सोच समझकर उठाते हैं सो उनके विचार में मन्दिर या धर्मशाला बनवाना फिजूल खर्ची है। इस कारण इस तरफ उन्होंने एक टका भी कभी दान के रूप में नहीं दिया है। इसी कारण हमारे गांव में न तो मन्दिर है और न ही कोई धर्मशाला, जहाँ मुसाफिर दो घड़ी

विश्राम कर सके। आप हमारे गांव में आये हैं ये हमारे बड़े भाग्य हैं। आप चलकर हमारे घर भोजन करें और विश्राम करें, इसमें हमें बेहद खुशी होगी। सन्तों ने उनके प्रेम और श्रद्धा के लिये उन्हें धन्यवाद दिया, परन्तु उस नगर सेठ के दर्शन के लिए इच्छा जाहिर की। गाँव के दो बुजुर्ग उन्हें सेठ की हवेली पर ले गये। संत सेठ से मिले और गांव का हाल चाल पूछ कर उन्हें आशीर्वाद दिया। कुछ देर बातचीत करने के बाद सन्तों ने सेठ से चलने की अनुमति मांगी। सेठ ने मन में समझा था कि संत हवेली पर आये है सो जरूर दान दक्षिण मांगेंगे या चन्दा आदि लेंगे, परन्तु संतों ने तो कुछ मांगने के स्थान पर खूब आशीर्वाद दिया और चलते समय पूछा कि हमारे योग्य कोई सेवा हो तो बताओ। संतों के इस विचित्र व्यवहार पर उसे बहुत आश्चर्य हुआ और दित में बहुत बैचेनी हुई। उन से रहा नहीं गया, सो संतों से पूछने लगे कि आपने न तो कुछ मांगा और न ही किसी सेवा करने का अवसर दिया। आपने यहां पधारने का प्रयोजन भी नहीं बताया। अब कृपा कर हमें अपनी सेवा करने का अवसर प्रदान करे। यह सुनकर सन्तों ने अपनी झोली में हाथ डाला और एक सुई निकली। सुई सेठ की और बढ़ाकर कहने लगे कि यदि आप सेवा करने का आग्रह करते है तो कृपया यह सुई अमानत के तोर पर अपने पास रखो, हम आप से यह परलोक में लेंगे। सन्तों की यह बात सुनकर सेठ हँसने लगा और कहने लगा कि स्वामी जी! आप मेरे से मज़ाक करते हैं, भला परलोक में इस लोक की सुई कैसे ले चलेंगे। यह सब कुछ यहीं रह जायेगा। खाली हाथ आये हैं और खाली हाथ जायेंगे। फिर मैं आपकी यह सुई परलोक में कैसे ले जाऊं गा। इस पर सन्तों ने कहा भाई! तुम बिल्कुल सच्च कहते हो। जब तुम एक सुई भी इस लोक से नही उठा सकते, फिर तुमने जो इतनी तिजोरिया सोने, चांदी से भरी है उनका क्या होगा? क्या तुम उनको अपने साथ ले जाओंगे? जब सब कुछ यही छोड़ना है फिर क्यों न उसे शुभ कार्य में लगाया जाये! यह धन परमात्मा ने हमें उनके ही नाम पर शुभ कार्य करने के लिया दिया है। दान पुण्य करने से इस जन्म में यश मिलेगा और परलोक सुधरेगा। इसलिये इस धन की भलाई के कामों और दीन दु:खियों की सेवा के काम में लेना चाहिये। इस गाँव में पूजा अर्चना के लिये मन्दिर ही नहीं है, गर्जमंद मुसाफिरों के लिए धर्मशाला भी नहीं है। ये सब समाज सेवा के कार्य है। इन कार्यों पर

धन खर्च करने से धन का सदुपयोग होगा और आप को यश मिलेगा। सेठ को संतों की बात समझ में आ गई और संकल्प किया कि आज ही धर्मशाला और मन्दिर के निर्माण का कार्य सन्तों के पवित्र हाथों से आरम्भ करेंगे। सेठ की मनोवृत्ति में परिवर्तन देखकर गाँव वाले खुशी में फूले नही समाये। संतों के आशीर्वाद से उस गाँव में मन्दिर भी बना तो धर्मशाल भी बनी। सेठ अब खूब दान पुण्य करने लगा। उसके दरवाजे से कोई भी सवाली खाली नही जाता था। इस प्रकार संतों के ज्ञान प्राप्त कर सेठ ने इस लोक में यश कमाया ओर परलोक भी सुधारा।

सत्संग के पश्चात आरती कर पल्लव डाला और सब प्रेमियों को प्रसाद दिया। प्रसाद लेकर सभी प्रेमी माथा टेक कर घर को रवाना हो गये। परन्तु माता गोपी बाई स्वामी जी के चरणों में बैठी रही। स्वामी जी ने पूछा गोपी बाई! सब कुशल है न? क्या तुम्हें कुछ पूछना है? इस पर गोपी बाई ने हाथ जोड़कर स्वामी जी से विनती की कि आज आप कुछ गम्भीर हैं, लगता है कोई समस्या है। कोई भी तकलीफ हो तो मुझे आज्ञा कीजिए मैं यथा शक्ति आपकी सेवा करूंगी। इस पर स्वामी जी ने उससे अपने मन की बात कही। उससे कहा कि बड़ी रहमत कर सत्गुरू महाराज ने यहां रहने की विनती स्वीकार की है, परन्तु उनके रहने के लिए अलग कुटिया बनवाने की आवश्यकता है, परन्तु आशंका है की कहीं यह सुअवसर हाथ से निकल न जाये। माता गोपी स्वामी जी के मन के मूक भाव समझ गई। सो बिना विलम्ब अपने नाक से हीरा उतार कर स्वामी जी के चरणों में रख दिया। स्वामी जी यह देखकर चौक गये। क्योंकि हीरा तो सुहाग का चिन्ह है। सो कहा कि माता! तुमने यह क्यों किया! तुम सुहागिन हो, नाक का हीरा उतार कर हमें कैसे दे रही हो। इस पर गोपी बाई कहने लगी कि मेरे सुहाग के रक्षक तो आप है आपके आशीर्वाद से मेरा सुहाग सलामत रहेगा। हीरा मेरे सुहाग की क्या रक्षा करेगा। यह हीरा आपके चरणों में अर्पण कर मैं आप से सुहाग की भीख मांगती हूँ । मेरा मालिक आज से बारह वर्ष पहले विलायत कमाने गया था पर आज तक उसका कोई भी पता

नही है। आप रहमत की नजर कीजिये कि मेरा सुहाग सलामत हो और शीघ्र आकर मुझ विनीत से मिले।

हीरा लेकर स्वामी जी गद्‌गद् हो गये, उनकी समस्त चिताएं दूर हो गई। अब हीरा लेकर सत्गुरू महाराज जी के लिये कुटिया बनवाने का विचार कर माता गोपी सहित सत्गुरू महाराज जी की सेवा में हाजिर हुए माता गोपी की अगाध श्रद्धा एवं महान त्याग की पूरी बात उनको बताई। सत्गुरू महाराज जी ने माता गोपी की अपने गुरू के लिये सुहाग की निशानी नाक के हीरे की कुर्बानी देख कर उसे खूब आशीर्वाद दिया औकर कहा कि जल्दी तुम्हारा बिछुड़ा हुआ पति तुमसे आकर मिलेगा। और स्वामी जी को कहा कि माधव तुम्हारी शिष्यांए सदा सुहागिन रहेगी, हम माता गोपी के सम्पूर्ण दान पर बहुत प्रसन्न हैं। यह दान अलोकिक और अनोखा है। इस 'सम्पूर्ण दान' का बड़ा महत्व है। इस पर माता गोपी ने उनसे सम्पूर्ण दान का अर्थ पूछा। सत्गुरू महाराज जी ने 'सम्पूर्ण दान' समझाने के लिये उसे एक दृष्टांत बताया जो इस प्रकार है।

दृष्टान्तः- भगवान बुद्ध ने घोषणा की कि धर्म प्रचार के लिये वे एक दिन दान स्वीकार करेंगे।

भगवान बुद्ध जिसने राज पाठ, ताज व तख्त, कुटुम्ब परिवार, धन व यश का त्याग किया था, जिसने संसार की विषय वासनाओं पर विजय प्राप्त की थी, वह निर्लिप्त सन्यासी एक दिन दान स्वीकार करेंगे यह समाचार वायु के समान चारों ओर फैल गया। अमीर गरीब दानी दाता अपने सामर्थ्य अनुसार श्रद्धा से दान सामग्री जुटाने लगे। जो कभी दान नहीं लेते वह एक दिन दान ग्रहण करेंगे। दान दाताओं के लिये यह स्वर्ण अवसर था। पता नही फिर ऐसा अवसर मिले या नही मिले।

आखिर वह निर्धारित दिन आ गया। नगर के बाहर एक वृक्ष के नीचे भगवान बुद्ध शान्त भाव से बैठे थे। उनके पीछे भिक्षु एवं उनके शिष्य खड़े थे। दान दाताओं की अपार भीड़

लगी हुई थी। टोलियों की टोलियां आ रही थी। अपनी भेंट भगवान के चरणों में समर्पित कर अपने आप को भाग्यशाली समझ रहे थे। उसके बाद भगवान के अमृत वचन सुनने के लिये सब अपने अपने स्थान पर जाकर बैठने लगे। जनता की भीड़ उमड़ रही थी। सभी वर्गों के लोग अपने सामर्थ्य अनुसार इस यज्ञ में अपनी अपनी आहुति दे रही थे। इस मेले में सभी तरह के छोटे बड़े स्त्री पुरूष, धनी, निर्धन आ रहे थे।

मग्ध के राजा बिबसार ने भूमि, महल, हाथी घोड़े आदि भेंट किये। सेठ साहूकारों ने हीरे जवाहर, सोना, चांदी आदि भगवान के चरणों में अर्पण किये। भगवान का दान स्वीकार करने का तरीका भी अनूठा था। भगवान अपना दाहिना हाथ फैलाकर दान स्वीकार करते और बिना देखे अपने शिष्य को देते जाते।

अचानक एक वृद्धा वहां आ गई और कहने लगी कि भगवान मैं एक निर्धन वृद्धा हूँ । मेरे पास आप को देने के लिए कुछ भी नहीं है। आज मुझे केवल एक ही आम भिक्षा में मिला। मैने सुना कि भगवान तथागत आज दान ग्रहण करेंगे। परन्तु उस समय मैं आधा आम खा चुकी थी। परन्तु भगवान! यह मेरी कुल पंूजी है जिसे मैं आप के चरणों में अर्पण करना चाहती हूँ ।

उपस्थित जनता राजाओं व सेठ साहूकार दान दाताओं ने देखा कि भगवान एकदम अपने आसन्न से उठकर नीचे आये और दोनों हाथ फैलाकर उस वृद्धा की भेंट स्वीकार की।

लाखों करोड़ों का दान देने वाले और अपने दान पर अभिमान करने वाले सेठ साहूकार भगवान द्वारा इस निर्धन बुढ़िया को अपार सम्मान मिलता देखकर आश्चर्य चकित हो गये।

आखिर राजा बिंबसार से रहा नहीं गया। उसने भगवान से पूछा भगवान! अमूल्य से अमूल्य भेंट आप ने एक हाथ फैला कर बिना देखे स्वीकार की, परन्तु इस वृद्धा का खसीस

आधा आम स्वीकार करने के लिये आप अपना आसन्न छोड़कर नीचे उतर आये। आखिर उसमें क्या राज है?

भगवान बुद्ध मुस्करा कर कहने लगे कि इस वृद्धा ने अपनी सम्पूर्ण पूंजी मुझे दान कर दी है। इस बेचारी के पास केवल यही आम था और यही आम उस की कुल पूंजी_थी जिसे उसने मुझे दे दिया। उसने अपने लिये कुछ भी नहीं बचाया। आपने अपने अपार धन का केवल एक छोटा सा भाग मुझे दान के तौर पर दिया है और उसके लिये आप को दान करने का बड़ा अहंकार भी है कि हम महादानी है और आपने बड़ा दान किया है, परन्तु इस वृद्धा ने अपना सर्वस्व हमें अर्पण कर दिया, तब भी उसके चेहरे पर कितनी करूणा और नम्रता झलक रही है।

सत्गुरू महाराज जी का यह दृष्टान्त सुन कर माता गोपी की विनम्रता से गर्दन झुक गई। उसके आंखों में खुशी के अश्रु तैरने लगे और सत्गुरू महाराज जी को निवेदन कर कहा कि आपने बड़ी कृपा कर मेरी इस तुच्छ भेंट को स्वीकार कर मेरे ऊपर बड़ा उपकार किया है। यह मेरा यह जन्म सफल हो गया। सत्गुरू महाराज जी ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा कि तेरी यह कुर्बानी अनूठी है। हम इस भेंट को सबसे अमूल्य एवं बे मिसाल समझते हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि तुम सदा सुहागिन रहो और तेरे पति देव शीघ्राशीघ्र आकर तुम से मिले।

माता गोपी हीरा दान कर अपने आपको धन्य समझ रही थी। सोचने लगी कि आज मेरा जन्म सफल हो गया जो इस द्वार पर मेरा कण स्वीकार हो गया। सत्गुरू महाराज की कृपा से इस हीरे के बदले मुझे अवश्य सच्चा हीरा मिलेगा। हुआ भी ऐसा। जैसा माता गोपी दरबार से घर पहुँची उसे यह शुभ समाचार मिला कि उसका बिछड़ा हुआ पति बारह वर्ष के पश्चात घर आ रहा है। यह बात सुनकर वह बिल्कुल झूमने लगी और सब को कहने लगी कि यह सब सत्गुरू महाराज जी के कृपा से हुआ है। जब उसका पति आया तो वह उसे सीधा सत्गुरू महाराज के पास माथा टेकने के लिये दरबार पर ले आयी। सत्गुरू महारा जी को वारो

वार दण्डवत प्रणाम कर कहने लगी कि यह सब आपकी असीम कृपा से हुआ है। आपकी दुआ से आज बिछड़े हुए आकर मिले हैं। बारह वर्ष से आंसू बहाते बहाते नयनों का नीर ही सूख गया था। आपको दया मया से क्षण में सब दुख दूर हो गये। सत्गुरू की महिला अपरम्पार है। उनका गुणगान करने से बाहर है। बार बार कहने लगी:-

सात समुन्द्र स्याही करूं,

कमल करूं बनराय,

सारी बसुधा कागज करूं,

तो भी गुरू गुन लिखिया न जाये।

सत्गुरू महाराज जी और स्वामी जी ने जोड़े को खूब आशीर्वाद देकर पखर पहना और प्रसाद दे कर रवाना किया। अब सत्गुरू महाराज जी स्वामी जी से कहने लगे कि माधव! अब खुशी से तुम हमारे लिये कुटिया बनवाओ तब तक हम टण्डो आदम वाली दरबार पर चलते हैं। जैसे ही कुटिया बनकर तैयार हो जाये तो तुम हमें लेने आ जाना।

सत्गुरू महाराज जी के पधारने के पश्चात दिन रात स्वयं खड़े होकर कुटिया बनवाई। अब उस शुभ घड़ी का इंतजार करने लगे जब सत्गुरू महाराज जी आकर उन्हें सेवा करने का शुभ अवसर देंगें। पुरूषोत्तम मास में कुटिया बन कर तैयार हो गई। स्वामी जी की खुशी का ठिकाना नहीं था। एकदम टण्डो आदम जाने की तैयारी करने लगे। जाने से पूर्व कुटिया में सत्गुरू महाराज जी के रहने के लिये हर वस्तु की व्यवस्था की ताकि उन्हें किसी प्रकार की असुविधा न हो। सब प्रकार की व्यवस्था हो जाने के बाद सत्गुरू महाराज जी को लिवाने के लिये टण्डे आदम वाली दरबार पर पहुँच गये। उन्हें हाथ जोड़कर विनती की कि आप की कृपा से अब कुटिया बनकर तैयार हो गई है। अब दिया हुआ वचन पालिये और दास की विनती स्वीकार कीजिये। सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी की विनती स्वीकार कीजिये। सत्गुरू

महाराज जी ने स्वामी जी की विनती स्वीकार की और कहने लगे कि हमने तुम से वादा किया है तो जरूर पूरा करेंगे। पुरूषोत्तम का महीना है और स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता है, सो हमारी स्वयं की इच्छा है कि अन्त में चल कर तेरे पास विश्राम करें।

सत्गुरू महाराज के पधारने का समाचार बिजली की तरह सारे हैदराबाद में फैल गया। सत्गुरू महाराज जी के दर्शन करने के लिये प्रेमियों का तांता लग गया। सभी प्रेमियों ने फूलों की वर्षा कर सत्गुरू महाराज का खूब स्वागत किया। उस समय अपने श्रद्धेय सत्गुरू महाराज के स्वागत में स्वामी जी ने यह भजन गाया।

भजन (राग पहाड़ी)

मिलिया सन्त सुजान भेनर भाग बदे सां,

आया अङ ण भगवान भेनर भाग बदे सां।

1. जन्म जन्म जा जागिया भाग,

   जागिया पुण्य प्रधान, भेनर भाग वदे सां।

2. प्रेम प्रीत ऐं हर भगतीअ जा,

   भरे दिनाऊं जाम, भेनर भाग वदे सां।

3. सफल थिए सभि शेवा पूजा,

   थियड़ा सभि कल्याण, भेनर भाग वदे सां।

4. मन मेली अजु माधव मिलिया,

   करे आया अहसान, भेनर भाग वदे सां।

(अर्थ :- स्वामी जी ने सत्गुरू महाराज जी के पधारने पर कहा है कि ये सन्त सुजान बड़े भाग्य से मिले हैं। ये हमारे बड़े भाग्य हैं कि ये भगवान हमारे आंगन में पधारे हैं। हमारे जन्म जन्म के भाग्य जागे हैं और हमारे किये हुए पुण्य फलीभूत हुए जो बड़ी कृपा कर सत्गुरू महाराज हमारे द्वार पर आये हैं। सत्गुरू महाराज जी ने बड़ी दया कर प्रेम प्रीत और हरि भक्ति के जाम भर भर कर दिये हैं। हमारी सेवा और पूजा सफल हो और सभी कल्याण हो। स्वामी जी कहते हैं आज हमारे मन के मीत मिले हैं और हम पर अहसान कर हमारे पास आये हैं ये हमारे बड़े भाग्य हैं।)

प्रेमियों को भजन सुनाकर स्वामी जी कहने लगे कि ये हमारे बड़े भाग्य हैं कि सत्गुरू महाराज जी जैसे औतारी पुरूष बड़ी महर कर हमारे बीच में हमारे कल्याण करने हेतु पधारे हैं। सत्गुरू महाराज जी पारस से भी ऊंचे हैं क्योंकि पारस तो लोहे को सोना ही बनाता है, परन्तु पूर्ण सन्त महात्मा खुद परमात्मा की भक्ति के रंग में रंगे हुए होते हैं और अपने प्रेमियों को भी उसी रंग में रंग कर परमात्मा से जुड़ कर भवसागर से पार कर लेते हैं। कबीर साहिब ने सन्तों की महिमा करते हुए कहा है :-

''पारस में और सन्त में बड़ो अन्तर जान,

वह लोहा कंचन करे, वह कर ले आप समान।''

सत्गुरू महाराज जी की जितनी महिमा करें उतनी थोड़ी है। उनकी महिमा वर्णन करने से परे है। ऐसे सच्चे सन्तों का संग भाग्य से ही बढ़ भागियों को ही नसीब होता है। संत तुलसीदास जी ने रामायण के सुन्दर काण्ड में ऐसे सच्चे सन्तों के सत्संग की महिमा गाते हुए कहा है कि यदि स्वर्ग और मोक्ष का सुख, तराजू के एक पलड़े में रखा जाये और पल भर के सत्संग का जो सुख है वह दूसरे पलड़े में रखा जाये तो सत्संग का पलड़ा उन सभी सुखों से भारी होगा।

''तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिअ तुला एक अंग।

तूल न ताहि सफल मिलि, जो सुख लव सत्संग॥''

सत्संग का महात्म खोल कर समझाने के लिये संगत को यह दृष्टान्त बताया।

दृष्टान्तः- एक दिन भौंरा, जैसे फूलों का वास लेने के लिये घूम रहा था उसकी नज़र अपने जैसे जीव पर पड़ी जो ज़मीन पर रैंग रहा था। सोचने लगा कि यह मेरे जैसा कौन सा जीव है जो इस प्रकार गंदगी में पड़ा है। सो शंका मिटाने के लिये उड़कर पास गया और पूछने लगा कि भाई! देखने में तुम मेरे जैसे हो फिर तुम इस प्रकार गन्दगी में क्यो पड़े हो। इस पर उस जीव ने उत्तर दिया कि भाई! मैं भोडं हूँ । मैने गोबर में जन्म लिया है और गोबर ही मेरा घर है जहां मैं सारी उम्र काटता हूँ । पर भाई! तुम बताओ कि तुम कौन हो और कहां रहते हो? इस पर भौरें ने उत्तर दिया भाई! मुझे भौरां कहते है। मैं सारा दिन फूलों में रहकर फूलों का वास लेकर आनन्द में रहता हूँ । भौरें और भोड की यह मुलाकात दोस्ती में बदल गई। अब भौरां घूमते फिरते रोज अपने दोस्त भोड़ से मिलने आता था और कुछ समय दुःख सुख की बातें कर दोनों खुश रहते थे।

एक दिन भोड़ ने भौरें से कहा कि भैया! तुमने मेरा यह गन्दा घर तो देख लिया है, अब एक दिन मुझे अपना सुन्दर घर तो दिखा दो। भौरें ने खुश होकर कहा कि यह तो खुशी की बात है, इस बहाने हम दोनों दोस्त दो घड़ियां तो साथ गुजारेंगे। चल अभी तेरे को अपने घर ले चलूं । भौरे ने भोड़े को अपनी पीठ का बिठाया और धीरे धीरे उड़ता हुआ आकर एक सुन्दर कमल के फूल पर बैठा। कमल की कोमलता और सुन्दरता देख कर बेचारा भोडं आश्चर्य चकित हो गया और कहने लगा कि भाई भौरे! तुम बड़े भाग्यशाली हो ऐसे स्वर्ग जैसे घर में रहते हो। काफी देर तक दोनों दोस्त बातें करते रहे। दोनों का बातों से जी ही नहीं भर रहा था भौरें ने भोंड से कहा आज रात यहीं रह जाओ सुबह जल्दी तुम्हें घर छोड़ आऊंगा। बातें करते-

करते दोनों को नींद आ गई। नियमानुसार भौरें की प्रभात को आंख खुल गई, परन्तु भोड़ को तो जिन्दगी में पहली बार इतना सुन्दर एवं मुलायम बिस्तर मिला था सो गहरी नींद में सोता रहा। भौरे ने सोचा भली बेचारा सोता रहे, तब तक मैं घूम फिर कर फूलों का वास लेकर आता हूँ । भौरा फूलों का वास लेते लेते अपने मित्र से बहुत दूर निकल गया। अब सुबह होने लगी और सूर्य देवता ने अपने सुनहरे किरणों से सारी पृथ्वी को जगमगा दिया। सूर्य के किरणों के छूते ही कमल की कोमल पंखुडिया धीरे धीरे बंद होने लगी और उस बंद कमल ने बेचारा भोंड सोता ही रहा गया। इतने में मन्दिर का पुजारी पूजा के लिये फूल तोड़ने वहाँ पहुँच गया। चारों ओर नजर दौड़ाते उसका ध्यान उस सुन्दर फूल की ओर आकृष्ट हो गया जिसमें भोंड बंद था। पुजारी ने एकदम हाथ बढ़ा कर वह फूल तोड़ दिया और आकर भगवान के चरणों में चढ़ाया। भोंड के भाग्य खुल गये। भगवान के चरणों में चढ़ने के कारण उसे मुक्ति मिली। स्वर्ग में देवता डोली लेकर उसको आत्मा को लेने आये। यह सब देख कर बेचारे भोंड आश्चर्य में पड़ गया कि यह सब क्या हो रहा है। मैंने अपनी सारी जिन्दगी गन्दगी में गुजारी और ऐसा कोई कर्म ही नहीं किया जिस से पुण्य मिले। फिर यह उच्च पद मुझ कर्महीन को कैसे मिला। मेरे जन्म जन्मान्तर के कर्म कैसे कटे। अचानक उसे ध्यान आया कि यह सारा पुण्य प्रताप भौरे के सुसंगति का है। भौरे की क्षण पल की संगति के कारण परमात्मा के चरणों में चढ़कर मुझ जैसे अधर्मी जीव के सब कर्म कट गये और सद्गति प्राप्त हुई है। धन्य है वह फूलों का वासी भौंरा और धन्य है उसकी संगति।

दृष्टांत समाप्त कर स्वामी जी अपने प्रेमियों से कहने लगे कि दृष्टान्त का यह नियम है कि जैसा जिस का संग होता है वैसा उस पर रंग चढ़ता है। अच्छी संगति से अच्छे संस्कार पड़ते हैं और खराब संगति से दुर्गुण उत्पन्न होते हैं। सत्संग में आकर सन्त महात्माओं की संगति से हमारे अन्दर अच्छे संस्कार पड़ते हैं और हमारी आत्मा निर्मल होती है। धीरे-धीरे हमारा मन परमात्मा के चरणों में लगता है और हमें आनन्द प्राप्त होता है।

सत्संग द्वारा हमारे दिल में भक्ति पैदा होगी, भक्ति द्वारा परमात्मा की प्राप्ति होगी और परमात्मा की प्राप्ति से ही सच्चे आनन्द की प्राप्ति होगी। इसी कारण हम परमात्मा स्वरूप सत्गुरू महाराज जी की शरण में आये हैं। सच्चे सन्त परमात्मा के साकार स्वरूप है। इन्हीं की कृपा से ही परमात्मा का साक्षात्कार संभव है। मन के विकारों को दूर कर परमात्मा को पाने के लिये सत्संग से बढ़कर दूसरा कोई साधन ही नहीं है।

गली-गली का गन्दा पानी बहकर जब आकर पवित्र गंगा में मिलता है तब वह गंदा पानी निर्मल होकर गंगा जल कहलाता है। यह सब सुसंगति का प्रभाव है। स्वाति नक्षत्र की जो बून्द सांप के मुख में गिरती है तब उसे से विष उत्पन्न होता है और वही स्वाति नक्षत्र की जो बूँद जब सीप के मुख में पड़ती है तब उससे बहुमूल्य मोती उत्पन्न होता है। बूँद तो वही थी केवल संगति का अन्तर था। सीप की संगति में वह बूँद अमूल्य मोती बन गई और सांप की संगति से वही बूँद विष बन गई। सत्गुरू महाराज तो चंदन के वृक्ष के समान है जिनके निकट आकर हमारे अन्दर भी उन्ही के समान वही खुशबू पैदा हो जायेगी।

जिस दिन सच्चे सन्तों भगवान के प्यारों सत्गुरू महाराज जी से मिलाप होता है, वह दिन बड़ा सौभाग्यपूर्ण होता है। जहां सच्चे सन्त भगवान के प्यारे अपने चरण रखते हैं वह स्थान पवित्र हो जाता है। सन्त जन इस संसार में दया कर परोपकार हेतु आते हैं। जो भाग्यशाली हैं वे इनकी शरण में आते हैं और दीक्षा लेकर इस भव सागर से पार हो जाते हैं। जिज्ञासू शिष्यों को अपने सत्गुरू महाराज जी के दर्शन से जो अलोकिक आनन्द प्राप्त होता है, उस का बयान किया नहीं जा सकता है।

आज का दिन धन्य है इस पर हम बलिहारी है जो परमात्मा स्वरूप सत्गुरू महाराज जी बड़ी कृपा कर हमारे पास पधारे हैं। हम अपने सत्गुरू महाराज जी के चरणों में शीष झुकाकर वारों वार वन्दना कर अपना तन, मन व धन उन्हें अर्पण करते है। सत्गुरू महाराज

स्वयं मुकत है और हमें भी मुक्ति दान देंगे। इनकी दया दृष्टि से हमारे जन्म जन्मान्तर के बन्धन कट जायेंगे।

सत्गुरू महाराज स्वामी जी की श्रद्धा भक्ति व प्रेम देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्हें आशीर्वाद देकर संगत से कहा कि हम साध माधव के बच्चे स्नेह व श्रद्धा के कारण खिंच कर यहां आये है। प्रेम की महिमा कही नहीं जा सकती। प्रेम की निम्नलिखित चौपाई संगत को सुनाई।

प्रेम की महिमा कहीं न जावे,

प्रेम न कोई हाट बिकावे

आगे मर पीछे फिर जीवे,

प्रेम का प्याला भर भर पीवे।

अब स्वामी जी सत्गुरू महाराज जी की सेवा में तन मन से जुट गये। सुबह को प्रति दिन उन्हें हवा ऽखोरी के लिये फुलेली पर ले जाते थे। अपने हाथों से उनकी मालिश करते थे। उनके खान पान का विशेष ध्यान रखते थे। संगत के लिये भोजन व प्रसाद भंडारी बनाता था। किन्तु महाराज जी की रूचि एवं परहेज वाला भोजन स्वामी जी बड़े प्रेम से अपने ही हाथों से तैयार करते थे। सत्गुरू महाराज जी को तुरई बहुत पसन्द थी सो तुरई की पूरी टोकरी लेकर उनके लिये रखते थे। भोजन के पश्चात उनके रूचि के फल अपने हाथ से काट कर उन्हें खिलाते थे। नियम से डॉक्टर को बुलाकर उनकी जांच करवा कर उनके द्वारा बताई गई दवाईयाँ मंगवाकर उन्हें नियम से देते थे। इस प्रकार आठों पहर सत्गुरू महाराज जी की सेवा में लगे रहते थे। सत्गुरू महाराज जी उन्हें बार बार कहते थे कि बेटा! सारा दिन हमारे लिये दौड़ धूप करते रहते हो, कुछ अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान रखो। तब स्वामी जी मुस्करा कर कहते थे कि भाग्य से आपने दया कर मुझे सेवा करने का अवसर दिया है। मुझे आपकी सेवा

करने से जो अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है, वह कहा नहीं जा सकता। आप मेरे भगवान है। आपकी सेवा कर मेरा यह जन्म सफल हो जायेगा।

स्वामी जी की इतनी देखभाल व सेवा के कारण सत्गुरू महाराज जी बहुत प्रसन्न रहते थे। परन्तु उनको यह चिन्ता होती थी कि साध का उनके ऊपर बहुत पैसा खर्च हो रहा है। यह आश्रम नया है उस पर इतना भार डालना उचित नहीं है। उन दिनों कराची से उनके प्रेमी आये हुये थे, सो उन्होंने सत्गुरू महाराज जी से विनती की कि चल कर कराची में इलाज करवाये। वहां पर हवा पानी भी बदलेगा और किसी अच्छे डाक्टर को दिखवा भी देंगे। सत्गुरू महाराज जी तो स्वामी जी पर पड़े भार के कारण चिन्तित थे ही सो प्रेमियों को कहा कि भली कराची चलने की तैयारी करो। सत्गुरू महाराज जी सामान ठीक करने लगे और प्रेमियों को तांगा लेने के लिये भेज दिया। जब स्वामी जी ने द्वारा पर तांगा देखा और सत्गुरू महाराज जी को तांगे की तरफ जाते देखा तब दीन मन होकर उनके चरण पकड़ कर उन्हें विनती की ‘‘सत्गुरू महाराज जी! शायद मेरी सेवा में कोई कसर रह गई है जो अब इस प्रकार आप मेरे से नाराज होकर जा रहे है।‘‘ इस पर सत्गुरू महाराज जी ने स्वामी जी से कहा कि बेटा! हम तुम्हारी सेवा से बेहद खुश है, हमारी सेवा में तो तुमने अपने आप को ही भुला दिया है। परन्तु हमारे रहने से एक तो बीमारी की दवाईयों पर खर्चा हो रहा है, दूसरा हमारे कारण आश्रम पर प्रेमियों का मेला लगा रहता है। हम तुम्हारे ऊपर इतना भार डालना उचित नही समझते है। इस कारण हमें सहर्ष जाने दो।

सत्गुरू महाराज के ये शब्द सुनकर स्वामी जी के आँखों में आँसू भर आये। भाव विभोर होकर उनके चरण पकड़ कर कहने लगे कि आपकी सेवा करना तो मेरा कर्त्तव्य है। इससे बढ़कर मेरे लिये और कौन सा पुण्य है। आप की कृपा से यहां कोई कमी नहीं है। आपकी सेवा करते हुए मेरा सब कुछ बिक जाये और सत्यवादी हरिश चन्द्र के समान मुझे अपने आपको गिरवी रखना पड़े तो भी मैं पीछे नही हटूंगा। स्वामी जी की इतनी श्रद्धा और

भक्ति देखकर सत्गुरू महाराज जी ने उन्हें उठाकर अपने सीने से लगाकर कहा कि साध माधव! तुमने जीता और हम हारे। अब तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जायेंगे।

उस दिन सायंकाल महाराज जी ने स्वयं सत्संग किया। उस दिन प्रेमियों को बताया कि सेवा से हम संत महात्माओं और बड़ों का मन जीत सकते है। सेवा करने से हमारा मन निर्मल होता है। विनम्रता और सेवाभाव से हम बड़ों का आशीर्वाद पाकर लाल हो सकते हैं। कहने लगे कि साध माधव की श्रद्धा, सेवा और विनम्रता ने हमारा मन जीत लिया है। हमारे रोम रोम से इनके लिये दुआ निकलती है। इनके प्रेम वश होकर हमने यहां रहने का निश्चय किया है। उस समय सत्गुरू महाराज जी ने प्रेमियों को भाई लहणे की सेवा का उदाहरण बताया जिस ने सेवा कर गुरू कृपा प्राप्त की।

दृष्टांत:- गुरू नानक साहिब जब कर्तारपुरा आकर रहने लगे तब दूर दूर की संगत उनके दर्शन के लिये आने लगी। भाई लहणा जाति का खत्री और देवी का उपासक था। वह अपने साथियों के साथ देवी के दर्शन के लिये निकला, परन्तु गुरू नानक साहिब की तारीफ सुनकर मार्ग में उनके दर्शन के लिये आया। उसे गुरू नानक साहिब की संगति से आनन्द आया। वह तीर्थ यात्रा का विचार त्याग कर उनकी सेवा के लिये उनके पास रह गया। गुरू नानक साहिब उनकी सेवा पर बहुत प्रसन्न हुए।

भाई लहणा अपने सत्गुरू से कभी दूर नहीं होते थे। वह सारा समय सेवा में या ध्यान में रहते थे। कैसा भी कठिन कार्य होता तो वे बिना किसी बहाने झट पूरा कर देते थे। उनको अपने शरीर के सुख की कोई भी परवाह नहीं रहती थी। सत्गुरू की सेवा करने में उन्हें न तो अपने खानदान का अभिमान रहता था न ही किसी प्रकार की लोक निन्दा का डर रहता था। इसलिये गुरू महाराज उन्हें बहुत प्यार करते थे और अपने पुत्रों से भी बढ़कर समझते थे।

भाई लहणे की कमाई बेअन्त थी। सत्गुरू के प्यारे में ऐसे तो रंग गये जो उठते उठते आठों पहर उसे एक ही स्वरूप, श्री गुरू नानक देव जी का नज़र आता था।

गुरू नानक साहब का भाई लहणे के साथ इतना प्यार देख कर माता सुलक्ष्मी के मन में यह आशंका उत्पन्न हुई कि गुरू नानक साहब गुरू गद्दी शायद भाई लहणे को देवे सो एक दिन अपने दोनों पुत्रों को अपने साथ लाकर गुरू नानक साहब से कहा ''स्वामी! आप दूसरों से प्यार करते हैं परन्तु अपने पुत्रों को तो पूछते भी नहीं है।'' गुरू नानक साहब ने कहा, ''हमें किसी से भी बैर विरोध नही है। जो सेवा करेगा सोई फल पायेगा। देखों मैं तुम्हे परीक्षा लेकर दिखाता हूँ ।''

गुरू नानक साहब के हाथों में जो कटोरा था वह उनके हाथों से खिसक कर नाली में जा गिरा। गुरू नानक साहब ने अपने पुत्र श्रीचन्द से कटोरा निकाल कर आने के लिये कहा परन्तु उसने कहा ''मुझे अपने नये कपड़े खराब करने है क्या? इस पर गुरू नानक साहब ने अपने दूसरे पुत्र लखमीचन्द से कहा, जिसने टालकर कहा, ''बाबा! किसी सिख से कह कर निकलवा लो।''

गुरू नानक साहब ने अब भाई लहणे को कहा ''तुम कटोरा निकाल कर लाओ।'' भाई लहणा एक दम नाली में चला गया और कटोरा निकाल कर लाया। गुरू नानक साहब बहुत खुश हुए और भाई लहणे की छाते से लगाकर कहने लगे कि भाई लहणा! हम समझते है कि तुम्हें हमसे कुछ लेना है। तुम हमारे अंग अंग में समाये हुए हो इसलिये आज से हम तुम्हारा नाम अंगद रखते हैं। इस प्रकार गुरू नानक साहब ने भाई लहणे से कई अन्य परीक्षाएं भी ली जिन सब में वह खरा साबित हुआ।

थोड़ा समय गुज़रने पर गुरू नानक साहब ने एक बड़ी संगत एकत्रित करवाई और भाई अंगद को अपने पास गद्दी पर बिठाया। गुरू नानक साहब जी ने सारी संगत को फरमाया, ''हमारे बाद श्री अंगद साहब को हमारा स्वरूप समझना और इनकी आज्ञा में रहना।''

भाई लहणे का दृष्टान्त बताकर महाराज जी ने संगत को कहा कि साध माधव बिल्कुल भाई लहणे की तरह हमारी स्नेह और श्रद्धा से सेवा कर हमारे मन में समा गया है। इस आशीर्वाद देते है कि इनके और इनके प्रमियों के भण्डारे सदा भरे रहेंगे और कभी भी कोई कमी नहीं आयेगी। ये भण्डारे सदा चलेंगे और मेले भरते रहेंगे। इस दर से कोई भी खाली नहीं जायेगा। सबकी झोलियां भरी रहेंगी और मुरादें पूरी होती रहेंगी।

एक दिन नियमानुसार जैसे सत्गुरू महाराज जी स्वामी जी के साथ फुलेली वाले पार्क में घूमने गये तो वहां स्वामी जी से कहने लगे, "भाई माधव! संत कंवरराम जी बड़े अच्छे समय पर गये, यह समय यहाँ रहने का नहीं है। इस पर स्वामी जी ने उन्हें हाथ जोड़कर विनती की कि सत्गुरू महाराज जी ऐसा मत कहिये, आज हमें और प्रेमियों को आप का ही सहारा है, परन्तु स्वामी जी अब समझ गये कि सत्गुरू महाराज जी के ये इशारे रहस्यमय है।

उस दिन लौटने पर सत्संग में स्वामी जी ने सत्गुरू महाराज जी के उस रहस्यमय संकेत को ध्यान में रखकर प्रेमियों को कहा कि बड़े भाग्य से सत्गुरू महाराज जी कृपा कर हमारे मध्य आये है। हमें इस सुअवसर का पूरा पूरा लाभ उठाना चाहिये। यह समय फिर लौट कर नहीं आयेगा। सत्गुरू महाराज जी की अमृत वर्षा का पूरा पूरा लाभ उठाओं, नही तो पछताना पड़ेगा। उस समय स्वामी जी ने उचित समय पर सन्तों की कृपा दृष्टि का लाभ उठाने का एक सुन्दर दृष्टान्त बताया।

दृष्टान्त:- एक राजा था। संसार के सब कुछ भोगने के पश्चात उस के दिल में वैराग्य जागा। उसने सोचा परमात्मा की राह में शेष जीवन सफल करना चाहिये। परन्तु उसे विचार आया कि इस राह पर चलने के लिये किसी पहुँचे हुए मार्ग दर्शक की आवश्यकता है। उस सच्चे गुरू से ज्ञान पा कर ही मंजिल पर पहुँच सकते है। उस समय संत रविदास का नाम पहँुचे हुए संतों में गिना जाता था। सो एक दिन अवसर पाकर राजा अकेले ही सन्त रविदास की कुटिया में गुरू ज्ञान लेने के लिये पहुंच गये। राजा ने सन्त जी को प्रणाम कर विनती की

कि महाराज जी! कृपा कर मुझे ज्ञान दीजिये। सन्त रविदास मोची का काम करते थे। सो उस समय जूते भिगोने वाली कठोती में से डिब्बे से पानी निकाल रहे थे। सो मस्ती में राजा को बुलाकर कहा कि यह लो अमृत और पी जाओ। इतना कह कर वह डिब्बे वाली पानी राजा को अंचली में दे दिया। राजा बड़े पेश में पड़ गया। सोचने लगा कि यह गन्दा पानी कैसे पीया जायेगा। परन्तु सन्त जी को मना करने से नाराज़ हो जायेंगे। सो अंचली मुँह तक लाकर वह पानी कुर्ते और चौड़ी बाहों में बहा दिया। महल में लौटकर अपने धोबी को बुलाकर कुर्ते के दागों को हटाने के लिये कहा। धोबी कुर्ता घर ले आया और अपनी बेटी को ताकीद कर कहा कि ये दाग मुँह से धीरे धीरे चूसकर हटाओं। लड़की छोटी थी सो कुर्ते को चूसते समय रस बाहर फैकने के बजाय उसे पीती गयी। जैसे जैसे रस पीती गयी वैसे वैसे उसकी अन्दर की आँखे खुलती गयी। अब यह लड़की रिद्धि सिद्धि वाली हो गयी। गहरे ज्ञान की बातें करने लगी। सारे शहर में धीरे धीरे यह बात फैल गये की धोबी की लड़की बड़ी महात्मा है। राजा को इस बात का पता लग गया। तब एक दिन रात्रि के समय छिप कर उस लड़की के पास आया। राजा को देखकर धोबी की लड़की एक दम खड़ी हो गयी और राजा को अदब से प्रणाम किया। इस पर राजा ने उसे कहा कि तुम मुझे राजा समझ कर क्यों प्रणाम करती हो? मैं आज राजा के रूप में नही परन्तु याचक के रूप में कुछ लेने आया हूँ । इस पर धोबी की बेटी ने उत्तर दिया कि हे राजन! मैं जो तुम्हारा यह आदर कर रही हूँ वह तुम्हारे राजा होने के कारण नहीं है। परन्तु आज जो कुछ मान मुझे मिला है वह सब आपकी कृपा के कारण मिला है, इसी कारण आपके सामने अदब से हाथ जोड़ कर खड़ी हूं । लड़की ने राजा को बताया कि वह उनके कुर्ते के दागों को जैसे-जैसे चूसती गई, वैसे-वैसे उसके अन्दर के पट खुलते गये। राजा अब सारी बात समझ गया कि यह सारी करामत सन्त रविदास के दिये हुए अमृत की थी, जिसे खुद ने चमड़े का पानी समझ कर ढोल दिया था। अब राजा खुद को धिक्कारने लगा। उसे बहुत पश्चाताप होने लगा कि मैंने ऐसा सुनहरी अवसर सन्तों की कृपा को न समझने के कारण हाथों से गंवा दिया।

राजा अब लोक लाज की परवाह न कर सीधा सन्त रविदास के पास गया और उन्हें हाथ जोड़कर विनती की कि महाराज जी कृपा कर वही चरणामृत दीजिये जो आपने मुझे उस दिन दिया था। इस पर संत रविदास ने उत्तर दिया कि भाई! ये तो सब समय की बलिहारी है। तुमने अपने हाथों से अवसर गंवा दिया। पहली बार जब आप मेरे पास आये थे तो मैंने आपको राजा समझकर ऐसी चीज देनी चाही जो आपके पास स्थाई तौर पर रहे, सो हमने आपको अमृत पीने के लिये दिया। वह अमृत सच्च खण्ड में परमात्मा से आया हुआ था। उस समय हमारी तार सच्चे मालिक से जुड़ी हुई थी। हमने सोचा, हम तो रोज़ पीते हैं, आज आप को भी पिला दें। परन्तु आप ने उसे चमड़े का पानी जानकर नफरत से कुर्ते की बाहों में गिरा दिया। उसी अमृत के दागों को चूस कर धोबी की बेटी महात्मा बन गई।

अब वह घड़ी तो निकल गई। आप नाम की कमाई कर मंजिल पर पहुंच सकते हैं।

स्वामी जी ने यह दृष्टांत बता कर प्रेमियों से कहा कि सत्गुरू महाराज जी बड़े भाग्य से आज हमारे मध्य हैं। उनके कृपा रूपी चरणामृत पाकर हम अपना जीवन सफल बना सकते हैं। सत्गुरू महाराज जी रिद्ध सिद्धि के मालिक हैं। स्वयं मंजिल पर पहुंचे हुए हैं और हमें भी अपनी दया माया से मंज़िल पर पहुंचा सकते हैं। बस केवल हमारे अन्दर विश्वास की आवश्यकता है। हम इनके द्वार पर झोली फैला कर स्नेह और श्रद्धा से बैठे रहें, कहीं दया कर हम पर रहम की नज़र डालें। यदि यह अवसर गया तो फिर हाथ नहीं आयेगा। फिर अवसर निकल जाने के बाद राजा की तरह पश्चाताप करते रहेंगे।

स्वामी जी ने सत्गुरू महाराज जी को विनती की कि सारी संगत को आशीर्वाद देवें और सब को अपने पवित्र कर कमलों द्वारा प्रसाद भी दें। प्रसाद देने के पश्चात सत्गुरू महाराज जी ने प्रेमियों को कहा कि सदा सादगी से रहना चाहिये। सत्गुरू महाराज जी स्वयं भी बड़ी सादगी से रहते थे। वे सदा खादी के वस्त्र पहनते थे, सोने के गहनों को हाथ भी नहीं लगाते थे। वे प्रेम प्रकाशी सन्तों को भी सोने के गहनों व रेशमी वस्त्र से दूर रहने का उपदेश

देते थे। सत्गुरू महाराजी ने संगत को कहा कि जो इन वचनों पर अमल करेगा वह सदा सुखी रहेगा।

एक दिन माता ज्ञानी बाई जो एक ज्ञानवान और हरि भक्तिन थी, उनके घर सत्संग का आयोजन था। प्रेमी सत्गुरू महाराज जी को लेने के लिए आये। सभी साध मोटर में चढ़ कर बैठ गये। सत्गुरू महाराज जी ने सन्त ऊधवदास जी को आवाज दी इस पर स्वामी जी ने कहा कि भगवान! सन्त ऊधवदास जी स्नान करने गये हैं। सत्गुरू महाराज जी ने कहा कि चलो अपन सब चलें। सभी एक दूसरे को छोडेंगे, कोई भी सच्चा संगी नहीं है। इतना कह कर सत्गुरू महाराज जी माता ज्ञानी बाई के घर पहुंच गये। थोड़ी देर में सन्त ऊधवदास भी आकर संगत में शरीक हो गये। सत्गुरू महाराज जी ने सत्संग के अन्त में यह भजन कहा।

भजन (राग मारू)

दूर तुम्हारा देश अब तो करो तैयारी।

१. दिन भया अब खुलया दुकाना,

सभ कर्मों का वणिज वहाना

त्यागे लोभ लबेस।

२. जाग मुसाफिर बहु तुम सोये,

तीन अवस्था वैरथ खोई,

श्वेत भये है केस।

३. जब से जग में जन्म ले आये,

तब से तुमने बहु दुख पाये

थियो ताप क्लेश।

४. कहे टेऊं सत्गुरू प्रसादी,

पाओ आत्म भवन अनादि,

जां में दुख नहीं लेस।

यह भजन अर्थ सहित कह कर सत्नाम साक्षी की धुन लगाकर सत्संग समाप्त किया। माता लक्ष्मी और पार्वती हाथ जोड़कर सत्गुरू महाराज जी से कहने लगी कि हे प्रभु! कृपा कर चांद के दिन भी दर्शन करवाना, जो ज्ञानी बाई का बारवां है। तब सत्गुरू महाराज जी ने कहा कि तुम कोई चिंता मत करो, ईश्वर सब भला करेंगे। साध आपके पास आयेंगे। इतना कह कर सत्गुरू महाराज जी सभी सन्तों सहित आश्रम पर आ गये। सत्गुरू महाराज जी ने संत ऊधवदास को कहा कि संत सर्वानन्द को तार कर दो कि वह हैदराबाद आवे। इन सब संकेतों से स्वामी जी को आभास हो गया कि सत्गुरू महाराज जी परम धाम की तैयारी कर रहे हैं यह विचार आते ही उनके हृदय में पीड़ा होने लगी। अब स्वामी जी सारा समय सत्गुरू महाराज जी की सेवा में रहने लगे।

दूसरे दिन भाई रामचन्द सेवहाणी ने आश्रम पर भण्डारा करवाया। सत्गुरू महाराज जी ने सोडा मंगवाकर पी। उसके बाद भोजन कर विश्राम किया। शाम को थोड़ा फुलेली से घूम कर आकर सत्संग किया। जिसमें कहा :-

दोहरा

अत्म जोत प्रकाश ते

प्रकाशत शशि सोर

कहे टेऊं वह नित जले

घट घट में भरपूर ।

आत्म जोत के प्रकाश से सारा आत्माण्ड प्रकाशित हो रहा है। आत्म जोत के कारण अन्तःकरण अर्थात् मन, बुद्धि चित्त, अहंकार, पांच ज्ञान इन्द्रियां, कान, नाक, आखें, रसना, त्वचा आदि सारा शरीर कार्य कर रहा है। सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि व सब आत्म जोत के कारण ही प्रकाशित है। यह समझाने के लिये दृष्टान्त दिया।

दृष्टान्तः- एक जिज्ञासू एक महात्मा के पास यह शंका ले आये कि आत्म जोत कहां पर जलती है, जो सभी जोतियों को प्रकाश देती है। महात्मा ने मुस्करा कर जिज्ञासू से कहा कि बाजार में जाकर कुम्हार से एक कच्चा घड़ा ले आओ। जिज्ञासू घड़ा लेकर आया। महात्मा ने घड़े में पांच रूपये जितने सुराऽख किये और एक दीपक चला कर घड़ा उसके ऊपर रखा। सुराखों से जहां जहां पर प्रकाश पड़ रहा था वहां महात्मा ने बाजा, कपड़ा, रंगीन चद्दर, मिठाई और गुलाब के फूल रखे और बाहर कमरे से बिल्कुल अंधेरा कर लिया। महात्मा ने जिज्ञासू से पूछा यह प्रकाश जो घड़े के अन्दर और बाहर पदार्थों पर पड़ रहा है, वह किसका है? मटके का या बाहरी पदार्थों का है। जिज्ञासू ने कहा कि प्रभू यह प्रकाश तो दीपक का है। महात्मा ने कहा इसी प्रकार जोत अन्तःकरण रूपी दीपक से देह रूपी घड़ी में अखण्ड प्रकाश कर रही है। पांच ज्ञान इन्द्रियां और पाँच विषयों, शब्द, स्पर्श रूप, रस व गन्ध तथा सारा संसार उस जोत के कारण प्रकाशित हो रहा है। यह अखण्ड जोति सपने और जाग्रत सृष्टी को प्रकाशित कर रही है। वह आत्म जोत सभी जीवों के हृदय रूपी मन्दिर में आठों पहर जल रही है। सत्गुरू से युक्ति लेकर उस जोति का पहचानना चाहिये। वह चेतन जोति इस जीव का ही स्वरूप है। दृष्टांत के पश्चात यह भजन कहाः-

भजन (राग पहाड़ी)

सारी सिरजण हार,

साई ज़ात आसां जी।

१. पंजनि ततुनि जो पिञरो आहे,

तहिं में आत्म सार, साई जात असांजी।

२. अठई पहर अन्दर में जोई,

अखण्ड ज्ञान अपार, साई बात असांजी।

३. अस्ती भति प्रिय जो स्वरूपा,

अनुभव सुख इसरार, साई शान्त असांजी।

४. कहता टेऊं लोक टिन्हीं में,

चेतन जो चमकार, साई क्रान्त असांजी।

अत: में सत्गुरू महारा जी ने सत्नाम साक्षी की धुनी लगा कर सत्संग समाप्त कर पल्लव डाला।

पल्लव

आशवंदी गुरू तो दरि आई

तुम बिन ठोर न काई।

तूँ हर दाता तूँ हर माता

मेरी आश पुजाईं।

पाई पल्लव पेरे प्यादी,

आयस हेत मंझाई।

तन मन धन अरदास करे मैं,

मांगत नाम स्नेही।

नाम तुम्हारा साबुन करसां,

धोइसां पाप सभेई।

कहे टेऊं गुरू लोक तीन में,

आवा गमन मिटाईं।

सारी संगत खुश होकर प्रसाद लेकर अपने घर गई। सत्गुरू महाराज जी ने अपनी कुटिया में आकर सभी संतों को अपने पास बुलाकर कहा कि हमने अब अमर लोक जाने की तैयारी कर ली है। हमारी कुटिया का दरवाजा बंद कर एक साध को बिठा दो। किसी को भी हमारे पास अन्दर आने मत देना। सुबह चार बजे कुटिया का दरवाजा खोलना।

सत्गुरू महाराज जी के ये वचन सुनकर स्वामी जी और अन्य साधु घबरा गये। सब के आँखों में पानी भर आया। हाथ जोड़ कर सत्गुरू महारा जी से विनती कर कहने लगे कि हे त्रिलोकी नाथ! यह आप क्या कर रहे हैं? हे भगवान! आपके रहने की बहुत आवश्यकता है। हम बच्चों को कैसे छोड़ जाओगे, या हमें भी अपने साथ ले चलो। यह कह कर स्वामीजी और अन्य सन्त जन बहुत रोने लगे। सत्गुरू महाराज जी ने सबसे कहा कि बाबा! आप घबराओ मत। हम सदा आपके साथ हैं, और जैसे हमने आज्ञा की है वैसे ही करो। आखिर सब सन्त बाहर आ गये और बाहर एक साधु को बिठा दिया और कुटिया का दरवाजा बंद कर दिया। उस रात स्वामीजी को बिल्कुल नींद नही आई। सोचने लगे कि दिल में अभिलाषा थी कि सत्गुरू महाराज जी को यहाँ रख कर खूब सेवा करूंगा और उनके चरणों का वास मिलेगा। परन्तु यह क्या हो गया। सत्गुरू महाराज जी ने हमसे बिछुड़ कर अमरलोक की तैयारी कर ली। सुबह

प्रात: चार बजे सब साधु द्वार खोल कर देखते है कि सत्गुरू महाराज जी तो चिर समाधि में स्थिर हो गये हैं। सभी संत चुपचाप बैठ गये। घण्टे भर बाद सब ने विचार किया कि सत्गुरू महाराज जी को समाधि से जगाएं तो अच्छा। यह विचार कर अन्दर आकर सत्गुरू महाराज जी को धीरे धीरे आवाज दी, हे भगवान! हे गोविंद! हे नारायण! परन्तु सत्गुरू महाराज जी ने आवाज नहीं दी और समाधि नहीं खुली। आखिर सन्तों ने हाथ लगाकर देखा तो नाड़ी नहीं चल रही थी किन्तु शरीर गरम था। उसी समय डाक्टर मंघनमल व आसूदाराम को बुलाया जिन्होंने जांच कर कहा कि सत्गुरू महाराज जी की वृत्ति ब्रह्मलीन हो गई है। अन्दर प्राण गुप्त रूप से चल रहे हैं। जैसे योगी जन प्राण दसवें द्वार में चढ़ा लेते हैं वैसे ही सत्गुरू महाराज के प्राण चल रहे हैं। हमने बहुत संत महात्माओं की अन्तिम घड़ी देखी है परन्तु ऐसा ब्रह्म आकार वृत्ति किसी भी महात्मा की नहीं देखी है। दोनों डॉक्टरों ने कहा कि सत्गुरू महाराज जी का शरीर नहीं रहेगा। तब स्वामी जी, दूसरे संत, गृहस्थ पुरूष स्त्री घबरा कर खूब रोने लगे। स्वामी जी उस समय सत्गुरू महाराज जी को दान पुण्य करवाने लगे। उस समय अचानक सत्गुरू महाराज की आँखें खुली और बिजली के समान प्रकाश चमक कर आँखों से बाहर निकल कर आकाश मण्डल में लीन हो गया। यह देख कर सभी संत और प्रेमी आश्चर्य चकित हो गये। सत्गुरू महाराज जी को स्नान करवाकर एक सुन्दर सजी हुई डोली में बिठाकर पद्म आसन्न लगाने के लिये जैसे एक पांव में हाथ डाला तो दूसरा पांव अपने आप चढ़ गया और पद्म आसन्न लग गया। सभी संत और प्रेम सत्गुरू महाराज जी की यह शक्ति देखकर ताज़ुब में पड़ गये। उसके बाद स्वामी जी ने सभी प्रेमियों को तार भेजे। सारे शहर में सत्गुरू जी के अमरलोक पधारने की खबर बिजली के समान फैल गई। हजारों प्रेमी आकर इकट्ठे हुए। कुछ लोग साक्षी शिवोहम की धुनी लगा रहे थे। कुछ गीता का पाठ कर रहे थे। कुछ लोग रो रहे थे तो कुछ हा हा कार कर ठंडी आहे भर रहे थे, कुछ लोग विलाप कर सत्गुरू महाराज को पुकार रहे थे। जिस रोज़ सत्गुरू महाराज जी ज्योति जोत समाये वह दिन शनिवार का दिनांक चार, महीना पुरूषोत्तम, पहला जेष्ठ, संवत 1999 था। बारह बजे सभी सन्तों ने विचार किया कि सत्गुरू महाराज जी को टण्डे आदम अमरापुर दरबार पर ले जाना

चाहिये। इसलिये एक मोटर कार लेकर उसमें सत्गुरू महाराज जी को बिठाया साथ में स्वामी जी और दो अन्य संत भी बैठे। सभी हैदराबाद निवासी प्रेमी नंगे पांव हजारों की संख्या में सत्गुरू महाराज जी के पीछे भारी मन से चलने लगे। शहर के बाहर फुलेली के पुल पर सभी नमस्कार कर सत्गुरू महाराज जी की जय जय कार बोल कर रोते हुए पीछे लौटे। मोटर आगे की यात्रा के लिये रवानी हो गई। रास्तें में हटरी, मटियारू, सेखाट महरा और उदेरीलाल होती हुई टण्डे आदम आ गई। हरेक गाँव के लोग सत्गुरू महाराज जी का दर्शन कर बहुत रोये, प्रसाद और पखर रख कर नमस्कार कर ठंडी आहें भर कर विलाप करने लगे और सत्गुरू महाराज जी के गुण गाने लगे। टण्डे आदम में हजारों प्रेमी, स्त्री पुरूष रोते हुए विलाप करते हुए सत्गुरू महाराज जी को पुकारने लगे। दरबार की गायें भी आंखों में आँसू भर रोने लगी। खाना पीना छोड़ दिया। बगीचे के पेड़ भी मुरझा गये। एक वेद मुश्क का पेड़ जो सत्गुरू महाराज जी ने अपने हाथों से लगाया था, बिना किसी हवा के झोंके जड़ समेत अपने आप उखड़ कर गिर गया। जिस गाय का सत्गुरू महाराज जी दूध पीते थे वह भी सत्गुरू महाराज जी के वियोग में परलोक पधार गई। हैदराबाद के प्रेमी और सिन्ध पंजाब व सारे हिन्दुस्तान के प्रेमी शोक समाचार सुन कर टण्डे आदम दरबार पर आये। सारी रात सोहंम की धुनी और सत्संग चलता रहा। शहर में हड़ताल कर दी गई। साधु ब्रह्माण, गृहस्थी स्त्री पुरूष बहुत संख्या में आये। दूसरे दिन सन्तों ने सत्गुरू महाराज जी की डोली लेकर शोक यात्रा निकाली, जिस में सभी शहरों की मण्डलियां मारू संगीत गाजी हुई चलती रहीं। सभी प्रेमी नंगे पांव व नंगे सिर रोते हुए जलूस में चले। सारे शहर में शोक की लहर छाई हुई थी। स्वामी जी सारा समय सत्गुरू महाराज जी की डोली के साथ अनमने से शोकाकुल भारी मन से धीरे धीरे चल रहे थे। जलूस के साथ चलने वाले सभी प्रेमियों के मुख से यही आवाज़ निकल रही थी कि हे भगवान! हे सत्गुरू महाराज जी! आप धन्य हैं जो आप हम पापी जीवों के उद्धार हेतु औतार लेकर आये। थोड़े समय में बालू पर मन्दिर बनाकर आनन्द मनाया। परन्तु अज्ञान वश हम आप से कुछ भी प्राप्त नहीं कर सके। इस प्रकार सभी ने सत्गुरू महाराज जी के गुणगान कर उनकी जय जयकार की। सत्गुरू महाराज जी के परलोक पधारने का सुन कर हिन्दु चाहे

मुस्लमान और सभी जातियों के लोग हाहाकार कर रो रहे थे। उस समय किसी को भी अपने शरीर की सुधबुध नहीं थी। यह दृश्य कहा नहीं जा सकता है कि क्या था। जलूस सारे शहर मे घूम कर दरबार पर आया। स्वामी सर्वानन्द जी तार मिलते ही ऋ षि केश से रवाना हो गये। हजारों प्रेमी सत्गुरू महाराज जी के वियोग में रो रहे थे। स्वामी सर्वानन्द जी, स्वामी जी और अन्य संत ज्ञानवान होते हुए भी हो रहे थे। सत्गुरू महाराज जी को याद कर सब रोने लगे। कोई पाठ कर रहे थे, कोई शिवोहंम की धुनि लगा रहे थे। कोई सिर झुकाकर बैठे थे। घण्टे भर बाद सभी संत हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगे कि हे भगवान! हे त्रिलोकी नाथ! हे नारायण! हे सच्चानन्द! हे परिपूर्ण परमात्मा! बे सहरों के सहारे! हमने बहुत अवाज्ञाएं की है वे सब हमें माफ करना। सच्ची सुमति देना और आशीर्वाद देना कि आपका प्रेम प्रकाश मण्डल सदा बढ़ता रहे। सभी का आपस में प्रेम रहे, कोई भी साधु महमान व मुसाफिर आपके द्वारा पर आकर कभी खाली नही जाये, सभी को मन चाहा दान देते रहें।

उस समय अचानक फिर सत्गुरू महाराज जी के नेत्र खुले बिजली के समान प्रकाश हुआ जो संतों और प्रेमियों ने देखा। फिर नेत्र बंद हो गये। उसके बाद अग्नि संस्कार किया गया। सारी संगत सत्गुरू महाराज जी की जय जयकार मनाने लगी। इस प्रकार सत्गुरू महाराज जी का अलोकिक परलोक पधारपण हुआ। सत्गुरू माराज जी ने अपनी ऐसी लीला रचाई जो जिस दिन, जिस तारीख, जिस तिथि छठ पर दुनियां में संसार के उद्धार हेतु आये थे, उसी तारीख वही शनिवार का दिवस और उसी तिथि छठ पर परलोक पधारे। उसके बाद बारह दिन सत्संग और भण्ड़ारा चलता रहा। बाहर के संत महात्मा व प्रेमी बड़ी संख्या में आये हुए थे। श्रीमद् भगवद् गीता, श्रीमद् भागवत, महा पुराण, गुरूर पुराण, योग वशिष्ठ निर्वाण प्रकरण के पाठ रखे गये। सत्गुरू महाराज जी की कृपा से सभी सन्त सेवाधारी सेवा करने लगे। सन्त महात्मा सत्संग से सत्गुरू महाराज जी के जीवन, महिमा, कीर्ति और गुण गाने लगे। बारह ही दिन अखण्ड़ सत्संग चलता रहा। बारहवें दिन सभी शास्त्रों का भोग डाला गया। सत्गुरू महाराज जी के महिमा के भजन बना कर सभी सन्तों द्वारा गाये गये।

सत्गुरू महाराज जी के परलोक पधारने के बाद मण्डल के कार्य संचालन हेतु सन्तों ने एक सभा बुलाई। इस सभा में सभी सन्तों ने कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिये अपनी अपनी राय दी। स्वामी जी ने उस सभा में सभी सन्तों से विनती कर कहा कि हम सब सत्गुरू महाराज जी के कुटम्ब के सदस्य हैं। हम सब पर उनकी असीम कृपा है। हम सबको मिलकर सत्गुरू महाराज जी के नाम को स्थाई रूप में कायम करना है, और प्रेम का प्रकाश फैलाना है। यह तभी सम्भव होगा जब सभी सन्त में एक दूसरे के लिये प्रेम, आदर और विश्वास होगा। सत्गुरू महाराज द्वारा चलाये गये इस महायज्ञ को जारी रखने के लिये हम सब को मन मेली बन कर रहना होगा। एक दूसरे का खूब सम्मान करना पड़ेगा, तभी यह यज्ञ सफल हो सकेगा। हर एक कार्य करने का, सेवा करने का तरीका अलग अलग हो सकता है परन्तु हम सब का एक ही उद्देश्य है, सत्गुरू महाराज जी के शिक्षाओं का प्रचार कर उनका नाम अमर करना। सभी सन्तों से विनती की कि तभी संत जन एक दूसरे को खूब सम्मान देवे। दूसरे को मान देने से हमारा मान बढ़ेगा। स्वामी जी सदा सभी संतों का खूब सम्मान करते थे और अपने प्रेमियों से कहते थे कि सभी संतों का आदर करो, झुककर उनसे आशीर्वाद लो।

सत्गुरू महाराज जी के अमर लोक पधारने के पश्चात मण्डल के कार्य को चलाने के लिये सभी सन्त ने मिल कर स्वामी सर्वानन्द महाराज जी को अपना अध्यक्ष बनाया। उस समय सभी प्रेमियों ने, सन्त महात्माओं ने और टण्डे आदम की पंचायत ने बड़े प्रेम से पखरें व भेंट चढ़ाई। उसके बाद भण्डारा शुरू हुआ। सर्व प्रथम ब्राह्मणों और सन्तों ने भोजन किया, उसके पश्चात साधु ब्राह्मणों को गाये, वस्त्र भेंट व मन चाहा दान दिया गया। उसके बाद आम भण्डारा शुरू हुआ। सारे शहर और आस पास में लड्डू बाँटे गये। सारी सिन्ध, पंजाब और हिन्दुस्तान के अनय शहरों में प्रेमियों के पास खोखे भर भर कर लड्डू भेजे गये। भण्डारे में इतनी तो बरकत पड़ी कि पशु पक्षी और अन्य जीवों को भर पेट खिलाया गया, फिर भी प्रसाद बचा रहा। अंत में स्वामी सर्वानंद महाराज जी ने बारवें की समाप्ति का पल्लव डाला। सभी संत महात्मा वहां उपस्थित थे। सत्गुरू महाराज जी की याद में सभी के नेत्र जल से तर

हो गये। उसके बाद साधु सन्त और सत्संगी पे्रमी सभी आज्ञा लेकर अपने अपने गांव चले गये।

अन्त में स्वामी जी स्वामी सर्वानंद जी से आज्ञा लेने गये। उस समय उन्हें विनती कर कहा कि सत्गुरू महाराज जी के अमरलोक पधारने के पश्चात हमें आपका ही सहारा है। हम आप के अन्दर उसी सत्गुरू महाराज जी की जोत के दर्शन करते है। अब आप गुरू गद्दी के मालिक है। इसलिये हम आपका वैसा ही आदर करते है जैसे हम सत्गुरू महाराज का करते थे। अब आप हमें सत्गुरू महाराज जी की तरह ही संभालते रहेंगे। जैसे सत्गुरू महाराज समय समय पर आकर हमें हैदराबाद वाली दरबार पर संभालते थे वैसे ही आप भी अपने पवित्र चरणों द्वारा आश्रम को पवित्र करते रहें। स्वामी जी ने उन्हें यह विनती की कि जैसे कि सत्गुरू महाराज जी हमारी दरबार पर ही ज्योति जोत समाये इसलिये हर वर्ष सत्गुरू महाराज जी वर्सी वहीं पर मनाने की इज़ाजत भी दीजिये। इर वर्ष वर्सी पर मेला वहीं लगाया जाये, जहां मण्डल के सभी सन्त पधारेंगे और मण्डलाचार्य उस मेले की अध्यक्षता करेंगे और सब दिन वहां रहकर मेले का संचालन स्वयं करेंगे। स्वामी सर्वानंद जी ने स्वामी जी की इस ऊँची भावना को खूब सराहा, उन्हें प्यार से गले लगाकर वचन दिया कि वे उनके दरबार पर नियम से आते रहेंगे और वर्सी का मेला स्वयं आकर मनायेंगे।

सन्तों से आज्ञा लेकर स्वामी जी भारी मन से अपने आश्रम पर पहुँचे। वहां पहुँच कर उन्हें सतगुरू महाराज जी के बिना हर वस्तु सूनी लगने लगी। कितनी श्रद्धा और स्नेह से सत्गुरू महाराज जी के लिये कुटिया बनवाई। दिल में अभिलाषा थी कि सत्गुरू महाराज जी की सेवा कर जीवन सफल बनायेंगे। परन्तु बन्दे के मन एक तो भगवान के मन में दूसरी। स्वामी जी को सत्गुरू महाराज जी के विरह का बहुत दु:ख था। सत्गुरू महाराज जी को उन्होंने सब कुछ अर्पण कर दिया था। सत्गुरू महाराज जी उनके लिये भगवान थे, सब कुछ थे। परन्तु खुद बड़े गहरे ज्ञानी थे सो विचार करने लगे:-

चलना है सबको नियम अनुसार,

राम गये कृष्ण गये छोड यह संसार।

स्वामी जी के पधारने का सुन कर सभी प्रेमी उनसे मिलने आये। स्वामी जी ने नियम अनुसार सायंकाल सत्संग किया। उसमे सत्गुरू महाराज जी की महिमा प्रेमियों को बता कर सत्गुरू महाराज जी की याद में भजन कहा।

भजन (राग भैरवी)

सन्त सियाणो तूँ हुए संन्त सियाणों,

स्वामी टेऊंराम तूँ हुएं सन्त सियाणो

१. गुणवानु सच्चो ज्ञानी, गम टार तूँ हुएं

बिरह सन्दे बाग जो गुलज़ार तूँ हुए

कन्दो भगति भाव जो प्रचार तूँ हुए

शान्त रूप सभ खे हुए साईं सीबाणो

सन्त सियाणो तूँ हुए सन्त सियाणो,

२. मुलकनि में वञी तो कयो प्रचार प्रेम जो,

सभ खे दिनों तो ई सहचार प्रेम जो

खुलियलु रखियों खास तो भण्डार प्रेम जो,

वंडे दिनों सभखे सच्चे नाम जो नाणू

सन्त सियाणो तूँ हुए सन्त सियाणो।

३ उजिड़ियल बयाबान जे आबाद तो कया

नन्ढा वदा शहर सभेई शाद तो कया

बिछुडिया जन्मनि जा केई याद तो कया

सत्संग जो दाता लातई दीबाणो,

सन्त सियाणों तूँ हुए सन्त सियाणो।

४. जिन खे न आयो अखरू, तिनी खे ज्ञान तो दिनों,

जिन जा मलीन हिरदा तिनि ध्यान तो दिनों

जिनि खे न पुछे जग में, तिनि मानु तो दिनो

कहिड़ी तुंहिंजी महिमा गाये माधव निमाणो

सन्त सियाणो तूँ हुए सन्त सियाणो।

अर्थ:- सत्गुरू महाराज जी की महिमा गाते हुए स्वामी जी कहते हैं कि हे सत्गुरू महाराज आप बहुत पहुँचे हुए संत थे। आप गुणवान, सच्चे ज्ञानी, दूसरे के दु:ख को दूर करने वाले थे। इस दु:ख से भरे संसार रूपी बगीचे के आप सुन्दर फूल के समान थे। आप भक्ति भाव का प्रचार करते थे। आप शांत रूप थे इसलिये सबको भाते थे। देश विदेश में जाकर आपने प्रेम का प्रचार किया। आपने सब को प्रेम का सहारा दिया। आपने प्रेम का खास भण्डारा खोल दिया। आपने सब को नाम रूपी धन बांट कर दिया। उजड़े हुए रेगिस्तान को आपने आकर आबाद किया। छोटे बड़े शहरों में आपने खुशी का प्रवाह बहा दिया। जो कई जन्मों से बिछुड़े हुए थे उनको आपने याद किया। आप ने हर जगह सत्संग का दीबाण जगा दिया। जिनको

एक अक्षर भी नही आता था उनको आपने ज्ञान के भण्डारा भर कर दिये। जिसका हृदय मलीन था उनको नाम का ध्यान देकर उबार लिया। जिन को जग के लोग पूछते भी नहीं थे उनको आपने खूब मान दिया। स्वामी जी कहते हैं कि सत्गुरू महाराज जी मैं विनीत आप की महिमा कितनी गाकर कितनी गाऊं। आप तो बहुत पहुँचे हुए सन्त थे।

सत्संग के पश्चात एकांत में बैठने पर उन्हें सत्गुरू महाराज जी की याद खूब सताने लगी। अपने मन का समझाने लगे कि सत्गुरू महाराज जी तो अमर है। उनकी जोत तो हर स्थान पर प्रकाशित है। उनकी मधुरवाणी और अमृत वचन तो सदा अमर है। उनका स्वरूप तो मेरे रोम रोम में समाया हुआ है। उनकी याद तो आठों पहर मेरे अन्दर में है। सत्गुरू महाराज जी मेरे से जुदा हो नही सकते हैं।

सत्गुरू महाराज जी के लिये जो कुटिया बनवाई थी वहां आसन्न लगा कर उनकी मूर्ति की स्थापना की। प्रति दिन प्रात: काल व सायंकाल मूर्ति के सामने बैठकर बिना पलक झपके मूर्ति की ओर देखते रहते थे। जब सत्गुरू महाराज जी की सूरत उनकी आत्मा में समा जाती थी तब आँखें बंदकर वह सूरत शिव नेत्र में देखते रहते थे। और मन में सत्गुरू महाराज जी का स्मरण करते रहते थे। इस प्रकार घण्टों ध्यान में बैठे रहते थे। ध्यान में बैठे बैठे पहले उनके पांव सुन्न होते थे फिर घुटनों तक उसके बाद कमर तक और धीरे-धीरे सारा शरीर सून्न हो जाता था। उस समाधि की अवस्था में उन्हें अपार आनन्द मिलता था। अन्दर में सत्गुरू महाराज जी का साक्षात् दर्शन होता था।

इस प्रकार सत्गुरू महाराज जी का ध्यान करते करते विरह का दर्द कुछ कम होने लगा। और उसके स्थान पर संतोष और शुक्र पैदा हुआ। परन्तु सत्गुरू महाराज जी की याद तो उन्हें पल पल सताने लगी, उनकी याद में भजन गाकर अपने मन को शांति देते थे।

भजन (राग पहाड़ी)

पवनि याद पलि, प्रीतम प्यारा,

कदहिं कीन विसिरनि सजण से सचारा।

१. जदहिं खां जुदाई कई आहे जोजियुनि

तदहिं खां अखियुनि मां वहनि नीर नारा

२. मिठी बियो न मूँखे पिरी रे लगे थो,

मिलनि शाल मूसां, जीअ जा जियारा।

३. दिठुमि जाचे जग में, सन्दनि मट न कोई,

देई प्रेम विया जे खसे सिय़ाल सारा।

४. कहे टेऊँ कहडियूँ, कयां तिनि जूँ गालिहियूँ

गुणनि ज्ञान भगती, जा से भण्डारा।

अर्थ:- इस भजन में स्वामी जी कहते है मुझे मेरे प्यारे प्रीतम के सिवाय और कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है। वे मेरे जीवन के सहारे आकर मेरे से मिले तो मुझे शांति मिले। मैंने सारे जग को अच्छी तरह जांच कर देखा है, परन्तु उनके बराबर मुझे और कोई नहीं मिला। वे मुझे प्रेम देकर और सब विचार ले गये हैं। स्वामी जी कहते हैं मैं उनकी कौन कौन सी बातें करूं। वे तो गुणों, ज्ञान और भक्ति के भण्डार थे।

इस प्रकार सुबह शाम सत्गुरू महाराज जी की आरती और पूजा होने लगी। सभी प्रेमी आकर श्रद्धा से सत्गुरू महाराज जी की मूर्ति पर सिर झुकाते थे। स्वामी जी नियम से सत्संग करते थे और बाहर से जो संत आते थे उनमें भी सत्गुरू महाराज जी का रूप जानकर उनकी खूब सेवा करते थे और उन्हें भी सत्संग करने के लिये विनती करते थे। आश्रम में आठों पहर आनन्द लगा रहता था। आए गये का खूब आदर होता था। प्रेमियों को स्नेह से प्रसाद देते थे।

स्वामी जी तो थे ही दाता सो देकर खूब खुश होते थे। उनके पास प्रेमियों की खूब भीड़ लगी रहती थी।

हर रोज सत्संग करने के अतिरिक्त हर महिने श्री सत्य नारायण की कथा बड़े स्नेह और श्रद्धा से करते थे। उस दिन कथा के साथ हवन भी करते थे। कथा समाप्त कर, सभी को प्रसाद देकर भण्डारा करवाते थे। उस दिन आश्रम में मेला लगा रहता था।

स्वामी जी स्वयं कथा करते थे। कथा के साथ प्रेमियों को श्री सत्यनारायण के व्रत का महातम भी बताते थे। कहते थे कि श्री सत्यनारायण स्वामी का महातम सभी व्रतों में उत्तम है। श्री सत्यनारायण स्वामी का व्रत रखने से इस संसार में सुखी रह कर, अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है। मोक्ष के साधन है कर्म, उपासना और ज्ञान। श्री सत्यानारयण स्वामी के भोग का प्रसाद तैयार करना, श्री सत्यनारायण स्वामी की आरती तैयार करना, इन सब को कर्म कहते हैं।

श्री सत्यनारायण स्वामी की मूर्ति को स्नान करवाना, वस्त्र पहनाना, तिलक लगाना, एकाग्र चित्त से हाथ जोड़कर प्रार्थना करने को उपसना कहते हैं। सत्य ब्रह्म उस नारायण को अपने में जानना और बुद्धि रूपी मन्दिर में साक्षात रूप देखने को ज्ञान कहते हैं। इसलिये श्री सत्यनारायण स्वामी के व्रत रखने से कर्म, उपासना और ज्ञान द्वारा मल विक्षेप के आवरणों के परदे सहज ही दूर हो जाता है और आत्मा का साक्षात दर्शन होता है। यह मनुष्य संसार में जीवन मुक्त होकर अंत में मोक्ष पद को प्राप्त करता है।

श्री सत्यनारायण स्वामी का महातम सुना कर श्री सत्य नारायण स्वामी की प्रार्थना कहते थे यह प्रार्थना स्वामी जी ने स्वयं बनाई थी जो इस प्रकार है:-

श्री सत्यनारायण स्वामी की प्रार्थना

सच्चा सत्यनारायण स्वामी तुंहिजा गुण गीत गायूँ था,

झुकाए सीस निवरत सां अगियां तुंहिजे निमा यूँ था।

१. कया आहिनि पाप जे प्रभू असां पंहिजी हयातीअ में,

तुंहिजे ई नाम सां स्वामी कयल पाप मिटायूँ था।

२. विञाई उमिरि आ सारी, बिहारी हीअ बुराईअ में,

बधी बाहूँ प्रभू तोखा बदियूँ स्वामी बखिशायूँ था।

३. रही अज्ञान जे अंध में, कयो ना कमु नेकीअ जो,

तुंहिजे ई ज्ञान सां स्वामी, अविद्या ऊंदहि हटायूँ था।

४. रहे माधव असांते शल, सदा आसीस हे स्वामी,

तुंहिजी पूजा करे पलि-पलि आत्म आनन्द पायूँ था।

अर्थ:- श्री सत्यनारायण स्वामी की महिमा में स्वामी जी ने कहा है कि हे सच्चे सत्यनारायण भगवान हम आपके गुणों के गीत गाते है और विनम्रता और आदर से आपके सामने अपना सीस झुकाते हैं। हे प्रभु हमने इस जीवन में जो पाप किये हैं वे सब आपका नाम लेकर मिटाते हैं। हे बिहारी! हमने अपनी सारी उम्र बुराईयों में बिताई है। अब हम आपके सामने हाथ जोड़कर उन सब बुराईयों के लिये क्षमा याचना करते हैं। अज्ञान के अंधकार में रहकर हमने कोई भी नेकी का काम नहीं किया है। हे स्वामी! आपके ही ज्ञान से अविद्या रूपी अंधकार हटाते हैं। स्वामी जी कहते है कि हे श्री सत्यनारायण स्वामी आप की हम पर सदा आशीर्वाद रहे। आपकी पूजा पर हम पल पल आत्म आनंद पाते है।

स्वामी जी की धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन में गहरी रूचि थी। उनका नियम से पाठ करते थे। उन ग्रंथों में से श्रीमद् गीता में उनकी अपार श्रद्धा थी। प्रतिदिन प्रातः काल श्रीमद् गीता के एक अध्याय का पाठ अवश्य करते थे। जब अठारह अध्याय पूर्ण होते थे तब विधि

पूर्वक भोग डालकर, फिर नये सिरे से पहले अध्याय का पाठ अध्याय का पाठ आरम्भ करते थे। श्रीमद् गीता पर विद्वानों द्वारा लिखी टीका का भी गहरा अध्ययन करते थे।

स्वामी जी श्रीमद् गीता का पाठ करने के लिये प्रेमियों को प्रेरित करते थे। उनको गीता के महत्व के बारे में समझाते हुए कहते थे कि गीता का ज्ञान गहरे समुद्र के समान है उस में ज्ञान का अनन्त भण्डार है, अनन्त भावों और धन का खज़ाना है। जिस प्रकार गोता खोर समुन्द्र में गहरी डुबकी लगाकर मोती प्राप्त करता है, उसी प्रकार साधक पुरूष गीता में जैसे जैसे गहरा जायेगा वैसे वैसे अनेक रत्न रूपी भावों को प्राप्त करेगा।

श्रीमद् गीता सच्चा आत्मक मार्ग दर्शक, रूहानी रहबर, गुरू और माता के समान है। उसके ज्ञान पर बार बार विचार करने से रोम राम में समा जाता है। कैसी भी संकट की घड़ी में श्रीमद् गीता का सहारा लेने से मन को शांति मिलती है। गीता का पाठ करते समय हम श्री कृष्ण भगवान को ब्राजमान जान कर उनकी शरण लेने तो कैसी भी मन की उलझन पल भर में दूर हो जायेगी। गीता का अभ्यास मनुष्य की श्रद्धा और सावधानी बढ़ाने वाला और शान्तिमय पद, परम धाम को प्राप्त करवाने वाला है।

श्रीमद् गीता में कर्म करने की इतनी तो महिमा है जो ज्ञानी पुरूष को विशेष आदेश दिया गया है कि वह शास्त्रानुसार कर्म फल चाहने वाले अज्ञानी पुरूषों की बुद्धि में भी कभी कर्मों में अश्रद्धा उत्पन्न न करें परन्तु स्वयं भी शास्त्रानुसार सब कार्य अच्छी तरह करते उन्हीं से भी ऐसे करवाएं। निश्काम कर्म करने वाला योगी तो जन्म मरण से रहित होकर ब्रह्म स्वरूप को प्राप्त होता है।

श्रीमद् गीता परम मुक्ति का साधन सिखाती है। श्री कृष्ण भगवान अर्जुन के कहते हैं कि "हे अर्जुन! सभी इन्द्रियों के द्वारों को रोक कर अर्थात् इन्द्रियों को विषयों से हटा कर मन को हृदय में स्थिर कर और अपने प्राणों को मस्तिष्क में स्थापित कर, परमात्मा सम्बन्धी योग की धारणा में स्थित रहकर, जो पुरूष "ओम" रूपी एक अक्षर ब्रह्म का

उच्चारण करते और उसके अर्थ रूपी मुझ निर्गुण ब्रह्म का चिंतन करते शरीर त्यागता है, वह परम गति को प्राप्त होता है। परन्तु अन्त काल में इस प्रकार की स्थिति तो उस पुरूष की होगी जिसने योग का अभ्यास कर मन को अपने वश में किया है। इसलिये नित नियम से गीता का पाठ करना आवश्यक है।

स्वामी जी द्वारा गीता का महत्व सूनने के पश्चात कई प्रेमियों ने नियम से गीता का पाठ आरम्भ कर दिया। प्रेमी जैसे-जैसे गीता का पाठ करने लगे वैसे-वैसे उनके दिल में भी गीता रहस्य जानने की प्यास बढ़ती चली गई। सो प्रेमियों ने स्वामी जी से विनती की कि सत्संग में उन्हें गीता के रहस्य के बारे में बताएं। स्वामी जी को प्रेमियों की यह बात सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई और एक दिन सत्संग में गीता का रहस्य इस प्रकार खोलकर समझाया।

गीता के अठारह अध्याय कुल सात सौ श्लोकों में इस प्रकार पिरोये हुए हैं जैसे माला में मोती के दानें। एक-एक श्लोक अमूल्य मोती के समान अलोकिक रहस्य से भरा हुआ है। गीता में श्री कृष्ण भगवान ने परमात्मा को पाने, मुक्ति पद प्राप्त करने के तीन रास्ते खोलकर समझाये हैं। वे हैं कर्मयोग, ज्ञान योग व भक्ति योग।

तपस्या, तीर्थ, दान, यज्ञ आदि करने को कर्मयोग कहते हैं। अन्त:करण को जीत कर शुद्ध आतमा के चिन्तन करने को ज्ञान योग कहते हैं। पारब्रह्म परमात्मा के प्रेम में लीन होकर दिन रात उसके ध्यान में मग्न रहने को भक्ति योग कहते हैं। इन तीनों योगों का आपस में गहरा सम्बन्ध है।

नित नियम से जो कर्म हम करते हैं वे भगवान की अराधना के समान है। उन कर्मों का सम्बन्ध कर्म योग ज्ञान योग और भक्ति योग से अर्थात् तीनों से है। अर्थात् तीनों प्रकारों के योगियों को कर्म करना योग्य है। ये तीनों योग समाधि योग द्वारा आत्मा के साक्षत्कार के साधन हैं।

अपने सम्पूर्ण अज्ञान को नाश करने वाला साधक परमात्मा का साक्षत्कार कर उच्च कोटि की भगवान की भक्ति को प्राप्त करता है उस भक्ति द्वारा परम पद प्राप्त करता है।

ईश्वर को प्राप्त करने की कामना के लिये भक्ति योग एक बहुत बड़ा साधन है। आत्म अनुभव की कामना होने पर कर्म योग, ज्ञान योग, भक्ति योग, तीनों भक्त साधक को केवल दशा तक पहुंचाते हैं।

भगवान की प्राप्ति होने तक भगवान की प्राप्ति की प्रार्थना करने वाला उस अनन्त परम पद को प्राप्त करता है।

परम एकान्ती ज्ञानी भक्त, भगवान के अधीन रहता है। वह भगवान के संयोग में सुखी और वियोग में दुखी रहता है। वह भगवान के लिये अनन्य बुद्धि वाला होता है।

भगवान के ध्यान, योग, भक्ति, वन्दना, उस्तति व कीर्तन द्वारा आत्मा के सत्ता का अनुभव होता है। भगवान का भक्त, प्राण, मन, बुद्धि व इन्द्रियों को भगवान के चरणों में अर्पित समझता है।

भगवान का ऐसा भक्त अपने सभी कर्मों को भगवान की प्रसन्नता के लिये करता है। खुद करने की भावना को त्यागकर, करने कराने वाला भगवान को जान कर खुद निर्भय हो जाता है।

इस प्रकार भगवान का भक्त दास भाव द्वारा परम पद को प्राप्त होता है। यही गीता का रहस्य है।

प्रेमियों की गीता के लिये श्रद्धा एवं रूचि देखकर स्वामी जी ने उन्हें तसल्ली देते हुए कहा कि आप का गीता के लिये प्रेम देखकर हम गीता के मूल संस्कृत श्लोकों का सरल सिन्धी भाषा में अनुवाद करेंगे। ताकि गीता रूपी अमृत आप आसानी से पी सको। भारत में आने के पश्चात् भगवद् गीता के संस्कृत श्लोकों का सरल सिन्धी भाष में अनुवाद छपवाया

और अपने श्रद्धालु प्रेमियों को वह पुस्तक प्रसाद के रूप में देते थे ताकि वे उसे पढ़ कर अपना जीवन सफल बना सकें। न केवल इतना परन्तु गीता में उनका इतना विश्वास था जो अजमेर एवं पुष्कर राज में गीता प्रदर्शनी बनवाई जहां प्रेमियों की भलाई एवं गीता के प्रचार हेतु गीता के सात सौ श्लोक सुन्दर बड़े अक्षरों में लिखवाकर और गीता के गूढ़ रहस्य को समझाने के लिये सुन्दर चित्र भी बनवाये।

अब आश्रम में नियम से पूजा, पाठ व सत्संग करने के साथ-साथ स्वामी जी अपने प्रेमियों के स्नेह एवं श्रद्धा पूर्वक निमन्त्रण पा उनके घर जा कर भी सत्संग करने लगे। कुछ दिनों के पश्चात कराची से उनका श्रद्धालू प्रेमी श्री केशवदास व सन्ती बाई उपकी सेवा में हैदराबाद आये और उन्हें विनती की कि कुछ दिन कराची चल कर वहां के प्रेमियों को भी इस अमृत रूपी सत्संग का लाभ देवें। भगवान के भक्त तो प्रेम के भूखे हैं सो उनकी विनती स्वीकार कर कराची रटन के लिये निकल पड़े। श्री केशवदास का स्नेह एवं श्रद्धा देख कर उस के घर रहकर सुबह शाम सत्संग का दीबाण लगाने लगे जहां उनके प्रेमी आकर आनन्द उठाते थे।

स्वामी जी अपने गृहस्थी प्रेमियों को कहते थे कि आप बड़े भाग्यशाली हो जो आपको नाम दान मिला है। इस नाम रूपी जहाज में चढ़कर आप यह भवसागर पार कर सकेंगे। गृहस्थ आश्रम में रहकर नाम के साथ अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए आप संत कबीर, भक्त रविदास, मीरां बाई और गुरू नानक साहब की तरह प्रभू को पा सकते हैं।

एक दिन सत्संग करते हुए प्रेमियों को समझाते हुए कहा कि गृहस्थ रूपी रथ के दो पहिये है, स्त्री और पुरूष। उन दोनो के सहयोग से यह गाड़ी बहुत अच्छी तरह चल सकती है। स्त्री घर परिवार की धुरी के समान है। गृहस्थी में उसका महत्वपूर्ण स्थान है। वह घर को स्वर्ग बनाकर दोनों कुल तैरा सकती है। पतिव्रता नारी की बड़ी महिमा है। पतिव्रता नारी की

सीता, सावित्री, तारा और मन्दोदरी के सम्मान पूजा की जाती है। यहां प्रेमियों को पतिव्रता नार का एक भजन सुनाया।

भजन

पतिव्रता नारी बणाए सुरग थी संसार खे

नारि पंहिजे धर्म सां तारे कुल परिवार खे।

1 पतिव्रता जे धर्म में शक्ति भरियल आहे सच्ची,

धर्म जे बल सा हलाए तेज थी तलिवार खे,

2. पतिव्रता नारी हलाए पतिअ खे सत् कर्म दे,

नियम पूरे करण सा ई शुद्ध रखे वहिंवार खे।

3. माधव पतीअ जे प्रेम सा पाए सुख सुहाग जो,

हिन लोक ऐ परलोक में पाए जय जयकार खे।

अर्थ:- स्वामी जी ने इस भजन में पतिव्रता नारी के महिमा गाते हुए कहा है कि पतिव्रता नारी संसार को स्वर्ग बनाती है। पतिव्रता नारी अपने शुद्व व्यवहार से व धर्म पालन से कुल परिवार को उबार देती है। पतिव्रता नारी के धर्म में सच्ची शक्ति समाई हुई है। उसी धर्म के बल से वह तेज तलवार चलाती है। पतिव्रता नारी अपने पति को सद् मार्ग पर चलाती है और पूरे नियमों का पालन करके अपने व्यवहार को शुद्ध रखती है। स्वामी जी कहते हैं कि ऐसी पतिव्रता नारी, पति का प्रेम पाकर

सच्चे सुहाग का सुख भोगती है। उस पतिव्रता नारी की इस लोक में और परलोक में जय जय कार होती है।

भजन पूरा करने के बाद स्वामी जी को समझाकर कहने लगे कि पतिव्रता नारी के साथ साथ कुटुम्ब परिवार को स्वर्ग बनाने के लिये सभी के सहयोग की आवश्यकता है। पत्नी पति का सहयोग करें, सास बहु का सहयोग करे, पिता पुत्र का सहयोग करे और पुत्र पिता का सहयोग करे तो सब सुख हो जाये। गृहस्थ की गाड़ी त्याग से ही अच्छी तरह चल सकती है। हरेक अपना स्वार्थ छोड़ कर दूसरे के सुख का ध्यान रखेगा तो सब को सुख मिलेगा। इस बात को समझाने के लिये यह दृष्टान्त दिया:-

दृष्टान्त : एक बार देवताओं और असुरों की घमासान लड़ाई लगी। लड़ाई काफी लम्बे समय तक चली। परन्तु नतीजा कुछ भी नही निकला। देवता कहे कि हम बलवान हैं और असुर कहे कि हम बड़े हैं। अन्त में यह फैसला किया कि ब्रह्मा सृष्टि के रचियता के पास चल कर न्याय करवाएं। सभी मिलकर ब्रह्मा के पास आये और उन्हें विनती कर कहा कि हमारा फैसला कीजिये कि हम में से कौन बड़े हैं। ब्रह्मा सोच में पड़ गये। पैदा करने वाले पिता के लिये सभी समान होते हैं। सो उन्हें राय दी कि इसका फैसला जाकर शिव भगवान से करवाओ। ब्रह्मा जी के कहने पर दोनों पक्ष कैलाश पर्वत पर पहुँचे, जहां शिव भगवान तपस्या कर रहे थे। कुछ समय के बाद भगवान शिव तपस्या से उठे और देवताओं व असुरों से आने का कारण पूछा। जिस पर उन्होंने सम्पूर्ण बात बताई। यह बात सुनकर भोले नाथ बोले कि आप को यदि कोई वरदान चाहिये या आशीर्वाद लेना हो तो लो, बाकि झगड़ों के फैसले तो विष्णु भगवान ही कर सकते हैं। आप सीधे क्षीर सागर में उनकी सेवा में पहुँच जाओ। शिव भगवान की आज्ञानुसार सभी क्षीर सागर में पहुँच गये और विष्णु भगवान को अपना प्रयोजन बताया। विष्णु भगवान ने उनकी सारी बात शान्ति से सुनने के पश्चात कहा कि आप कोई ख्याल नहीं करे हम आपका फैसला अवश्य करेंगे। परन्तु सब से पहले आप लोग स्नान कर भोजन करो और अपनी थकान दूर करो फिर हम आपको सब कुछ बताते हैं।

आप धीरज रखो। यह सुन कर दोनों पक्ष बहुत खुश हुए और जाकर आनन्द से स्नान करने लगे। स्नान करने के पश्चात दोनो पक्षों को अलग अलग पंडाल में भोज के लिये आमंत्रित किया गया जहां छततीस प्रकार के श्रेष्ठ पकवानो की व्यवस्था की गई थी। बहुत थकान और लम्बे सफर के कारण सभी को बड़ी भूख लगी थी सो सभी भोजन की ओर भागने लगे। पंडाल के द्वार पर खड़े द्वारपाल ने उन्हें रोक कर कहा कि भोजन करने की एक शर्त है कि आप में से कोई भी हाथ से भोजन नही करेगा भोजन के लिए चम्मच रखे गये है सो आप सब चम्मच से ही भोजन करेंगे। भोजन के पास पहुँच कर देवताओं और असरों ने देखा कि भोजन के लिये एक एक गज़ के चम्मच पड़े थे। चम्मच में रबड़ी भर कर मुँह के पास लाने की कोशिश करे तो रबड़ी मुँह से दो फुट दूरी चली जाये। असुरों को बहुत भूख थी सो चम्मच भर भर कर हवा में फैंकने लगे और मुँह ऊपर की और फाड़ कर भोजन को पकड़ने का प्रयास करने लगे। ऐसा करते समय किसी के आंख में रबड़ी पड़ी तो किसी के नाक पर गुलाब जामुन पड़ा सारा भोजन जमीन पर फैल गया पर किसी का भी पेट नहीं भरा। आखिर सब थाल खाली कर निराश होकर बाहर खड़े हो गये।

इधर देवताओं ने जब देखा कि जब चम्मच अपने मुँह तक नही पहँुच रहे हैं तो क्यों न इन चम्मचों को दूसरे के मुँह तक पहँुचाया जाय। बस पल भर में जोड़िया बन गई और चम्मच मिठाई से भर भर के एक दूसरे के मुँह में डालने लगे। इस प्रकार एक दूसरे को खिलाकर सबने आनन्द से भर पेट भोजन किया और एक कण भी व्यर्थ नहीं गया। जब देवता भोजन कर पंडाल से बाहर आये तब दोनों पक्ष भगवान विष्णु के पास गये और हंस कर उन्हें कहा कि अब हमारा फैसला कीजिये। भगवान ने उन्हें हंस कर कहा फैसला तो हो चुका है। फैसला तो आप स्वयं कर चुके हैं। आप चलो तो आपको, आपके द्वारा किये गये फैसले को दिखाऊँ। विष्णु भगवान ने देवताओं और असुरों को भोजन के दोनो पंडाल दिखाये और कहा अब आप स्वयं समझ सकते है। असुरों को अपना गन्दा पंडाल देखकर शर्म आई और मारे शर्म के उनकी गर्दन ही झुक गई और देवता अपनी जीत पर फूले नहीं समाये।

स्वामी जी दृष्टान्त बताकर प्रेमियों को कहने लगे कि देवता एक दूसरे के सहयोग से सफल हुए हैं। परिवार में भी सभी को देवताओं की भांति एक दूसरे का सहयोग करना चाहिये। यदि हरेक अपने सुख के बजाय दूसरे के सुख का ध्यान रखेगा तो सब सुख मिलेगा, परन्तु यदि हरेक अपना स्वार्थ साधेगा तो खींचातान बढ़ेगी और सुख किसी को भी नहीं मिलेगा। दूसरे के सुख के लिये त्याग करने में आनन्द है। इसलिये परिवार और समाज में हमें एक दूसरे का सहयोग करना चाहिये। ऐसा करने से परिवार और समाज स्वर्ग बन जायेंगे जहां सब को सुख और आनन्द मिलेगा।

इस प्रकार कराची में प्रेमियों को सत्संग रूपी अमृत पिला कर कहा कि अब हम हैदराबाद वाले आश्रम पर जाकर देखभाल करेंगे। वहां उनके श्रद्धालु प्रेमी श्री गोधूमल भगत व उनके भ्राता श्री पोहूमल ने उन्हें विनती की कि जाने से पूर्व एक बार हमारी कुटिया पर चलकर अपने चरण घुमाकर उसे पवित्र कीजिये तथा वहां सत्संग रूपी अमृत की वर्षा करने की कृपा कीजिये। स्वामी जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार की और उनके घर पर आकर सत्संग किया और श्रद्धालू प्रेमियों को इस भजन द्वारा आशीर्वाद दिया।

भजन

सच्ची सिक वारनि खे सत्गुरू

अची दर्शन देखारे थो।

दया जो हथु रखी सिर ते,

सुमति देई सुधारे थो।

१. रखी विश्वास जे पूरण,

पवनि था पेशि सत्गुरू जे,

तिनी जे कष्ट करमनि खे,

सदा सत्गुरू निवारे थो।

२. सदा तन मन वचन धन सां,

छदे हठु सेवा कनि जे,

तिनि खे प्रेम जो प्यालो,

सदा सत्गुरू पियारे थी।

३. धरे नितु ध्यानु सतगुरू जो,

जपिनि जे नाम गोविन्द जो,

तिनी जो मनु करे निर्मल

सदा सत्गुरू उजारे थो।

४. कहे टेऊँ पंजई पकिड़े,

रहनि जे पाण में स्थित,

तिनी खे गुण सबूरीअ सां

सच्चो सत्गुरू सींगारे थो।

भावार्थ:- जिन प्रेमियों के दिल में सत्गुरू के लिये सच्चा स्नेह है उन्हें वे आकर दर्शन देते हैं। वे उनके सिर पर दया का हाथ रखकर, सुमति देकर उनका जीवन सुधार देते हैं। जो प्रेमी पूर्ण विश्वास रखकर सत्गुरू की शरण लेते हैं उनके कष्ट कर्मों को सत्गुरू सदा निवारण कर लेते हैं। जो प्रेमी घमण्ड छोड़कर सदा सत्गुरू की तन, मन और धन से सेवा करते है उनको सत्गुरू

महाराज प्रेम का प्याला भर के पिलाते है। जो प्रेमी सदा सत्गुरू का ध्यान कर परमात्मा के नाम का स्मरण करते हैं, उनका मन निर्मल कर सत्गुरू साफ कर देते है। सत्गुरू महाराज जी कहते है कि जो प्रेमी पांचों विकारों को वश में कर अपनी आत्मा में स्थित हो जाते है, उनको सत्गुरू संतोष और सब्र देकर उनका जीवन सजा देते हैं।

भजन पूरा कर प्रेमियों को कहा कि कराची के प्रेमियों ने हमारी खूब सेवा की है। जो प्रेम सन्तों की सेवा करते हैं व उनके सामने झ ़कते हैं, उनके कोटि कोटि जन्मों के कर्म कट जाते हैं, उल्टे कर्म भी सुलट हो जाते हैं। जिस प्रकार आफीसर जब सील कागज पर लगाता है तब उस सील पर लिखे उल्टे अक्षर कागज पर सीधे हो जाते है। इसी तरह सन्त व सत्गुरू के आगे झुकने से कर्मों की रेखा के अंग पलट जाते हैं। इस बात को समझाने के लिये रजब डाकू का उदाहरण दिया:-

दृष्टान्त:- रजब एक खतरनाक डाकू था। उसके नाम से भी लोग कांपते थे। उसकी जिस समय शादी हो रही थी, उस समय उसके पिता उसे अपने गुरू के पास माथा टेकने के लिये ले गये। रजब ने जैसे ही गुरू के चरणों पर माथा टेका तो गुरू ने उसके सिर पर आशीर्वाद का ऐसा हाथ फेरा जो रजब की बुद्वि पलट गई। उसके अज्ञान का पर्दा हट गया, और अन्त: करण में अलौकिक प्रकाश आ गया। जैसे ही माथा गुरू के चरणों से ऊपर उठाया वैसे ही दंग रह गया। यह दुनियां, धन दौलत, उस मिथ्या भासने लगे। मुकट उतार कर अपने पिता के हाथ में देकर कहा कि यह मुकुट आप रखिये, अब रजब शादी नही करेगा। रजब अब डाकू नही परन्तु सन्त सेठी बन कर रहेगा। उसके अन्दर से आवाज निकली:-

'रजब गुरू प्रसाद ते मिट गया अंग ललाट का।'

रजब ने गुरू की सेवा में रहकर भगवान की ऐसी तो भक्ति की कि जन्म जन्म के कर्म कट गये। रजब डाकू में से साधु बन गया। जिस प्रकार सन्तों का आशीर्वाद में रत्नाकर डाकू, वाल्मीक ऋषि बन कर रामायण की रचना अमर हो गया। उसी प्रकार रजब डाकू ने भी सन्त

शिरोमणी बन कर भक्ति और श्रद्धा रूपी श्लोक लिख कर लोगों को प्रभू के मार्ग पर चलने का प्रकाश प्रदान किया।

करणी से मनुष्य अपने आप को बना लेता है। करणी करने से जन्म मरण के चक्र से मुक्ति मिलती है और आत्मा अमर हो जाती है। सत्संग समाप्त कर पल्लव डाला और प्रेमियों से विदा होकर अपनी हैदराबाद वाली दरबार पर आ गये।

वक्त बादशाह अपनी चाल से चलता रहा। वक्त गुजरते देर ही नहीं लगी। आश्रम पर नियम से सत्संग करते, रटन करते और नाम दान करते वर्ष भर पूर्ण होने लगा। अब स्वामी जी सत्संग महाराज जी की पहली वर्सी की तैयारी में लग गए। मेले में पर्चे छपवाकर सभी प्रेमियों को समय पर देश विदेश भिजवा दिये। हिन्द सिन्ध के सभी सन्त जनों को मेले की शोभा बढ़ाने के लिये निमंत्रण पत्र भेजे। मण्डलाचार्य स्वामी सर्वानन्द जी महाराज जी के पास स्वयं अमरापुर जाकर उन्हें मण्डली सहित पधारने के लिये निवदेन कर आये। प्रेमियों की एक सभा बुला कर मेले की व्यवस्था करने हेतु विभिन्न समितियां बना कर उन्हें कार्य बांट कर दे दिया। वर्सी को सफल बनाने के लिये सभी ने तन मन से सेवा की। कुछ ने गेहूँ की बोरियां भेजी कुछ ने चावल के कट्टे भेजे तो कुछ ने घी के डिब्बे भेजे। सत्गुरू महाराज जी की कृपा से भण्डारे भर गये। खूब भेटाएं आने लगी।

स्वामी जी के स्नेह भरे निमंत्रण पर कई सन्त मण्डलियां आ गई। सत्गुरू स्वामी सर्वानन्द जी महाराज जी ने मण्डली सहित पधार कर खूब मौज मचाई। इस वर्सी के मेले पर भक्त पहलाज राय ने स्वामी जी का खूब सहयोग किया।

वर्सी के मेले की शुरूआत प्रभात फेरी से कर सारे शहर में सत्गुरू महाराज जी की जय जयकार की गँूज मचा दी। सायं काल विधि विधान से रामायण का अखण्ड पाठ रखा गया।

पाठ का शुभारम्भ के समय स्वामी जी ने सत्गुरू महाराज जी की महिमा का एक भजन कहा:-

भजन (राग पीलू)

मुहिंजो सत्गुरू टेऊँराम,

सदा निष्काम हो औतारी

वञा सत्गुरू तां बलिहारी

१. आयो जन्म वठी जगु तारण लइ

ए जीवन जे त सुधारण लइ

वियो कर्म धर्म जी वाट दसे हिताकारी...

२. जंहि हिन्द जा हुया सैर कया,

दई ज्ञान दूर सभि गैर गाया,

वियो सत्संग जा दीबाण लगाए भारी...

३. जेको झंगल में मंगल बणाए क्यिो

ऐ मेला मण्डल मचाए वियो,

वियो प्रेम प्रकाशी पंथ कढ़ी गुणकारी....

४. जेको गुरूमुख चवे गमटार हुयो,

गुरू गौरख जियां औतार हुयो

देई नाम सन्दो जंहि दान संगत सभितारी....

भावार्थ:- इस भजन में सत्गुरू महाराज की महिमा गाते हुए स्वामी जी कहते है कि मेरे सत्गुरू महाराज श्री टेऊँराम जी सदा निष्काम थे वे औतारी पुरूष थे। वे जग को पार उतारने

के लिये तथा लोगों का जीवन सुधारने के लिये जन्म लेकर आये और हम सब के कल्याण के लिये हमें कर्म धर्म की हितकारी राह दिखा गये। उन्होंने लोगों के कल्याण हेतु हिन्द सिन्ध के खूब सैर किये और ज्ञान देकर अज्ञान को दूर किया। वे सत्संग का अमर दीबाण जगा गये हैं। वे जंगल में मंगल कर गये व मेला लगा कर मौज मचा गये और हम सब के कल्याण हेतु प्रेम प्रकाश पंथ की स्थापना कर गये जो सब के लिये गुणकारी है। स्वामी जी कहते हैं कि मेरे सत्गुरू महाराज संकट मोचक थे, वे गुरू गोरखनाथ के समान औतार थे, वे सबको नाम दान देकर सारी संगत को उबार गये।

रामायण मण्डली वालों ने चौपायों का मधुर स्वर में पाठ कर प्रेमियों को झूमा दिया। दूसरे दिन रामायण के पाठ का धाम धूम से भोग डाला गया। राम ध्वनि से सारा वातावरण »ê´ज उठा। उस समय स्वामी जी ने प्रेमियों को रामायण की महिमा बताई।

स्वामी जी ने रामायण की बढ़ाई करते हुए कहा कि कलयुग में मुक्ति के लिये दूसरा कोई उपाय नही है। केवल दो उपाय है एक श्री राम जी का भजन और दूसरा रामायण का पाठ। रामायण पाठ सुनने और पाठ करने से पाप नाश हो जाते है। जिस घर में रामायण का पाठ होता है वह घर तीर्थ समान है जहां जाने से सब पाप नाश हो जाते है।

संसार सागर की थाह नहीं, उस सागर को पार करने के लिये रामायण रूपी नाव है जिसमें चढ़ कर यह मनुष्य भव सागर पार कर सकता है। सामायण स्वर्ग जाने के लिये सीढ़ी के समान है। यह सद्‌गुणों की खान है, इस का पाठ करने से मूर्ख भी ज्ञानी बन जाता है। रामायण कल्प वृक्ष की छाया के समान है। जो इस की शरण लेता है उस के सब दु:ख दूर हो जाते हैं। रामायण कामधेनु के समान है जो मन वांछित फल देने वाला और कल्याण करने वाला है।

रामायण रूपी कल्प वृक्ष के सात कांड उस के तने के समान है और दोहे सुन्दर शाखाओं के समान, सोरठे टइनियूँ के समान और चौपाइयां सुन्दर पत्तो के समान है। छंदो

की शोभ न्यारी है, वे मन भावन कोंपलों के समान है। अक्षर सुन्दर फूलो के समान व कविता के गुण उसकी सुगन्धि के समान है। भक्ति, ज्ञान, वैराग्य उसके स्वाद रस के बराबर है, निगुर्ण और सगुण रूप उसके बीज है। रामायण का महातम समझा कर श्री राम का एक भजन सुनाया।

भजन राम पहाड़ी

सभि सिक सां राम संभारियों,

ही मानुष जन्म सुधारियो।

१. मिठे राम जी बाणी, जा भगतनि जे मन भाई,

पति पत्नि राम पुकारियो....

२. जिनि राम जी लंव लाती, तिनि पूर्ण पदिवी पाती

नितु राम जपे कुल तारियो....

३. गुर गम जो सुरमूँ पाए, छदियो अविद्या तन तां लाहे

घट घट में राम निहारियो....

४. कर जोड़ टेऊँ बोले, उपदेश बधो कन खोले,

श्री राम खे कीन विसारियो....

भावर्थ:- स्वामी जी इस भजन में कहते हैं कि सब स्नेह से राम का स्मरण करो और अपना यह मनुष्य जन्म सुधार लो। राम की यह मीठी वाणी भक्तों के मन को बहुत भांती है। सब पल पल राम पुकारो। जिस ने राम के साथ प्रीति लगाई उसने पूर्ण पद प्राप्त किया है। नित राम का नाम जप कर अपना कुल उबार लो। आंखों में गुरू ज्ञान का चश्मा लगा कर अपने

अन्दर से अज्ञान को हटा कर, घट घट में राम के दर्शन करो। सत्गुरू महाराज जी कहते हैं कि कान खोल कर यह उपदेश सुनो, श्री राम को नहीं भुलाओ।

तीसरे दिन गीता का पाठ रखा गया। हवन करवाया गया। हवन की सुगन्ध और पवित्रता से सारा वातावरण शुद्ध हो गया। बाहर से आये हुए सन्तों का सत्संग करवाया गया।

चौथे दिन सायंकाल सारे शहर में सत्गुरू महाराज जी की शोभा यात्रा निकाली गई। जिससे सत्गुरू महाराज जी की बड़ी मूर्ति के साथ साथ अनेक धार्मिक झांकियां भी निकाली गयी। सारा समय प्रेमी भजन कीर्तन करते चले और नौजवानों ने उत्साह से डान्डिया नाच किया, सो खूब मौच मच गई।

पांचवे दिन गुरू ग्रंथ साहब का अखण्ड पाठ रखा गया और भजन कीर्तन नियम से चलता रहा।

छठे दिन सुबह शाम भजन कीर्तन के साथ साथ बाहर से आये हुए सन्त महात्माओं के प्रवचन चलते रहे। उनके अमृत वचन से प्रेमी आनन्द लेते रहे।

सातवे दिन प्रात:काल हवन किया गया। उसके बाद ध्वजा वन्दन का कार्यक्रम रखा गया जहां नया झण्डा चढ़ाया गया। उस समय श्रद्धालु प्रेमियों ने खूब नारियल व मिश्री चढ़ाई और सतगुरू महाराज की जय जयकार मनाई। श्रीमद् गीता व गुरू ग्रंथ साहब का भोग डाला गया, जिसके बाद भण्डारा किया गया। सायंकाल सत्गुरू महाराज जी की विधि विधान से बड़ी श्रद्धा से गुरू पूजा की गई सत्गुरू महाराज की मूर्ति को तिलक लगाकर श्रद्धालुओं ने खूब मालाएं चढ़ाई।

उस दिन सांय काल सत्संग की समाप्ति पर स्वामी जी ने सभी सन्तों विशेषकर मण्डलाचार्य स्वामी सर्वानन्द जी के प्रति बहुत आभार व्यक्त किया जो उन्होंने पधार कर उत्सव को सफल बनाया। सभी सन्तों के दुपट्टे डाले गये और श्रद्धा से भेंट दी गई। सभी

सेवाधारियों को उनके द्वारा की गई सेवा के लिये धन्यवाद दी। अन्त में महा मण्डलेश्वर स्वामी सर्वानन्द जी से पल्लव डलवाकर मेले की समाप्ति की घोषणा के लिये विनती की। सत्गुरू स्वामी सर्वानन्द महाराज जी ने आये हुए सभी प्रेमियों को आशीर्वाद देकर पल्लव डाला।

पल्लव

पल्लव जे पाईन सत्गुरू तुहिजे दर ते

सत्गुरू दर वारनि जा अर्ज ओनाई

मिड़ई तिनजे तन मन जा दुखड़ा मिटाई,

आंशू अघाई आंशू आशा वन्दनि जूँ।

जो जन आ सत्संग में बैठ कर अरदास,

कह टेऊँ तिस दास की पूरन करिये आस

दुख सर्व ही दूर हो लगे न यम की त्रास

कार्ज होवन रास संशय कोई ना रहे

सत्संग मुझ को दीजिये, प्रेम भक्त विश्वास

कहे टेऊँ सुमति दे सन्तन मांहि निवास।

पल्लव डालकर छींटा लगा कर मेले की समाप्ति की घोषणा की गई। अब सुविधानुसार सब सन्त व प्रेमी आज्ञा लेकर अपने स्थान पर लौट गये। स्वामी जी फिर से नियमानुसार आश्रम पर भजन, कीर्तन व सत्संग करते रहे। प्रेमियों को खूब नाम दान देकर ज्ञान का प्रकाश प्रदान करते रहे।

दिनों दिन प्रेमियों की श्रद्धा और स्नेह बढ़ता चला गया। आश्रम में स्वामी जी की शरण में आकर सभी की आशाऐं पूर्ण होती रही। आश्रम जैसे एक पवित्र तीर्थ स्थल बन गया जहां जिज्ञासुओं को अपार मन की शान्ति मिलती थी। आश्रम में श्रद्धालुओं की बढ़ती हुई संख्या को देखकर स्वामी जी के एक श्रद्धालु भक्त श्री टोपणदास उसकी धर्मात्मा धर्म पत्नी श्रीमती तोती बाई ने बड़ी उदारता से अपने दो कमरे खाली कर उनकी चाबियां स्वामी जी को अर्पित की। उस वक्त सत्गुरू महाराज जी का अनन्य श्रद्धालू शिष्य श्री शौकत राय वासवाणी जी कोटड़ी में नौकरी करते थे, रिटायर होकर उनकी सेवा में आ गये। स्वामी जी की विनती कर कहा कि अपनी शरण में लीजिये, और कौन से द्वारा पर जाऊं, इस दर से सब कुछ पाया है और आगे भी इस दर की सेवा करना चाहता हूँ । इसलिये ये दो कमरे मुझे देने की कृपा करें ताकि जीवन भर बाल बच्चों सहित आप की सेवा करता रहूँ । स्वामी जी उदार चित्त थे सो एक दम चाबी निकाल कर उसे दे दी कि बाल बच्चों सहित जाकर आराम से रहो। बाबू श्री शौकतराय ने भी खूब निभाया। उन्होंने न केवल कहा परन्तु करके दिखाया। कभी कोई साधु सन्त आया हो कि उसके लिये भोजन तुरन्त तैयार होकर आ जाता था। इस प्रकार सारा परिवार आठों पहर स्वामी जी के सेवा में लगा रहता था। न केवल इतना परन्तु हिन्दुस्तान में आने के पश्चात भी सारा परिवार स्वामी जी की एवं आश्रम की श्रद्धा से सेवा करते रहे है।

वक्त गुजरता गया, उसके साथ आश्रम में प्रेमियों की संख्या भी बढ़ती गई। स्वामी जी अपने सत्गुरू महाराज जी के यश बढ़ाने में लगे हुए थे। परन्तु अचानक सन् 1947 का वर्ष सिन्धियों के लिये गहरा काला बादल अपने साथ लाया। विभाजन की तेज तलवार देश पर गिरी। सिन्ध पाकिस्तान से मिला था गई सिन्धियों के सामने बड़ी समस्या खड़ी हो गई। एक तरफ घर बार, जमीन-जायदाद तो दूसरी तरफ धर्म की रक्षा थी।

सब प्रेमी स्वामी जी की शरण में आये कि इस मुसीबत के समय उन्हें रोशनी दिखाएं। स्वामी जी ने सब को बुलाकर तसल्ली दी और इस भजन द्वारा ज्ञान प्रदान किया।

भजन (राग पीलू)

मूंखे करण धर्म प्यारो आ,

मूंखे करण धर्म प्यारी आ।

१. धर्म जे खतिर सिर भी कुहायां,

माल मदी धन धाम उदाया

मूंखे सहणो सभि सहारो आ,

मूंखे करण धर्म प्यारो आ।

२. देहि अनातम माँ भी नाहियां,

शुद्व स्वरूप मां चेतन आहियां,

मुहिजो आत्म रूप नियारो आ

मूंखे करण धर्म प्यारो आ

३. जमी भरी हीउ शरीर सरे थो,

आत्म रूप न जमे मरे थो,

मूखे वसाहणु सिर ते कटारो आ,

मूंखे करणु धर्म प्यारो आ

४. माधव धर्म मया बलि जानी,

जान माल जी करियाँ कुर्बानी,

मुहिंजे प्राण सन्दो त आधार आ,

मूंखे करण धर्म प्यारो आ

भावार्थ:- स्वामी जी ने प्रेमियों को धर्म रक्षा के लिए प्रेरित करते हुए भजन में कहा है कि मुझे धर्म प्यारा है उसके खातिर सब कुछ कुर्बान करना पड़े तो भी नही हिचकूंगा। धर्म के खातिर धन दौलत जमीन जायदाद व घर बार सब कुछ कुर्बान कर देंगे। और सब कुछ सहन करना है। कहते हैं कि मैं यह देह अनातम नहीं हूँ परन्तु मैं तो शुद्ध चेतन आत्म स्वरूप हूँ । इसलिये मेरा आत्म रूप बिल्कुल नियारा है। जन्म भी यह शरीर लेता है और मरकर भी यही शरीर जलता है। परन्तु आत्म रूप न जन्म लेता है और न ही मरता है। इस लिये मुझे धर्म के खातिर कुछ सिर पर सहन करना है। स्वामी जी कहते हैं कि मैं धर्म पर बलिहारी जाऊँ। इस पर जान और माल कुर्बान कर दँू यह धर्म मेरे प्राण का आधार है।

भजन सुना कर सभी प्रेमियों को तसल्ली देते हुए कहा कि यह हमारे परीक्षा की घड़ी है। एक तरफ दुनियां है दूसरी तरफ धर्म है। धर्म की सदा जय होगी। धर्म के खातिर सब दु:ख दर्द सहन करेंगे परन्तु धर्म पर आंच नही आने देगे। जो धर्म पर कायम है। आखिर उस की जीत है। उस समय भक्त नामदेव का दृष्टान्त प्रेमियों को बताया। भक्त नामदेव ने धर्म के खातिर कष्ट सहे परन्तु ईश्वर में अटूट विश्वास होने के कारण आखिर उस की जय जयकार हुई।

दृष्टान्त:- भक्त नामदेव छीपा जाति के थे। वे महारज्ञष्ट्र के पण्डरपुर गाँव में रहते थे। उनके पिता का नाम दामाशेट और माता का नाम गुणा बाई था। उनके पिता बिठल भगवान के भक्त थे। यह बालक भी अपने पिता के साथ मन्दिर में भगवान की पूजा करता था। जैसे जैसे बड़ा होता गया वैसे वैसे भगवान की भक्ति भी बढ़ती चली गई।

भगवान अपने भक्तों की परीक्षा लेने के लिए उन्हें दुख दर्द भी खूब देता है। सो एक रात कुछ ईर्ष्यालुओ ने उनकी झौपड़ी जला दी। बेचारा बाल बच्चों को लेकर पेड़ के नीचे

सोया। सुबह आँख खोलकर देखा तो झोपड़ी की जगह महल खड़ा था। यह देखकर उनके शत्रुओं को और अधिक जलन हुई।

जब उनके दुश्मन खुद पहुँच नहीं पाये तो जाकर राजा के कान भरने लगे कि भक्त नामदेव कट्टर हिन्दू है लोगों को भड़काकर दंगे करवाता है। राजा कट्टर मुसलमान था, सो यह सुनकर गुस्से में आ गया। सिपाहियों को हुक्म दिया कि जाकर भक्त नामदेव को दरबार ले आओ। जब भक्त नामदेव दरबार में आया तो उसे एक मरी हुई गाय दिखा कर कहा कि यदि तुम भगवान के सच्चे भक्त हो तो यह मरी हुई गाय जिन्दा कर दिखाओ। तब भक्त नामदेव ने कहा कि भाई! मारना और जीवित करना तो मालिक के हाथ है। मैं उनके रहस्य में कैसे हाथ डाल सकता हूँ । इस पर राजा ने कहा कि यदि तुम गाय जीवित नहीं कर सकते हो तो फिर इस्लाम कबूल करो, परन्तु भक्त ने कहा कि मुझे अपना धर्म प्रिय है। मैं अपने धर्म पर अटल हूँ । तब फिर राजा ने कहा कि यदि तुम्हें ये दोनों शर्तें कबूल नही है तो फिर तुम मरने के लिये तैयार हो जाओ। यह सुनकर भक्त नामदेव की मां थर थर कांपने लगी। मोह वश अपने बेटे को समझाने लगे कि बेटे! तुम ज़िद मत करो। मैं तुम्हारी मौत अपनी आंखों से देख नहीं सकती। तुम इस्लाम कबूल कर लो ताकि मैं तुम्हें जिन्दा देख तो सकूंगी। परन्तु भक्त ने कहा मुझे अपनी जान से भी धर्म ज्यादा प्यारा है। मैं धर्म पर अटल हूँ । राजा ने एक मस्त हाथी उसे मारने के लिये मंगवाया, परन्तु हाथी उसे मारने के बजाय सलाम कर पीछे हट गया। यह देख कर राजा ने उसे जेल में डाल दिया। वहां उसने भगवान की प्रार्थना की। भगवान भक्तों के बस में होता है सो उसे दर्शन देकर तसल्ली देते हुए, मरी हुई गाय के ऊपर हाथ रखा तो मरी हुई गाय उठकर खड़ी हो गई। वहां राजा जब दरबार से उठ कर महल में पहुँचा तो उसे पेट में बहुत दर्द पड़ा। मंत्री ने राजा को राय दी कि भक्त नामदेव को यदि बुलाया जाये तो सब कुछ ठीक हो जाये। राजा के हुक्म पर भक्त नामदेव को जेल से निकाल

कर महल में ले आये। महल में आते ही राजा का पेट दर्द ठीक हो गया। तब राजा ने समझा कि भक्त नामदेव एक पहुँचा हुआ संत है सो इज्ज़त मान से उसे आज़ाद कर दिया।

इस प्रकार भक्त नामदेव का दृष्टान्त बता कर प्रेमियों को कहा कि भाई! हमको सब से ज्यादा अपना धर्म प्यारा है। धर्म की रक्षा करते हुए जो भी कष्ट आयेंगे सब सहन करेंगे। यह महल चौबारे नश्वर है धर्म सदा अमर अजर है। हम अपने भगवान राम से श्री कृष्ण भगवान से नाता कैसे तोड़ेगे। प्रेमियों को हिम्मत दिलाने के लिये यह भजन कहा।

भजन

मुहिंजे प्रेम जो नातो प्रभू,

शल अन्त तांई निबहे।

१. कोई कष्ट अचनि त कशाला,

तिखियूँ तरारू ए भाला।

सभि सही सूर जंजाला,

शल अन्त तांई निबहे।

२. चाहे लोक धिकारिन जग में,

कनि दु:खी प्रभूअ जे दग में।

सभि सहिी मुहबत जे मग में,

शल अन्त ताईं निबहे।

३. ही पेरू प्रेम जो पाए,

सच्चो नातो नीहुं निभाए।

हलां अगिते पेर वधाए,

शल अन्त ताईं निबहे।

४. हीअ मंजिल माधव भारी,

कई कष्ट अचनि त करारी।

सही सखतियूँ सूर मुरारी,

शल अन्त ताईं निबहे।

भावार्थ:- स्वामी जी प्रेमियों को इस भजन द्वारा प्रेरित करते हुए कहते है कि हे प्रभू! आपके साथ जो मेरा प्रेम का नाता है वह अन्त समय तक निभ जाये। इस राह में भली विपदाएं व कपट आवे। सिर पर तीखी तलवारें व भाले आवें। परन्तु इन सभी कष्टों को झेल कर मैं अन्त तक प्रेम का नाता निभाऊँ। चाहे लोग मुझे धिक्कारे और परमात्मा की राह में दु:खी करें परन्तु मैं मोहब्बत की राह में वे सब सह कर अन्त तक आप से नाता निभाऊँ। प्रेम की राह पर कदम रखकर, प्रेम का सच्चा नाता निभाकर, इस राह पर आगे बढ़ता जाऊँ और अन्त तक निभाऊँ। स्वामी जी कहते है कि यह मंजिल बहुत भारी है। इस राह में बहुत कष्ट आयेंगे परन्तु मुरारी! ये सब कष्ट झेल कर भी मैं अन्त तक इस नाते को निभाऊँ।

भजन पूरा कर प्रेमियों से कहा कि अब हमारी परीक्षा की घड़ी आ गई है। सब कुछ कुर्बान कर भी धर्म की रक्षा करनी है, अब हम ये महल चौबारे, मन्दिर और दरबारें अपना प्यारा सिन्ध देश प्रभू का सहारा लेकर छोड़ते है। प्रेमियों को तसल्ली देते हुए कहा कि आप किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करो और दिल छोटा मत करो। इस संकट के समय प्रभू आकर हमारी रक्षा करेंगे। गीता में श्री कृष्ण भगवान ने कहा है।

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।

अभ्युत्थान मधर्मस्य मदात्मानं सृजाभ्यहम्॥

जब जब पृथ्वी पर धर्म और सत्य घट जाता है और अधर्म बढ़ जाता है तब तब मैं अवतार लेता हूँ । और अधर्म, असत्य को नष्ट कर सत्य और धर्म स्थापित करता हूँ ।

दसवीं शताब्दी में जब मरक बादशाह ने हिन्दुओं पर जुल्म कर उन्हें धर्म परिवर्तन के लिये विवश किया तब वे लाचार होकर दूलहशाह दरयाह पर फरयादी होकर आये और वरूण देव की विनती की कि इस कष्ट की घड़ी में आकर सहाय हो और धर्म की रक्षा करें। प्रेमियों की सच्ची पुकार सुनकर वरूण देवता ने उन्हें तसल्ली देते हुए कहा कि आप किसी प्रकार की चिन्ता न करें। आपके कष्ट शीघ्र दूर होंगे। फिर भगवान ने झूले लाल साहब का अवतार लेकर मर्क बादशाह को सबक सिखाया और धम्र की रक्षा की। आज हम भी देश छोड़ने से पहले उसके द्वारा पर चलकर पल्लव डालें।

इतना कह कर सभी प्रेमियों को अपने साथ लेकर फुलेली पर आये। और हाथ जोड़कर श्रद्धा से प्रभू को प्रार्थना कर भजन गाने लगे।

भजन

सचनि जो दूलह दरयाह शाह

आहे राजा रांवल राउ,

जंहिर पीर ज़मीन ते,

सो मालिक बे परवाह।

१. पार ब्रह्म मां जल थियो पैदा,

तहिं मां थी धरती

धरतीअ मां थिया गुल फुल मेवा

बाग बणियां बस्ती,

बाग घुमीं गुलज़ार दिठोसी,

अजब चढ़ी मस्ती

चोरासी लख जूणियुनि खे सो,

सांवल दिए थो साहु।

२. दरियाद शाह जे दर जा आहिनि,

चार वरण पूजारी

देवी देवता कानि था सेवा,

श्रद्धा सां सद वारे,

दुनियां जे सभि देशनि जा,

था पूजिनि नर ऐ नारी,

बारे जोतियूँ गुल फुल चाढ़ीन,

चित्त में धारे चाह।

३. सर्वे हजारे अची सवाली,

सभि जा कारज करे,

पल्लव प्रेम सां पाईन जेके,

तिनि जी झोल भरे,

आश वंन्दनि जी आश पुजाए,

दुखिड़ा दर्द हरे,

बुदन्डउ जा थो बेडा तारे,

हीणनि जा हमराह।

४. निर्मल नाम तिनी जो जेके,

चाहु रखी चवन्दा,

दूलह जी कृपा सां सेई,

पार वञी पवन्दा।

कहे टेऊं सो कामिल आहिनि,

बे वाहनि जो वाह।

भावार्थ:- इस भजन में वरूण देवता की स्मृति की गई है। कहते हैं, सच्चो का दूलह दरियाह शाह, राजा रांवल इस पृथ्वी पर ज़ाहिर पीर और मालिक बेपरवाह सहारा है। पार ब्रह्म में से जल पैदा हुआ, उस जल से पृथ्वी उत्पन्न हुई, पृथ्वी में से बाग बगीचे फल फूल और मेवे बने। जब बाग बगीचे को धूम कर देखा तो मस्ती चढ़ गई। इस संसार में जो चौरासी लाख जून के जीव है उन सब में वही प्राण डालता है। इस दरियाह शाह के चारों वर्ण पुजारी है। उन की आज्ञा मानकर सभी देवी देवता उस की सेवा करते है। दुनिया के सभी देशों के नर नारी जोति जला कर फल फूल कर बड़े चाव से आप की पूजा करते हैं।

जो सैकड़ों हजारो सवाली आपके द्वार पर आते हैं आप उन सब के कारज पूर्ण करते हैं। जो प्रेमी आपके द्वार पर पल्लव पाते है आप उनको झोली भर देते हो। आप उन की मुरादें पूरी करते है, जो आस लेकर आते है तथा उनके कष्ट हर लेते है। आप डूबने वालों की नौका तैरा कर कमजोरों की सहायता करते है। जो कोई चाव से आप निर्मल नाम को जपेंगे और जय झूलेलाल धुनी लगाऐंगे वे सब दूलह की कृपा से पार हो जायेंगे। सत्गुरू महाराज जी कहते है कि वे बेसहारों के सहारे मालिक बड़े काभुल है।

उसके बाद सब ने मिलकर दूलद शाह दरियाह के द्वारा पर श्रद्धा से पल्लव डालकर प्रार्थना की:-

१. आश वन्दी गुरू तो दर आई,

तो बिन वाह न काई,

तूँ हर दाता तूँ हर माता,

मेरी आस पुजाई।

पाई पल्लव मैं पैरे प्यादी,

आयसि हैत मंझाई,

तन मन धन अरदास करे,

मैं मंगत नाम स्नेही,

नाम तुम्हारा साबुन करसा,

धोइसा पाप सभेई,

कहे टेऊँ गुरू लोक टिन्हीं में,

आवा गमन मिटाई।

२. पल्लव जे पाईन सत्गुरू तुहिंजे दर से,

दाता दर आयनि जा अजर् ओनाईं

मिड़ेई तिनि जे तन मन जा दुखिड़ा मिटाई,

आंशू अघाईं आंशू आश वन्दनि जूँ।

३. जो जन आ गुरू शन में बैठ करे अरदास

कहें टेऊं तिस दास की पूरन करिये आस

दुख सरोई दूर हो लगे न यम की जास

कारिज होवन रास संसइय कोई ना रहे।

४. से पूज़ारा पुर थियो समुन्द्र सेवियो जिनि

आन्दाऊ अमीक मां जोती जवाहरनि

लधाऊँ लतीफ चवे लालनि मां लहरूनि

कान्हे कीमत तिनि मुल्हू महांगो उन जो।

५. शेवा करि समन्ड जी जिते जर वहे थो जार

सर्वे निपिजनि तंहिं में हीरा मोती लाल

जे मासो जुड़ेई माल त पूज़ारा पुर थी।

६. शान्ता कारम् भुंजग सैनम, पदर्म नाभिम सर्वेशिवं

मेख वर्णम् सभा अंगम् लक्ष्मी कान्त कमल नैनं

योग विद्या न गमय, वन्दे विष्णु भव भइ हरणं सर्व लोक एक नाथ।

पल्लव डालने के पश्चात धर्म की जय जयकार मनाई।

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो

प्राणियों में सद्भावना हो विश्व का कल्याण हो।

हर हर महादेव साधो बोलो शिव

धर्म की जय जयकार मनाने के पश्चात श्लोक से कार्यक्रम की समाप्ति कर सभी को हिन्दुस्तान चलने की आज्ञा दी।

ॐ पूर्ण मदः पूर्ण मदं

पूर्णस्य पूर्ण मद चेती

पूर्णस्य पूर्ण मादाय

पूर्ण मेवा विशेष्टी

ॐ शान्ति ॐ शान्ति ॐ शान्ति

उसके बाद आरती की।

आरती जगदीश हरे

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे।

भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे॥

जो ध्यावे फल पावे दुख: बिनशे मन का।

सुख सम्पत्ति घर आवे कष्ट मिटे तनका॥

माता पिता तुम मेरे शरण गहूँ मैं जिसकी।

तुम तबन और न दूजा आस करूं किसकी॥

तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तरयामी।

पारब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी॥

तुम करूणा के सागर तुम पालन कर्ता।

मै मूर्ख खल कामी कृपा करो भर्ता॥

तुम हो एक अगोचर सब के प्राण पति।

किस विधि मिलूं गोसांई तुमको मैं कुमति॥

दीन बन्धु दु:ख हर्ता ठाकुर तुम मेरे।

अपने हाथ उठाओं द्वारा पड़ा तेरे॥

विषय विकार मिटाओ पाप हरी देवा

श्रद्धा भक्ति बढ़ावो सन्तन की सेवा॥

ओं जय जगदीश हरे स्वामी जय जगदीश हरे।

भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे॥

ओम श्री सत्नाम साक्षी

आरती

सत्गुरू स्वामी टेऊंराम जी की

जय गुरू टेऊंराम स्वामी, जय गुरू टेऊंराम

पर उपकारी जगत उद्धारी, तुम हो पूरण काम

जब जब प्रेमियुनि निज हित कारण तमको पुकारा

तब तब गुरू अवतारा धरे तुम, सब को निस्तारा

प्रेम प्रकाशी मण्डालाचार्य, मन्त्र साखी सतनाम

धर्म सनातन के प्रचारक, नोति निपुण अभिराम

देश विदेश में मण्डली लेकर, पावन दे उपदेश

आत्म रूप लखायो सबको, हरिया ताप कलेश

पूरण अचल समाधी तेरी, सुध आसन बिराजे

रूप मनोहर सुन्दर लोचन, देखत मन गाजे

आत्म स्थत वचन के पूरे, योगी इन्द्रीय जती

परम उद्धारी धीरज धारी, परम अगध मती

धन धन मात पिता कुल तेरा, धन तव साध सुजान

धन सो देस जहां तुम जनमिया, धन तंब शुभ स्थान

सुर नर मुनि जन हरि जन मुनि जन, गावन गुन तुमरे

अन्त न पाय सके नर कोई महिमा अपर परी

जो जन तेरी आरती गावे, पावे सो मुक्ती

साध संगत को हरदम दीजे, पूरण गुर भक्ति

' 'आरती' '

''स्वामी माधव दास महाराज जी''

ओम जय स्वामी माधव दास,

श्री जय स्वामी माधव दास,

महन्त मिठो मनठार हुएं तूँ।

सभजी पुजायई आश...ओम।

१. जन्म वठी बचपन खां तो हुई,

भक्ति कई निष्काम,

ब्रह्म ज्ञानी हो सतिगुरू तुहिजो,

स्वामी टेऊँराम.... ओम।

२. त्यागी वैरागी ऐ जोगी जती हुएं

पूरन तूँ विद्‌वान,

राग में तुहिंजे राज भरियल हो,

दिल में तुहिजे भगवान.... ओम।

३. रग रग में तुहिंजे प्यार समायल

सब खे मस्त कयो,

मुँह में तुहिंजे मणिया अहिड़ी,

सभ खे मोहे छदियों... ओम।

४. सबुर शुकर हो मुख में तुहिजे

अजब तुहिजी भक्ति,

राजी हरदमु रहें रज़ा ते

धनु तुहिजी जुगती ....ओम।

५. दिल खोले तो दान कयो हो,

दानियुनि में दानी,

खुश थी खारायो हो तो सभ खे

संत हुए सन्मानी...ओम।

६. ऋिद्धि सिद्धीअ जा मालिक

तुहिजों वचन हुओ वरदान,

सुवालियुनि जा तो सुवाल पुजाया,

निर्धन कया धनवान ....ओम।

७. जेको तुहिंजी आरती गाअे,

दिल में रखी विश्वास,

शीश झुकाअे संगति तो दरि

कार्ज कर तूँ रास.... ओम।

छन्द

सर्व सरूपम आदि अनुपम भूमि भूपम भय भाना

अन्त न ऊपम छाय न धुपम काढ़त कूपम धर ध्याना

रहस्य रामम दायक धामम नित निष्कामम निरबानी

पाद निमामन निश दिन शामम श्री टेऊंराम गुर ज्ञानी

छन्द

चावल चन्दन कुंगु केसर,

फूलन की वरखा वरखाओ

नरशिंघ गोमुख भेरी बाजा तबला,

सुरंदा झांझ बजाओ

भर भर दीपक पूर्ण घी से,

अगरबत्ती और धूप जलाओ

आरती साज करो बहु सुन्दर,

सत्गुरू की जयकार बुलाओ

छन्द

आश वन्दी गुरू तो दर आई तो बिन ठोर न कोई

तूं हर दाता तूं हर माता मेरी आस पुजाई

पाइ पलउ मैं पेरे प्यादी आयसि हेत मंझांई

तन मन धन अरदास करे मैं संगत नाम स्नेही

नाम तुम्हारा साबुण कर मैं धोसां पाप समई

कहे टेऊं गुरू लोक टिन्ही में आवागमन मिटाई

॥ समाप्त॥